अभिव्यक्ति और माध्यम

(जनसंचार माध्यम और लेखन, सृजनात्मक लेखन, व्यावहारिक लेखन)

कक्षा 11 और 12 के लिए हिंदी (आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम) की पाठ्यपुस्तक

11071

© NCERT not to be republished

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

11071 – अभिव्यक्ति और माध्यम
कक्षा 11 और 12 के लिए पाठ्यपुस्तक

ISBN 81-7450-604-7

प्रथम संस्करण
जुलाई 2006 श्रावण 1927

पुनर्मुद्रण
जनवरी 2010 माघ 1931
नवम्बर 2010 कार्तिक 1932
जनवरी 2011 माघ 1932
दिसंबर 2012 अग्रहायण 1934
अप्रैल 2013 चैत्र 1935
मार्च 2014 फाल्गुन 1935
दिसंबर 2014 पौष 1936
दिसंबर 2015 अग्रहायण 1937
दिसंबर 2017 अग्रहायण 1939
नवंबर 2018 कार्तिक 1940
जनवरी 2019 पौष 1940
सितंबर 2019 भाद्रपद 1941
जनवरी 2021 पौष 1942
जुलाई 2021 आषाढ़ 1943
नवंबर 2021 अग्रहायण 1943
फरवरी 2023 फाल्गुन 1944
मार्च 2024 चैत्र 1946

PD 30T SU

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2006

₹ 210.00

एन.सी.ई.आर.टी. वॉटरमार्क 80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110016 द्वारा प्रकाशित तथा श्री वृंदावन ग्राफ़िक्स प्रा. लि., ई-34, सैक्टर-7, नोएडा 201301 (उ.प्र.) द्वारा मुद्रित।

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन. सी. ई. आर. टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 फोन : 011-26562708

108, 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III स्टेज
बेंगलुरु 560 085 फोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781021 फोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग	: *अनूप कुमार राजपूत*
मुख्य संपादक	: *श्वेता उप्पल*
मुख्य उत्पादन अधिकारी	: *अरुण चितकारा*
मुख्य व्यापार प्रबंधक (प्रभारी)	: *अमिताभ कुमार*
सहायक संपादक	: *शशि चड्डा*
सहायक उत्पादन अधिकारी	: *ओम प्रकाश*

आवरण एवं सज्जा
श्वेता राव

चित्र
इरफ़ान

© NCERT not to be republished

आमुख

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) सुझाती है कि बच्चों के स्कूली जीवन को बाहर के जीवन से जोड़ा जाना चाहिए। यह सिद्धांत किताबी ज्ञान की उस विरासत के विपरीत है जिसके प्रभाववश हमारी व्यवस्था आज तक स्कूल और घर के बीच अंतराल बनाए हुए है। नयी राष्ट्रीय पाठ्यचर्या पर आधारित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें इस बुनियादी विचार पर अमल करने का प्रयास हैं। इस प्रयास में हर विषय को एक मज़बूत दीवार से घेर देने और जानकारी को रटा देने की प्रवृत्ति का विरोध शामिल है। आशा है कि ये कदम हमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में वर्णित बाल-केंद्रित व्यवस्था की दिशा में काफ़ी दूर तक ले जाएँगे।

इस प्रयत्न की सफलता अब इस बात पर निर्भर है कि स्कूलों के प्राचार्य और अध्यापक बच्चों को कल्पनाशील गतिविधियों और सवालों की मदद से सीखने और सीखने के दौरान अपने अनुभव पर विचार करने का अवसर देते हैं। हमें यह मानना होगा कि यदि जगह, समय और आज़ादी दी जाए तो बच्चे बड़ों द्वारा सौंपी गई सूचना-सामग्री से जुड़कर और जूझकर नए ज्ञान का सृजन करते हैं। शिक्षा के विविध साधनों व स्रोतों की अनदेखी किए जाने का प्रमुख कारण पाठ्यपुस्तक को परीक्षा का एकमात्र आधार बनाने की प्रवृत्ति है। सर्जना और पहल को विकसित करने के लिए ज़रूरी है कि हम बच्चों को सीखने की प्रक्रिया में पूरा भागीदार मानें और बनाएँ, उन्हें ज्ञान की निर्धारित खुराक का ग्राहक मानना छोड़ दें।

ये उद्देश्य स्कूल की दैनिक ज़िंदगी और कार्यशैली में काफ़ी फेरबदल की माँग करते हैं। दैनिक समय-सारणी में लचीलापन उतना ही ज़रूरी है जितनी वार्षिक कैलेंडर के अमल में चुस्ती, जिससे शिक्षण के लिए नियत दिनों की संख्या हकीकत बन सके। शिक्षण और मूल्यांकन की विधियाँ भी इस बात को तय करेंगी कि यह पाठ्यपुस्तक स्कूल में बच्चों के जीवन को मानसिक दबाव तथा बोरियत की जगह खुशी का अनुभव बनाने में कितनी प्रभावी सिद्ध होती है। बोझ की समस्या से निपटने के लिए पाठ्यक्रम निर्माताओं ने विभिन्न चरणों में ज्ञान का पुनर्निर्धारण करते समय बच्चों के मनोविज्ञान व अध्यापन के लिए उपलब्ध समय का ध्यान रखने की पहले से अधिक सचेत कोशिश की है। इस कोशिश को और गहराने के यत्न में यह पाठ्यपुस्तक सोच-विचार और विस्मय, छोटे समूहों में बातचीत व बहस और हाथ से की जाने वाली गतिविधियों को प्राथमिकता देती है।

एन.सी.ई.आर.टी. इस पुस्तक की रचना के लिए बनाई गई पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के परिश्रम के लिए कृतज्ञता व्यक्त करती है। परिषद् भाषा सलाहकार समिति के अध्यक्ष प्रोफ़ेसर नामवर सिंह और इस पुस्तक के मुख्य सलाहकार प्रोफ़ेसर पुरुषोत्तम अग्रवाल की विशेष आभारी है। इस पाठ्यपुस्तक के विकास में कई शिक्षकों ने योगदान दिया; इस योगदान को संभव बनाने के लिए हम उनके प्राचार्यों के आभारी हैं। हम उन सभी संस्थानों और संगठनों के प्रति कृतज्ञ हैं जिन्होंने अपने संसाधनों, सामग्री तथा सहयोगियों की मदद लेने में हमें उदारतापूर्वक सहयोग दिया। हम माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग, मानव संसाधन

विकास मंत्रालय द्वारा प्रोफ़ेसर मृणाल मीरी एवं प्रोफ़ेसर जी.पी. देशपांडे की अध्यक्षता में गठित (मॉनिटरिंग कमेटी) द्वारा नामित श्री अशोक वाजपेयी और प्रोफ़ेसर सत्यप्रकाश मिश्र को अपना मूल्यवान समय और सहयोग देने के लिए धन्यवाद देते हैं। व्यवस्थागत सुधारों और अपने प्रकाशनों में निरंतर निखार लाने के प्रति समर्पित एन.सी.ई.आर.टी टिप्पणियों व सुझावों का स्वागत करेगी जिनसे भावी संशोधनों में मदद ली जा सके।

नयी दिल्ली
20 दिसंबर 2005

निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

© NCERT
not to be republished

यह पुस्तक

विद्यार्थियों की सहज भाषा अभिव्यक्ति का ताकतवर ज़रिया बने। स्कूली जीवन से ही वे बाहर की विशाल दुनिया में झाँकें, जीवन-जगत के अनेक रूपों को समझे-बूझें, रंग-बिरंगे सपनों का ताना-बाना फैलाना सीखें, मुश्किलों को पहचानें और उसका सामना कर सकें यानी अपनी राह तलाशने में या बनाने में वे खुद सक्षम हो सकें। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) में इन बिंदुओं पर खासा बल है। इन्हीं को ध्यान में रखकर नए पाठ्यक्रम के तहत उच्चतर माध्यमिक स्तर पर हिंदी पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए एक ऐसी पुस्तक की परिकल्पना की गई, जो अभिव्यक्ति के अलग-अलग माध्यमों पर केंद्रित हो। *अभिव्यक्ति और माध्यम* नामक इस पुस्तक की तीन इकाइयाँ हैं– **जनसंचार माध्यम और लेखन, सृजनात्मक लेखन** और **व्यावहारिक लेखन**। ये तीनों ही माध्यम एक विशेष बिंदु पर एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं और व्यापक रूप से संचार के ही अलग-अलग रूप हैं। पत्रकारिता का साहित्य से, साहित्य का व्यवहार से और इन सबका संचार से क्या संबंध है? यह बताने की आवश्यकता नहीं।

पुस्तक की पहली इकाई के रूप में **जनसंचार माध्यम और लेखन** संबंधी सामग्री पाँच अध्यायों में दी गई है। अपने समय, समाज और देश के प्रति जागरूक बनाने में जनसंचार माध्यम सबसे सशक्त माध्यम के रूप में उभर कर सामने आया है। हाल के वर्षों में भारतीय मीडिया में क्रांति-सी आई है। समाचार माध्यमों का विस्तार हुआ है और जनता का इससे जुड़ाव बढ़ा है। मीडिया क्रांति ने जहाँ एक ओर पूरे विश्व से जुड़ने का अवसर दिया है वहीं दूसरी ओर बाज़ार के दबाव में आम आदमी, उसके सुख-दुख, उसकी चिंताएँ, उसके सरोकार, उसकी उम्मीदों को हाशिये पर रख दिया है। केंद्र में सेलिब्रिटीज़ हैं और बिकाऊ खबरें हैं। युवा होते विद्यार्थियों को यह जानना ही होगा कि केंद्र और हाशिये का संतुलन तय करने में उनकी कलम क्या भूमिका अदा कर सकती है? उन्हें यह समझना ही होगा कि एक खुशहाल देश के निर्माण और प्रगति में भाषा की क्या भूमिका होती है? इन सबसे अनजान आज के बच्चों को टेलीविज़न, रेडियो, अखबार, इंटरनेट और पत्रिकाएँ आकृष्ट तो करती हैं; जैसे, कहाँ से आती हैं खबरें, कैसे छपते हैं अखबार, कैसे जुड़े हैं आपस में पूरी दुनिया के तार? वगैरह। लेकिन इन सवालों के साथ-साथ उन्हें यह भी बताया जाना ज़रूरी है कि पूरी दुनिया के तार जोड़ने वाली मीडिया की जानदार दुनिया उनकी सक्रिय और सचेत पहल के बिना कितनी बेजान है। सही मायनों में संचार का यही अर्थ है। यह पुस्तक जनसंचार की दुनिया को जानने, समझने और बच्चों से उनका तार जोड़ने की दिशा में एक पहल कर सकती है।

कहा जाता है कि अच्छी पत्रकारिता अच्छा साहित्य है, उसी तरह से यह भी कहा जाता है कि अच्छा साहित्य अच्छी पत्रकारिता की भूमिका निभाता है। यानी दोनों का लक्ष्य एक है। इस पुस्तक की दूसरी इकाई में **सृजनात्मक लेखन** संबंधी आठ अध्याय शामिल हैं। साहित्य निर्जीव चीज़ों में भी स्पंदन भर देता है। यह स्पंदन भरना ही सृजनात्मकता है। इस प्रक्रिया से जुड़ना केवल नदी, पहाड़, फूल, तारे, बादल, खेत आदि को ही नहीं बल्कि खुद

को भी नए स्पंदन से भरना है। इसकी पहचान के सहारे बच्चे निश्चय ही एक सजीव दुनिया रचने में समर्थ हो सकते हैं। आज कला और साहित्य बच्चों के लिए अवास्तविक और अमूर्त कल्पना बनकर रह गया है। उन्हें यह जानकारी देना ज़रूरी है कि हर रचना की आधारभूमि भाव होता है जिसकी जड़ें यथार्थ से जुड़ी होती हैं। रचनात्मक प्रक्रिया से होकर गुज़रना उनकी अमूर्त कल्पना को यथार्थ और विश्वास से जोड़ने में समर्थ हो सकता है। यूँ तो लेखन से बच्चों का संपर्क और संबंध स्कूली दुनिया में प्रवेश के साथ ही हो जाता है। लेकिन सृजन क्या है? यह इन बच्चों को नहीं पता होता। मसलन कैसे बनती है कविता? उपन्यास, कहानी और नाटक आदि का लेखन कैसे होता है? सृजनात्मकता की बुनावट की पहचान जहाँ उनमें एक ओर रचनाशीलता के प्रति ललक पैदा कर उन्हें रचनाशील बनाती है, वहीं दूसरी ओर साहित्य और साहित्येतर लेखन को जानने-समझने में भी मददगार हो सकती है।

पत्रकारिता और साहित्य जहाँ एक ओर विद्यार्थी को ज़िम्मेदार नागरिक और रचनात्मक व्यक्तित्व दे सकने में सहायक होंगे, वहीं व्यावहारिक लेखन की जानकारी इस ज़िम्मेदारी के निर्वाह में मददगार होगी। साथ ही यह प्रयोजनमूलक हिंदी के विशाल फलक को जानने का ज़रिया बन सकती है। पुस्तक की तीसरी इकाई में **व्यावहारिक लेखन** संबंधी तीन अध्याय शामिल हैं। इसी के तहत शब्दकोश का परिचय भी रखा गया है। इसकी प्रस्तुति कहानी के ढाँचे में है। उद्देश्य यह है कि व्यवहार की हिंदी को बच्चे व्यवहार के माध्यम से ही जानें। विषय के प्रति उनकी अभिरुचि भी बनी रहे, साथ ही कार्यालयी प्रक्रिया से अनजान बच्चों के दिमाग में विभिन्न कार्यालयी स्थितियों की उचित तसवीर अंकित हो सके। यह इसलिए भी ज़रूरी है कि आज का व्यावहारिक लेखन अपने नाम से अलग एक औपचारिक लेखन मात्र बनकर रह गया है। कामकाजी जीवन के रोज़मर्रा की भाषा को मशीनी एकरसता से निकालकर उसकी धड़कन सुनने की ज़रूरत बड़े दिनों से महसूस की जा रही है। यह पुस्तक इस दिशा में एक प्रयास होगी।

जनसंचार संबंधी लेखन हो, सृजनात्मक लेखन हो या व्यावहारिक लेखन–तीनों ही इकाई के प्रश्न खुद कर के सीखने और जानने में सहायक होंगे। **गतिविधि** और **पाठ से संवाद** शीर्षक अभ्यास बच्चों को लेखन की दुनिया से जोड़ने की पहल कर सकने में मददगार होंगे। पुस्तक के परिशिष्ट में नए शब्दों और पारिभाषिक शब्दों के बारे में दिया गया है। साथ ही कुछ विषयों से जुड़े वेब साइट्स की सूचना दी गई है जो अतिरिक्त जानकारी में सहायक होंगी।

साज-सज्जा के लिए तसवीरों के साथ-साथ रेखांकन, स्वतंत्र कार्टून और कैरीकेचर की मदद ली गई है। व्यंग्य के सहारे कार्टून संजीदा बिंबात्मक अर्थ देने में समर्थ होते हैं। जनसंचार, सृजनात्मक लेखन और व्यावहारिक लेखन जैसे विषयों के साथ-साथ कार्टून चित्रों का प्रयोग विद्यार्थियों को अभिव्यक्ति का एक नया माध्यम भी दे सकता है।

पढ़ने-पढ़ाने की प्रक्रिया सतत चलती रहती है। इसमें हमेशा नए की संभावना बनी रहती है। पुस्तक को निरंतर नया कर सकने और कुछ सुझाव जोड़ने में आपसे संचार सहायक होगा।

© NCERT not to be republished

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

अध्यक्ष, भाषा सलाहकार समिति

नामवर सिंह, *पूर्व अध्यक्ष,* भारतीय भाषा केंद्र, जे.एन.यू., नयी दिल्ली

मुख्य सलाहकार

पुरुषोत्तम अग्रवाल, *पूर्व प्रोफ़ेसर,* भारतीय भाषा केंद्र, जे.एन.यू., नयी दिल्ली

मुख्य समन्वयक

रामजन्म शर्मा, *पूर्व प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष,* भाषा शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

सदस्य

अतुल सिन्हा, *पूर्व सलाहकार प्रोफ़ेसर*, जागरण इंस्टीट्यूट ऑफ़ मैनेजमेंट एंड मास कम्यूनिकेशन, नोएडा

अमिताभ श्रीवास्तव, *स्वतंत्र रंगकर्मी*, नयी दिल्ली

असगर वजाहत, *प्रोफ़ेसर*, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नयी दिल्ली

आनंद प्रधान, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर*, आई.आई.एम.सी., जे.एन.यू., नयी दिल्ली

गोविंद सिंह, *पूर्व संपादक*, अमर उजाला, नयी दिल्ली

देवेन्द्र राज अंकुर, *पूर्व निदेशक*, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नयी दिल्ली

धीरंजन मालवे, *विशेष कार्य अधिकारी*, प्रसार भारती, नयी दिल्ली

प्रियदर्शन, *समाचार संपादक*, एन.डी.टी.वी. इंडिया, नयी दिल्ली

मधुकर उपाध्याय, *पूर्व संपादक*, लोकमत, नागपुर

महेन्द्रपाल शर्मा, *प्रोफ़ेसर*, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नयी दिल्ली

संजीव कुमार, *वरिष्ठ प्रवक्ता*, देशबंधु कॉलेज, कालकाजी, नयी दिल्ली

सुभाष धूलिया, *प्रोफ़ेसर*, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली

हेमन्त जोशी, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर*, आई.आई.एम.सी., जे.एन.यू., नयी दिल्ली

सदस्य-समन्वयक

संध्या सिंह, *प्रोफ़ेसर*, भाषा शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

© NCERT not to be republished

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1][**संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य**] बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की **स्वतंत्रता,**

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**

प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन **सब में**

व्यक्ति की गरिमा और [2][**राष्ट्र की एकता और अखंडता**] सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''प्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''राष्ट्र की एकता'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।

© NCERT not to be republished

आभार

इस पुस्तक के निर्माण में अकादमिक सहयोग के लिए विशेष आमंत्रित ओम गुप्ता, *पत्रकार,* नयी दिल्ली, उषा शर्मा, *वरिष्ठ प्रवक्ता,* डाइट, मोती बाग, नयी दिल्ली; नीलकंठ कुमार, *अध्यापक,* प्रतिभा विकास विद्यालय, नयी दिल्ली; अनुराधा, *अध्यापिका,* सरदार पटेल विद्यालय, नयी दिल्ली; नूतन झा, *अध्यापिका,* मीरांबिका विद्यालय, नयी दिल्ली के हम आभारी हैं।

ईदगाह संबंधी रेखांकन के लिए अजय मोहंती, सामग्री संचयन के लिए नेहरू स्मारक पुस्कालय, नयी दिल्ली एवं नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के हम कृतज्ञ हैं।

इस पुस्तक के निर्माण में तकनीकी सहयोग के लिए कंप्यूटर स्टेशन (भाषा विभाग) के *प्रभारी,* परशराम कौशिक, *डी.टी.पी. ऑपरेटर* जय प्रकाश राय, सचिन कुमार तथा विजय कुमार; *कॉपी एडिटर* प्रमोद तिवारी, समीना उस्मानी, सुप्रिया गुप्ता, सतीश झा; *प्रूफ रीडर,* कमलेश कुमारी के प्रति हम आभारी हैं।

© NCERT not to be republished

भारत का संविधान

भाग 4क

नागरिकों के मूल कर्तव्य

अनुच्छेद 51 क

मूल कर्तव्य – भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह –

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे;

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे;

(ग) भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण बनाए रखे;

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे;

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभावों से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध हों;

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्त्व समझे और उसका परिरक्षण करे;

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणिमात्र के प्रति दयाभाव रखे;

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे;

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे;

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत् प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊँचाइयों को छू सके; और

(ट) यदि माता-पिता या संरक्षक है, छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु वाले अपने, यथास्थिति, बालक या प्रतिपाल्य को शिक्षा के अवसर प्रदान करे।

© NCERT not to be republished

विषय-क्रम

आमुख *iii*

यह पुस्तक *v*

इकाई एक **1–102**

जनसंचार माध्यम और लेखन

1. जनसंचार माध्यम 3
(कक्षा 11 के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए)

2. पत्रकारिता के विविध आयाम 28
(कक्षा 11 के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए)

3. विभिन्न माध्यमों के लिए लेखन 47
(कक्षा 12 के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए)

4. पत्रकारीय लेखन के विभिन्न रूप और लेखन प्रक्रिया 67
(कक्षा 12 के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए)

5. विशेष लेखन–स्वरूप और प्रकार 87
(कक्षा 12 के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए)

इकाई दो **103–162**

सृजनात्मक लेखन

6. कैसे बनती है कविता 105
(कक्षा 12 के ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए)

7. नाटक लिखने का व्याकरण 114
(कक्षा 12 के ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए)

8. कैसे लिखें कहानी 120
(कक्षा 12 के ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए)

9. डायरी लिखने की कला 128
(कक्षा 11 के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए)

10. कथा–पटकथा 134
(कक्षा 11 के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए)

© NCERT not to be republished

11. कैसे करें कहानी का नाट्य रूपांतरण 140
(*कक्षा 12 के आधार पाठ्यक्रम के लिए*)

12. कैसे बनता है रेडियो नाटक 147
(*कक्षा 12 के आधार पाठ्यक्रम के लिए*)

13. नए और अप्रत्याशित विषयों पर लेखन 155
(*कक्षा 12 के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए*)

इकाई तीन **163–202**

व्यावहारिक लेखन

14. कार्यालयी लेखन और प्रक्रिया 165
(*कक्षा 11 के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए*)

15. स्ववृत्त (बायोडेटा) लेखन और रोज़गार संबंधी आवेदन पत्र 182
(*कक्षा 11 के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए*)

16. कोश–एक परिचय 193
(*कक्षा 11 के आधार पाठ्यक्रम के लिए*)

परिशिष्ट–1 203

परिशिष्ट–2 205

परिशिष्ट–3 206

© NCERT not to be republished

इकाई एक

जनसंचार माध्यम और लेखन

not to be republished

जनसंचार माध्यम और लेखन

इकाई एक

© NCERT
not to be republished

1

जनसंचार माध्यम

इस पाठ में...

- **संचार**
  परिभाषा और महत्त्व
  संचार क्या है?
- **संचार के तत्त्व**
  स्रोत, एनकोडिंग, संदेश, माध्यम, प्राप्तकर्ता, फ़ीडबैक और शोर
- **संचार के प्रकार**
  सांकेतिक संचार
  मौखिक और अमौखिक संचार
  अंत:वैयक्तिक संचार
  अंतरवैयक्तिक संचार
  समूह संचार
  जनसंचार
- **जनसंचार की विशेषताएँ**
- **संचार के कार्य**
- **जनसंचार के कार्य**
  सूचना देना, शिक्षित करना, मनोरंजन करना
  एजेंडा तय करना
  निगरानी करना
  विचार–विमर्श के मंच
- **भारत में जनसंचार माध्यमों का विकास**
  समाचारपत्र–पत्रिकाएँ
  रेडियो
  टेलीविज़न
  सिनेमा
  इंटरनेट
- **जनसंचार माध्यमों का प्रभाव**

मीडिया जब तक जनता को साथ लेकर नहीं चलेगी, तब तक जनता भी उसका साथ नहीं देगी।

–प्रभाष जोशी
वरिष्ठ पत्रकार

एक नज़र में...

संचार के बिना जीवन संभव नहीं है। मानव सभ्यता के विकास में संचार की सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। संचार दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच सूचनाओं, विचारों और भावनाओं का आदान–प्रदान है। इस तरह संचार एक प्रक्रिया है जिसमें कई तत्त्व शामिल हैं। संचार के कई प्रकार हैं जिनमें मौखिक और अमौखिक संचार के अलावा अंत:वैयक्तिक, अंतरवैयक्तिक, समूह संचार और जनसंचार प्रमुख हैं।

जनसंचार कई मामलों में संचार के अन्य रूपों से अलग है। जनसंचार सूचना, शिक्षा और मनोरंजन के अलावा एजेंडा तय करने का काम भी करता है। भारत में जनसंचार के विभिन्न माध्यमों का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। जनसंचार माध्यमों का लोगों पर सकारात्मक के साथ–साथ नकारात्मक प्रभाव भी पड़ता है। इन नकारात्मक प्रभावों के प्रति लोगों का सचेत होना बहुत ज़रूरी है।

© NCERT not to be republished

संचार–परिभाषा और महत्त्व

ज़रा सोचिए, क्या आप बिना बात किए रह सकते हैं? शायद नहीं, अकेलेपन और सोने के समय को छोड़ दिया जाए तो हम-आप अधिकांश समय अपनी छोटी-छोटी ज़रूरतों को पूरा करने या अपनी भावनाओं और विचारों को प्रकट करने के लिए एक-दूसरे से या समूह में बातचीत या संचार करने में लगा देते हैं। यहाँ तक कि कई बार हम अकेले में खुद से बातें करने लगते हैं। सच तो यह है कि हम बिना बात किए रह ही नहीं सकते। यदि समाज में रहना है और उसके विभिन्न क्रियाकलापों में हिस्सा लेना है तो यह बिना बातचीत या संचार के संभव नहीं है। संचार यानी संदेशों का आदान-प्रदान।

ज़रा सोचिए कि क्या आप चुप रह सकते हैं? पहली बात तो यह है कि आप बहुत देर तक चुप नहीं रह सकते। लेकिन अगर आप चुप रहना भी चाहें तो क्या आप चुप रहते हुए भी कुछ कह नहीं रहे होते? जैसे अगर आप घर या स्कूल में चुप बैठे हों तो भी आप कुछ कह रहे होते हैं। हो सकता है आप नाराज़ हों या फिर उदास हों या फिर कुछ सोच रहे हों। आपका कोई दोस्त आपको चुप बैठा देख पूछ सकता है कि क्या आप किसी से नाराज़ हैं या किसी बात पर उदास हैं? इसका अर्थ यह हुआ कि जैसे आप कुछ कहकर संचार कर रहे होते हैं, उसी तरह कुछ न कहकर भी संचार कर रहे होते हैं।

हम चाहें या न चाहें, अपने दैनिक जीवन में हम संचार किए बिना नहीं रह सकते। वास्तव में संचार **जीवन की निशानी** है। मनुष्य जब तक जीवित है, वह संचार करता रहता है। यहाँ तक कि एक बच्चा भी संचार के बिना नहीं रह सकता। वह रोकर या चिल्लाकर अपनी माँ का ध्यान अपनी ओर खींचता है। एक तरह से संचार खत्म होने का अर्थ है–मृत्यु। वैसे तो प्रकृति में सभी जीव संचार करते हैं लेकिन मनुष्य की संचार करने की क्षमता और कौशल सबसे बेहतर है। अकसर यह कहा जाता है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उसे सामाजिक प्राणी के रूप में विकसित करने में उसकी संचार क्षमता की सबसे बड़ी भूमिका रही है।

परिवार और समाज में एक व्यक्ति के रूप में हम अन्य लोगों से संचार के ज़रिये ही संबंध स्थापित करते हैं और रोज़मर्रा की ज़रूरतें पूरी करते हैं। संचार ही हमें एक-दूसरे से जोड़ता है। गौर से देखिए तो सभ्यता के विकास की कहानी संचार और उसके साधनों के विकास की कहानी है। मनुष्य ने चाहे भाषा का विकास किया हो या लिपि का या फिर छपाई का, इसके पीछे मूल इच्छा संदेशों के आदान-प्रदान की ही थी। दरअसल, संदेशों के आदान-प्रदान में लगने वाले समय और दूरी को पाटने के लिए ही मनुष्य ने संचार के माध्यमों की खोज की।

आज हम जिस संचार क्रांति की बात करते हैं, आखिर वह क्या है? संचार और जनसंचार के विभिन्न माध्यमों–टेलीफ़ोन, इंटरनेट, फ़ैक्स, समाचारपत्र, रेडियो, टेलीविज़न और सिनेमा आदि के ज़रिये मनुष्य संदेशों के आदान-प्रदान में एक-दूसरे के बीच की दूरी और समय को लगातार कम से कम करने की कोशिश कर रहा है। यही कारण है कि आज संचार माध्यमों के विकास के साथ न सिर्फ़ भौगोलिक दूरियाँ कम हो रही हैं बल्कि सांस्कृतिक और मानसिक रूप से भी हम एक-दूसरे के करीब आ रहे हैं। शायद यही कारण है कि कुछ लोग मानते हैं कि आज दुनिया एक गाँव में बदल गई है।

दुनिया के किसी भी कोने में कोई घटना हो, जनसंचार माध्यमों के ज़रिये कुछ ही मिनटों में हमें खबर मिल जाती है। अगर वहाँ किसी टेलीविज़न समाचार चैनल का संवाददाता मौजूद हो तो हमें वहाँ की तसवीरें भी तुरंत देखने को मिल जाती हैं। याद कीजिए 11 सितंबर 2001 को अमेरिका में वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर आतंकवादी हमले को पूरी दुनिया ने अपनी आँखों के सामने घटते देखा। इसी तरह आज टेलीविज़न के परदे पर हम दुनियाभर के अलग-अलग क्षेत्रों में घट रही घटनाओं को सीधे प्रसारण के ज़रिये ठीक उसी समय देख सकते हैं। आप क्रिकेट मैच देखने स्टेडियम भले न जाएँ लेकिन आप घर बैठे उस मैच का **सीधा प्रसारण (लाइव)** देख सकते हैं।

वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर आतंकवादी हमला

सच पूछिए तो आज संचार और जनसंचार के माध्यम हमारी अनिवार्य आवश्यकता बन गए हैं। हमारे रोज़मर्रा के जीवन में उनकी बहुत अहम भूमिका हो गई है। उनके बिना हम आज आधुनिक जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते। वे हमारे लिए न सिर्फ़ सूचना के माध्यम हैं बल्कि वे हमें जागरूक बनाने और हमारा मनोरंजन करने में भी अग्रणी भूमिका निभा रहे हैं।

लेकिन हम जनसंचार माध्यमों की आकर्षक और रोचक दुनिया के बारे में और चर्चा करें, उससे पहले यह ज़रूरी है कि संचार और उसकी प्रक्रिया को बारीकी से समझा जाए, क्योंकि जनसंचार, संचार का ही एक रूप है।

संचार क्या है?

'संचार' शब्द की उत्पत्ति 'चर' धातु से हुई है, जिसका अर्थ है–चलना या एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचना। आपने विज्ञान में ताप संचार के बारे में पढ़ा होगा कि कैसे गरमी एक बिंदु से दूसरे बिंदु तक पहुँचती है। इसी तरह टेलीफ़ोन के तार या बेतार के ज़रिये मौखिक या लिखित संदेश को एक जगह से दूसरी जगह भेजने को भी संचार ही कहा जाता है। लेकिन हम यहाँ जिस संचार की बात कर रहे हैं, उससे हमारा तात्पर्य दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच सूचनाओं, विचारों और भावनाओं का आदान-प्रदान है। मशहूर संचारशास्त्री विल्बर श्रैम के अनुसार संचार *अनुभवों की साझेदारी* है।

दरअसल, एक-दूसरे से संचार करते हुए हम अपने अनुभवों को ही एक-दूसरे से बाँटते हैं। लेकिन संचार सिर्फ़ दो व्यक्तियों तक सीमित परिघटना नहीं है। संचार के तहत सिर्फ़ दो या उससे अधिक व्यक्तियों में ही नहीं, हज़ारों-लाखों लोगों के बीच होने वाले जनसंचार तक को शामिल किया जाता है। इस प्रकार सूचनाओं, विचारों और भावनाओं को लिखित, मौखिक या दृश्य-श्रव्य माध्यमों के ज़रिये सफलतापूर्वक एक जगह से दूसरी जगह पहुँचाना ही संचार है और इस प्रक्रिया को अंजाम देने में मदद करनेवाले तरीके संचार माध्यम कहलाते हैं।

इस तरह हमने देखा कि संचार एक घटना के बजाए प्रक्रिया है। एक ऐसी जीवंत प्रक्रिया जिसमें सूचना देने और पाने वाले की सक्रिय भागीदारी ज़रूरी है। दोनों की सक्रिय भागीदारी से ही यह प्रक्रिया पूरी होती है। अगर दोनों में से कोई संचार के लिए अनिच्छुक है तो संचार-प्रक्रिया का आगे बढ़ना मुश्किल होता है। इस अर्थ में संचार अंतरक्रियात्मक (इंटरएक्टिव) प्रक्रिया है।

संचार के तत्त्व

जब हम कहते हैं कि संचार एक प्रक्रिया है तो इसका एक अर्थ यह भी होता है कि इस प्रक्रिया में कई चरण या तत्त्व शामिल हैं। संचार की प्रक्रिया में भी कई तत्त्व शामिल हैं। इनमें से कुछ प्रमुख तत्त्वों की हम यहाँ सिलसिलेवार चर्चा करेंगे।

संचार प्रक्रिया की शुरुआत **स्रोत** या **संचारक** से होती है। जब स्रोत या संचारक एक उद्देश्य के साथ अपने किसी विचार, संदेश या भावना को किसी और तक पहुँचाना चाहता है तो संचार-प्रक्रिया की शुरुआत होती है। जैसे आप स्वयं को स्रोत या संचारक मान लें। आपको इतिहास की एक किताब चाहिए। लेकिन इसके लिए आपको अपनी कक्षा के एक मित्र से आग्रह करना पड़ेगा। इस तरह जैसे ही आप किताब माँगने की सोचते हैं, संचार की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। ज़ाहिर है कि किताब माँगने के लिए आप अपने मित्र से बातचीत करेंगे या उसे लिखकर संदेश भेजेंगे। बातचीत या संदेश भेजने के लिए आप भाषा का सहारा लेते हैं।

भाषा असल में, एक तरह का कूट चिह्न या कोड है। आप अपने संदेश को उस भाषा में **कूटीकृत** या **एनकोडिंग** करते हैं। यह संचार की प्रक्रिया का दूसरा चरण है। सफल संचार के लिए यह ज़रूरी है कि आपका मित्र भी उस भाषा यानी कोड से परिचित हो जिसमें आप अपना संदेश भेज रहे हैं। इसके साथ ही संचारक का एनकोडिंग की प्रक्रिया पर भी पूरा अधिकार होना चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि सफल संचार के लिए संचारक का भाषा पर पूरा अधिकार होना चाहिए। साथ ही उसे अपने संदेश के मुताबिक बोलना या लिखना भी आना चाहिए।

इसके बाद संचार-प्रक्रिया में अगला चरण स्वयं **संदेश** का आता है। संचार-प्रक्रिया में संदेश का बहुत अधिक महत्त्व है। किसी भी संचारक का सबसे प्रमुख उद्देश्य अपने संदेश को उसी अर्थ के साथ प्राप्तकर्ता तक पहुँचाना है। इसलिए सफल संचार के लिए ज़रूरी है कि संचारक अपने संदेश को लेकर खुद पूरी तरह से स्पष्ट हो। संदेश जितना ही स्पष्ट और सीधा होगा, संदेश के प्राप्तकर्ता को उसे समझना उतना ही आसान होगा।

लेकिन संदेश को किसी **माध्यम (चैनल)** के ज़रिये प्राप्तकर्ता तक पहुँचाना होता है। जैसे हमारे बोले हुए शब्द ध्वनि तरंगों के ज़रिये प्राप्तकर्ता तक पहुँचते हैं, जबकि दृश्य संदेश प्रकाश तरंगों के ज़रिये। इसी तरह वायु तरंगों के ज़रिये भी संदेश पहुँचते हैं। जैसे खाने की खुशबू हम तक वायु तरंगों के ज़रिये पहुँचती है। स्पर्श या छूना भी एक तरह का माध्यम है। इसी तरह टेलीफ़ोन, समाचारपत्र, रेडियो, टेलीविज़न, इंटरनेट और फ़िल्म आदि विभिन्न माध्यमों के ज़रिये भी संदेश प्राप्तकर्ता तक पहुँचाया जाता है।

प्राप्तकर्ता यानी रिसीवर प्राप्त संदेश का कूटवाचन यानी उसकी डीकोडिंग करता है। डीकोडिंग का अर्थ है प्राप्त संदेश में निहित अर्थ को समझने की कोशिश। यह एक तरह से एनकोडिंग

की उलटी प्रक्रिया है। इसमें संदेश का प्राप्तकर्ता उन चिह्नों और संकेतों के अर्थ निकालता है। ज़ाहिर है कि संचारक और प्राप्तकर्ता दोनों का उस कोड से परिचित होना ज़रूरी है।

संचार-प्रक्रिया में प्राप्तकर्ता की भी अहम भूमिका होती है, क्योंकि वही संदेश का आखिरी लक्ष्य होता है। प्राप्तकर्ता कोई भी हो सकता है। वह कोई एक व्यक्ति हो सकता है, एक समूह हो सकता है, या कोई संस्था अथवा एक विशाल जनसमूह भी हो सकता है। प्राप्तकर्ता को जब संदेश मिलता है तो वह उसके मुताबिक अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। वह प्रतिक्रिया सकारात्मक या नकारात्मक हो सकती है। यानी आपका मित्र कह सकता है कि वह किताब देगा या नहीं। संचार-प्रक्रिया में प्राप्तकर्ता की इस प्रतिक्रिया को **फ़ीडबैक** कहते हैं। संचार-प्रक्रिया की सफलता में फ़ीडबैक की अहम भूमिका होती है। फ़ीडबैक से ही पता चलता है कि संचार-प्रक्रिया में कहीं कोई बाधा तो नहीं आ रही है। इसके अलावा फ़ीडबैक से यह भी पता चलता है कि संचारक ने जिस अर्थ के साथ संदेश भेजा था वह उसी अर्थ में प्राप्तकर्ता को मिला है या नहीं? इस फ़ीडबैक के अनुसार ही संचारक अपने संदेश में सुधार करता है और इस तरह संचार की प्रक्रिया आगे बढ़ती है।

लेकिन वास्तविक जीवन में संचार प्रक्रिया इतनी सुचारू रूप से नहीं चलती। उसमें कई बाधाएँ भी आती हैं। इन बाधाओं को **शोर** (नॉयज) कहते हैं। संचार की प्रक्रिया को शोर से बाधा पहुँचती है। यह शोर किसी भी किस्म का हो सकता है। यह मानसिक से लेकर तकनीकी और भौतिक शोर तक हो सकता है। शोर के कारण संदेश अपने मूल रूप में प्राप्तकर्ता तक नहीं पहुँच पाता। सफल संचार के लिए संचार प्रक्रिया से शोर को हटाना या कम करना बहुत ज़रूरी है।

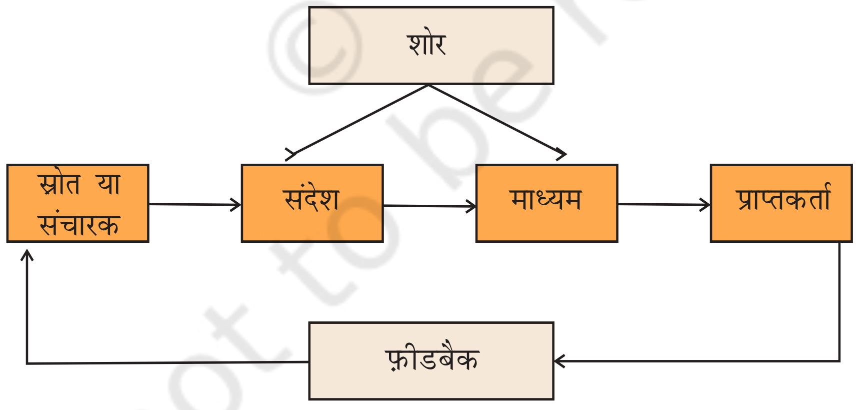

संचार प्रक्रिया

संचार के प्रकार

संचार एक जटिल प्रक्रिया है। उसके कई रूप या प्रकार हैं। हम यहाँ अध्ययन की सुविधा के लिए उन्हें अलग-अलग समझने की कोशिश करेंगे। वैसे संचार के विभिन्न रूप या प्रकार एक-दूसरे में भी काफ़ी घुले-मिले हैं। उन्हें अलग-अलग देखना काफ़ी मुश्किल है।

जैसे कभी आप अपने मित्र को इशारे से बुलाते हैं। ज़ाहिर है कि यह इशारा भी संचार है। इसे **सांकेतिक संचार** कहते हैं। जब हम अपने से बड़ों को सम्मान से प्रणाम करते हैं तो उसमें **मौखिक संचार** के साथ-साथ दोनों हथेलियाँ जोड़कर प्रणाम का इशारा भी करते हैं। इस तरह एक ही साथ मौखिक और **अमौखिक संचार** होता है। जैसे हम किसी से बातें करते हुए अपनी आँखों, चेहरे, हाथ की गति और स्वर के उतार-चढ़ाव के ज़रिये मौखिक संचार की अमौखिक क्रियाओं की मदद कर रहे होते हैं। मौखिक संचार की सफलता में अमौखिक संचार की बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। हमारे जीवन की कुछ सबसे महत्त्वपूर्ण भावनाएँ मौखिक से कहीं ज़्यादा अमौखिक संचार के ज़रिये व्यक्त होती हैं जैसे—खुशी, दुख, प्रेम, डर, आदि।

संचार के विभिन्न रूपों को हम एक और तरह से देख सकते हैं। याद कीजिए, जब आप अकेले में होते हैं तो क्या कर रहे होते हैं? आप कुछ सोच रहे होते हैं, कुछ योजना बना रहे होते हैं या किसी को याद कर रहे होते हैं। यह भी एक संचार है। इस संचार-प्रक्रिया में संचारक और प्राप्तकर्ता एक ही व्यक्ति होता है। यह संचार का सबसे बुनियादी रूप है। इसे **अंत:वैयक्तिक** (इंट्रापर्सनल) संचार कहते हैं। हम जब पूजा, इबादत या प्रार्थना करते वक्त ध्यान में होते हैं तो वह भी अंत:वैयक्तिक संचार का उदाहरण है। किसी भी संचार की शुरुआत यहीं से होती है। हम पहले सोचते हैं, फिर किसी और से संवाद करते हैं। स्पष्ट है कि किसी विषय या मुद्दे पर सोच-विचार करना या विचार-मंथन भी संचार का ही एक रूप है।

लेकिन जब दो व्यक्ति आपस में और आमने-सामने संचार करते हैं तो इसे **अंतरवैयक्तिक** (इंटरपर्सनल) संचार कहते हैं। इस संचार में फ़ीडबैक तत्काल प्राप्त होता है। अंतरवैयक्तिक संचार की मदद से ही हम आपसी संबंध विकसित करते हैं और अपनी रोज़मर्रा की ज़रूरतें पूरी करते हैं। संचार का यह रूप पारिवारिक और सामाजिक रिश्तों की बुनियाद है। अपने व्यक्तिगत जीवन में सफलता के लिए हमारा अंतरवैयक्तिक संचार का कौशल उन्नत और प्रभावी होना चाहिए। इस कौशल की ज़रूरत हमें कदम-कदम पर पड़ती है। नौकरी और दाखिले के लिए होने वाले इंटरव्यू में आपके इसी कौशल की परख होती है।

संचार का तीसरा प्रकार है—**समूह संचार**। इसमें एक समूह आपस में विचार-विमर्श या चर्चा करता है। जैसे आपकी कक्षा समूह संचार का एक अच्छा उदाहरण है। इस संचार में हम जो कुछ भी कहते हैं, वह किसी एक या दो व्यक्ति के लिए न होकर पूरे समूह के लिए होता है। समूह संचार का उपयोग समाज और देश के सामने उपस्थित समस्याओं को बातचीत और बहस-मुबाहिसे के ज़रिये हल करने के लिए होता है। संसद में जब विभिन्न मुद्दों पर चर्चा होती है तो यह भी समूह संचार का ही एक उदाहरण है। इसी तरह गाँव की पंचायत या किसी समिति की बैठक भी समूह संचार का उदाहरण है, जहाँ गाँव के लोग या समिति के सदस्य आपस में चर्चा कर किसी निर्णय तक पहुँचते हैं।

संचार का सबसे महत्त्वपूर्ण और आखिरी प्रकार है—**जनसंचार** (मास कम्युनिकेशन)। जब हम व्यक्तियों के समूह के साथ प्रत्यक्ष संवाद की बजाय किसी तकनीकी या यांत्रिक माध्यम के ज़रिये समाज के एक विशाल वर्ग से संवाद कायम करने की कोशिश करते हैं तो इसे जनसंचार कहते हैं।

इसमें एक संदेश को यांत्रिक माध्यम के ज़रिये बहुगुणित किया जाता है ताकि उसे अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाया जा सके। इसके लिए हमें किसी उपकरण या माध्यम की मदद लेनी पड़ती है—मसलन अखबार, रेडियो, टी.वी., सिनेमा या इंटरनेट। अखबार में प्रकाशित होने वाले समाचार वही होते हैं लेकिन प्रेस के ज़रिये उनकी हज़ारों-लाखों प्रतियाँ प्रकाशित करके विशाल पाठक वर्ग तक पहुँचाई जाती हैं।

जनसंचार की विशेषताएँ

जनसंचार में फ़ीडबैक तुरंत नहीं प्राप्त होता है। जनसंचार के श्रोताओं, पाठकों और दर्शकों का दायरा बहुत व्यापक होता है। साथ ही उनका गठन भी बहुत पंचमेल होता है। जैसे किसी टेलीविज़न चैनल के दर्शकों में अमीर वर्ग भी हो सकता है और गरीब वर्ग भी, शहरी भी और ग्रामीण भी, पुरुष भी और महिला भी, युवा तथा वृद्ध भी। इसके अलावा उनमें कोई दिल्ली में बैठा हो सकता है और कोई पटना में। लेकिन सभी एक ही समय टी.वी. पर अपनी पसंद का कार्यक्रम देख रहे हो सकते हैं। इसी से जुड़ी जनसंचार की एक प्रमुख विशेषता यह है कि जनसंचार माध्यमों के ज़रिये प्रकाशित या प्रसारित संदेशों की प्रकृति सार्वजनिक होती है। इसका अर्थ यह हुआ कि अंतरवैयक्तिक या समूह संचार की तुलना में जनसंचार के संदेश सबके लिए होते हैं।

जनसंचार का संचार के अन्य रूपों से एक फ़र्क यह भी है कि इसमें संचारक और प्राप्तकर्ता के बीच कोई सीधा संबंध नहीं होता है। प्राप्तकर्ता यानी पाठक, श्रोता और दर्शक संचारक को उसकी सार्वजनिक भूमिका के कारण पहचानता है। संचार के अन्य रूपों की तुलना में जनसंचार के लिए एक औपचारिक संगठन की भी ज़रूरत पड़ती है। औपचारिक संगठन के बिना जनसंचार माध्यमों को चलाना मुश्किल है। जैसे समाचारपत्र किसी न किसी संगठन से प्रकाशित होता है या रेडियो का प्रसारण किसी रेडियो संगठन की ओर से किया जाता है।

जनसंचार माध्यमों की एक और महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि उनमें ढेर सारे द्वारपाल (गेटकीपर) काम करते हैं। द्वारपाल वह व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह है जो जनसंचार माध्यमों से प्रकाशित या प्रसारित होने वाली सामग्री को नियंत्रित और निर्धारित करता है। किसी जनसंचार माध्यम में काम करने वाले द्वारपाल ही तय करते हैं कि वहाँ किस तरह की सामग्री प्रकाशित या प्रसारित की जाएगी। जैसे किसी समाचारपत्र में संपादक और उसके सहायक—समाचार संपादक, सहायक संपादक, उपसंपादक आदि यह तय करते हैं कि समाचारपत्र में क्या छपेगा, कितना छपेगा और किस तरह छपेगा। इसी तरह टी.वी. और रेडियो में भी द्वारपाल होते हैं जो उससे प्रसारित होने वाली सामग्री को निर्धारित करते हैं।

जनसंचार माध्यमों में द्वारपाल की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। यह उनकी ही ज़िम्मेदारी है कि वे सार्वजनिक हित, पत्रकारिता के सिद्धांतों, मूल्यों और आचार संहिता के अनुसार सामग्री को संपादित करें और उसके बाद ही उनके प्रसारण या प्रकाशन की इजाज़त दें।

संचार के कार्य

आप अपने रोज़मर्रा के जीवन में संचार का खूब इस्तेमाल करते हैं। निश्चय ही आप उसके उपयोग और कार्यों से बहुत हद तक परिचित हैं। संचार विशेषज्ञों के अनुसार संचार के कई कार्य हैं। इनमें से कुछ कार्यों को हम यहाँ रेखांकित कर सकते हैं–

1. संचार का प्रयोग हम कुछ हासिल करने या प्राप्त करने के लिए करते हैं। जैसे अपने दोस्त से किताब माँगने के लिए।

*2. **नियंत्रण**–संचार के ज़रिये हम किसी के व्यवहार को नियंत्रित करने की कोशिश करते हैं यानी उसे हम एक खास तरीके से व्यवहार करने के लिए कहते हैं। जैसे कक्षा में शिक्षक विद्यार्थियों को नियंत्रित करते हैं।*

*3. **सूचना**–कुछ जानने के लिए या कुछ बताने के लिए भी हम संचार का प्रयोग करते हैं।*

*4. **अभिव्यक्ति**–संचार का उपयोग हम अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए या अपने को एक खास तरह से प्रस्तुत करने के लिए भी करते हैं।*

*5. **सामाजिक संपर्क**–संचार का प्रयोग हम एक समूह में आपसी संपर्कों को बढ़ाने के लिए भी करते हैं।*

6. संचार का प्रयोग अकसर हम अपनी समस्याओं या किसी चिंता को दूर करने के लिए करते हैं।

7. संचार का प्रयोग हम अपनी रुचि की किसी वस्तु या विषय के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए भी करते हैं।

8. इसके साथ ही संचार का प्रयोग हम अपनी किसी भूमिका को पूरा करने के लिए करते हैं क्योंकि यही परिस्थिति की माँग होती है। जैसे आप एक विद्यार्थी के रूप में या एक डॉक्टर या एक जज के रूप में अपनी भूमिका के अनुसार संचार करते हैं।

© NCERT not to be republished

जनसंचार के कार्य

जिस प्रकार संचार के कई कार्य हैं, उसी तरह जनसंचार माध्यमों के भी कई कार्य हैं। उनमें से कुछ प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं–

- **सूचना देना**–जनसंचार माध्यमों का प्रमुख कार्य सूचना देना है। हमें उनके ज़रिये ही दुनियाभर से सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। हमारी ज़रूरतों का बड़ा हिस्सा जनसंचार माध्यमों के ज़रिये ही पूरा होता है।
- **शिक्षित करना**–जनसंचार माध्यम सूचनाओं के ज़रिये हमें जागरूक बनाते हैं। लोकतंत्र में जनसंचार माध्यमों की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका जनता को शिक्षित करने की है। यहाँ शिक्षित करने से आशय उन्हें देश-दुनिया के हाल से परिचित कराने और उसके प्रति सजग बनाने से है।
- **मनोरंजन करना**–जनसंचार माध्यम मनोरंजन के भी प्रमुख साधन हैं। सिनेमा, टी.वी., रेडियो, संगीत के टेप, वीडियो और किताबें आदि मनोरंजन के प्रमुख माध्यम हैं।
- **एजेंडा तय करना**–जनसंचार माध्यम सूचनाओं और विचारों के ज़रिये किसी देश और समाज का एजेंडा भी तय करते हैं। जब समाचारपत्र और समाचार चैनल किसी खास घटना या मुद्दे को प्रमुखता से उठाते हैं या उन्हें व्यापक कवरेज देते हैं तो वे घटनाएँ या मुद्दे आम लोगों में चर्चा के विषय बन जाते हैं। किसी घटना या मुद्दे को चर्चा का विषय बनाकर जनसंचार माध्यम सरकार और समाज को उस पर अनुकूल प्रतिक्रिया करने के लिए बाध्य कर देते हैं।
- **निगरानी करना**–किसी लोकतांत्रिक समाज में जनसंचार माध्यमों का एक और प्रमुख कार्य सरकार और संस्थाओं के कामकाज पर निगरानी रखना भी है। अगर सरकार कोई गलत कदम उठाती है या किसी संगठन/संस्था में कोई अनियमितता बरती जा रही है तो उसे लोगों के सामने लाने की ज़िम्मेदारी जनसंचार माध्यमों पर है।
- **विचार-विमर्श के मंच**–जनसंचार माध्यमों का एक कार्य यह भी है कि वे लोकतंत्र में विभिन्न विचारों को अभिव्यक्ति का मंच उपलब्ध कराते हैं। इसके ज़रिये विभिन्न विचार लोगों के सामने पहुँचते हैं। जैसे किसी समाचारपत्र के संपादकीय पृष्ठ पर किसी घटना या मुद्दे पर विभिन्न विचार रखने वाले लेखक अपनी राय व्यक्त करते हैं। इसी तरह संपादक के नाम चिट्ठी स्तंभ में आम लोगों को अपनी राय व्यक्त करने का मौका मिलता है। इस तरह जनसंचार माध्यम विचार-विमर्श के मंच के रूप में भी काम करते हैं।

भारत में जनसंचार माध्यमों का विकास

भारत में आज जनसंचार के आधुनिक माध्यम जिस रूप में मौजूद हैं, उसकी प्रेरणा भले ही पश्चिमी जनसंचार माध्यम रहे हों लेकिन हमारे देश में भी जनसंचार माध्यमों का इतिहास कम पुराना नहीं हैं। बड़ी सहजता के साथ इसके बीज पौराणिक काल के मिथकीय पात्रों में खोजे जा सकते हैं। देवर्षि नारद को भारत का पहला समाचार वाचक माना जाता है जो वीणा की मधुर झंकार के साथ धरती और देवलोक के बीच संवाद-सेतु थे। उन्हीं की तरह महाभारत काल में महाराज धृतराष्ट्र और रानी गांधारी को युद्ध की झलक दिखाने और उसका विवरण सुनाने के लिए जिस तरह संजय की परिकल्पना की गई है, वह एक अत्यंत समृद्ध संचार व्यवस्था की ओर इशारा करती है।

not to be republished © NCERT

भीमबेटका के गुफाचित्र

महाराष्ट्र का लावनी नृत्य

जनभावनाओं को राजदरबार तक पहुँचाने और राजा का संदेश जनता के बीच प्रसारित करने की समृद्ध व्यवस्थाओं के उदाहरण बाद में भी दिखाई पड़ते हैं। चंद्रगुप्त मौर्य, अशोक जैसे सम्राटों के शासन-काल में स्थायी महत्त्व के संदेशों के लिए शिलालेखों और सामयिक या तात्कालिक संदेशों के लिए कच्ची स्याही या रंगों से संदेश लिखकर प्रदर्शित करने की व्यवस्था और मज़बूत हुई। तब बाकायदा रोज़नामचा लिखने के लिए कर्मचारी नियुक्त किए जाने लगे और जनता के बीच संदेश भेजने के लिए भी सही व्यवस्था की गई।

लेकिन भारतीय संचार परंपरा की खासियत यह भी रही है कि राजदरबारों के समानांतर हमारे यहाँ लोक माध्यमों की भी सुलझी व्यवस्था मौजूद रही है। इसके संकेत प्रागैतिहासिक काल से ही मिलते हैं। भीमबेटका के गुफाचित्र इसके प्रमाण हैं। यह समानांतर व्यवस्था बाद में कठपुतली और लोकनाटकों की विविध शैलियों के रूप में दिखाई पड़ती है। देश के विभिन्न हिस्सों में प्रचलित विविध नाट्यरूपों–कथावाचन, बाउल, सांग, रागनी, तमाशा, लावनी, नौटंकी, जात्रा, गंगा-गौरी, यक्षगान आदि का विशेष महत्त्व है। इन विधाओं के कलाकार मनोरंजन तो करते ही थे, एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र तक संदेश पहुँचाने और जनमत निर्माण करने का काम भी करते थे।

लेकिन जनसंचार के आधुनिक माध्यमों के जो रूप आज हमारे यहाँ हैं, वे निश्चय ही हमें अंग्रेज़ों से मिले हैं। चाहे समाचारपत्र हों या रेडियो, टेलीविज़न या इंटरनेट, सभी माध्यम पश्चिम से ही आए। हमने शुरुआत में उन्हें उसी रूप में अपनाया लेकिन धीरे-धीरे वे हमारी सांस्कृतिक विरासत के अंग बनते चले गए। चाहे फ़िल्में हों या टी.वी. सीरियल, एक समय के बाद वे भारतीय नाट्य परंपरा से परिचालित होने लगते हैं। इसलिए आज के जनसंचार माध्यमों का खाका भले पश्चिमी हो, लेकिन उनकी विषयवस्तु और रंगरूप भारतीय ही हैं। चूँकि उसकी भूमिका भी कहीं अधिक बढ़ चली है, इसलिए जहाँ वह शासक वर्ग के लिए राष्ट्र निर्माण की दिशा तय करता है, वहीं जनता की भागीदारी भी सुनिश्चित करता है।

जनसंचार माध्यमों के वर्तमान प्रचलित रूपों में प्रमुख हैं– समाचारपत्र-पत्रिकाएँ, रेडियो, टेलीविज़न, सिनेमा और इंटरनेट। इन माध्यमों के ज़रिये जो भी सामग्री आज जनता तक पहुँच रही है, राष्ट्र के मानस का निर्माण करने में उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

समाचारपत्र-पत्रिकाएँ

अतीत की कुछ प्रमुख पत्रिकाएँ

जनसंचार की सबसे मज़बूत कड़ी पत्र–पत्रिकाएँ या प्रिंट मीडिया ही है। हालाँकि अपने विशाल दर्शक वर्ग और तीव्रता के कारण रेडियो और टेलीविज़न की ताकत ज़्यादा मानी जा सकती है लेकिन वाणी को शब्दों के रूप में रिकार्ड करने वाला आरंभिक माध्यम होने की वजह से प्रिंट मीडिया का महत्त्व हमेशा बना रहेगा। आज भले ही प्रिंट, रेडियो, टेलीविज़न या इंटरनेट, किसी भी माध्यम से खबरों के संचार को पत्रकारिता कहा जाता हो, लेकिन आरंभ में केवल प्रिंट माध्यमों के ज़रिये खबरों के आदान–प्रदान को ही पत्रकारिता कहा जाता था। इसके तीन पहलू हैं–पहला समाचारों को संकलित करना, दूसरा उन्हें संपादित कर छपने लायक बनाना और तीसरा पत्र या पत्रिका के रूप में छापकर पाठक तक पहुँचाना। हालाँकि तीनों ही काम आपस में गहरे जुड़े हैं लेकिन पत्रकारिता के तहत हम पहले दो कामों को ही लेते हैं क्योंकि प्रकाशन और वितरण का कार्य तकनीकी और प्रबंधकीय विभागों के अधीन होते हैं जबकि रिपोर्टिंग और संपादन के काम के लिए एक विशेष बौद्धिक और पत्रकारीय कौशल की अपेक्षा होती है।

वर्तमान की कुछ प्रमुख पत्रिकाएँ

जहाँ बाहर से खबरें लाने का काम संवाददाताओं का होता है, वहीं तमाम खबरों, लेखों, फ़ीचरों को व्यवस्थित तरीके से संपादित करने और सुरुचिपूर्ण ढंग से छापने का काम संपादकीय विभाग में काम करनेवाले संपादकों का होता है। आज पत्रकारिता का क्षेत्र भी बहुत व्यापक हो चला है। खबर का संबंध किसी एक या दो विषयों से नहीं होता। दुनिया के किसी भी कोने की घटना समाचार बन सकती है बशर्ते कि उसमें पाठकों की दिलचस्पी हो या उसमें सार्वजनिक हित निहित हो।

हालाँकि दुनिया में अखबारी पत्रकारिता को अस्तित्व में आए 400 साल हो गए हैं, लेकिन भारत में इसकी शुरुआत सन् 1780 में जेम्स ऑगस्ट हिकी के 'बंगाल गज़ट' से हुई जो कलकत्ता (कोलकाता) से निकला था जबकि हिंदी का पहला साप्ताहिक पत्र 'उदंत मार्तंड' भी कलकत्ता से ही सन् 1826 में पंडित जुगल किशोर शुक्ल के संपादन में निकला था। हिंदी

1. आज़ादी के दिन का 'हिन्दुस्तान', 2. हिंदी के विकास में अग्रणी भूमिका निभाने वाली 'सरस्वती', 3. प्रेमचंद द्वारा संपादित 'हंस' का पहला अंक, 4. बीसवीं सदी के साहित्यिक बदलाव का मुख्य पत्र 'मतवाला', 5. बनारसी दास चतुर्वेदी द्वारा संपादित, जुलाई 1947 का 'विशाल भारत'।

गतिविधि

अपने प्रिय समाचारपत्र या पत्रिका के बारे में 300 शब्दों की एक टिप्पणी लिखिए उसमें उसकी खूबियों और खामियों को स्पष्ट कीजिए। यह भी बताइए कि आप वह समाचारपत्र या पत्रिका कब से पढ़ रहे/रही हैं? क्या आप रोज़ अखबार पढ़ते/पढ़ती हैं? क्या आप पूरा अखबार/पत्रिका पढ़ते/पढ़ती हैं? क्या आपको लगता है कि आपका पसंदीदा अखबार/पत्रिका आपको सूचना, शिक्षा और मनोरंजन देता है?

भाषा के विकास में शुरुआती अखबारों और पत्रिकाओं ने बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस लिहाज़ से भारतेंदु हरिश्चंद्र का नाम हमेशा सम्मान के साथ लिया जाएगा जिन्होंने कई पत्रिकाएँ निकालीं।

आज़ादी के आंदोलन में भारतीय पत्रों ने अहम भूमिका निभाई। महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक और मदनमोहन मालवीय जैसे नेताओं ने लोगों को जागरूक बनाने के लिए पत्रकार की भी भूमिका निभाई। गांधी जी को हम समकालीन भारत का सबसे बड़ा पत्रकार कह सकते हैं, क्योंकि आज़ादी दिलाने में उनके पत्रों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। आज़ादी के पहले के प्रमुख पत्रकारों में गणेश शंकर विद्यार्थी, माखनलाल चतुर्वेदी, महावीर प्रसाद द्विवेदी, बाबूराव विष्णुराव पराड़कर, प्रताप नारायण मिश्र, शिवपूजन सहाय, रामवृक्ष बेनीपुरी और बालमुकुंद गुप्त हैं। उस समय के महत्त्वपूर्ण अखबारों और पत्रिकाओं में 'केसरी', 'हिन्दुस्तान', 'सरस्वती', 'हंस', 'कर्मवीर', 'आज', 'प्रताप', 'प्रदीप' और 'विशाल भारत' आदि प्रमुख हैं।

HICKY's
BENGAL GAZETTE;
OR,
Calcutta General Advertiser.

1780 में प्रकाशित होने वाला भारत का पहला अखबार

लेकिन जहाँ आज़ादी से पहले पत्रकारिता का लक्ष्य स्वाधीनता की प्राप्ति था, वहीं आज़ादी के बाद पत्रकारिता का लक्ष्य बदलने लगा। शुरुआती दो दशकों तक पत्रकारिता राष्ट्र-निर्माण के प्रति प्रतिबद्ध दिखती थी। लेकिन उसके बाद उसका चरित्र व्यावसायिक और प्रोफ़ेशनल होने लगा। यही कारण है कि कुछ लोग कहते हैं कि आज़ादी से पहले पत्रकारिता एक मिशन थी लेकिन आज़ादी के

© NCERT not to be republished

बाद वह एक व्यवसाय बन गई। आज़ादी के बाद अधिकतर पुरानी पत्रिकाएँ बंद हो गईं और कई नए समाचारपत्रों और पत्रिकाओं का प्रकाशन शुरू हुआ।

आज़ादी के बाद के प्रमुख हिंदी अखबारों में 'नवभारत टाइम्स', 'जनसत्ता', 'नई दुनिया', 'राजस्थान पत्रिका', 'अमर उजाला', 'दैनिक भास्कर', 'दैनिक जागरण' और पत्रिकाओं में 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'दिनमान', 'रविवार', 'इंडिया टुडे' और 'आउटलुक' का नाम लिया जा सकता है। इनमें से कई पत्रिकाएँ बंद हो चुकी हैं। आज़ादी के बाद के हिंदी के प्रमुख पत्रकारों में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', रघुवीर सहाय, धर्मवीर भारती, मनोहर श्याम जोशी, राजेन्द्र माथुर, प्रभाष जोशी, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, सुरेन्द्र प्रताप सिंह का नाम लिया जा सकता है।

रेडियो

पत्र-पत्रिकाओं के बाद जिस माध्यम ने दुनिया को सबसे ज़्यादा प्रभावित किया, वह रेडियो है। सन् 1895 में जब इटली के इलैक्ट्रिकल इंजीनियर जी. मार्कोनी ने वायरलेस के ज़रिये ध्वनियों और संकेतों को एक जगह से दूसरी जगह भेजने में कामयाबी हासिल की, तब रेडियो जैसा माध्यम अस्तित्व में आया। पहले विश्वयुद्ध तक यह सूचनाओं के आदान-प्रदान का एक महत्त्वपूर्ण औज़ार बन चुका था। शुरुआती रेडियो स्टेशन अमेरिकी शहर पिट्सबर्ग, न्यूयॉर्क और शिकागो में खुले। भारत ने 1921 में मुंबई में 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया' ने डाक-तार विभाग के सहयोग से पहला संगीत कार्यक्रम प्रसारित किया। 1936 में विधिवत ऑल इंडिया रेडियो की स्थापना हुई और आज़ादी के समय तक देश में कुल नौ रेडियो स्टेशन खुल चुके थे–लखनऊ, दिल्ली, बंबई (मुंबई), कलकत्ता (कोलकाता), मद्रास (चैन्नई), तिरुचिरापल्ली, ढाका, लाहौर और पेशावर। ज़ाहिर है इनमें से तीन रेडियो स्टेशन विभाजन के साथ पाकिस्तान के हिस्से में चले गए।

आज़ादी के बाद भारत में रेडियो एक बेहद ताकतवर माध्यम के रूप में विकसित हुआ। एक धर्मनिरपेक्ष, लोकहितकारी राष्ट्र के जनमाध्यम के तौर पर देश के नवनिर्माण में आकाशवाणी की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। सूचना और शिक्षा के अलावा देश की सामासिक संस्कृति को उभारने और राष्ट्रीय नवनिर्माण के लिए शुरू किए गए कार्यक्रमों को एक आवाज़ देने का काम रेडियो ने किया।

आज आकाशवाणी देश की 24 भाषाओं और 146 बोलियों में कार्यक्रम प्रस्तुत करती है। देश की 96 प्रतिशत आबादी तक इसकी पहुँच है। 1993 में **एफएम (फ्रिक्वेंसी मॉड्यूलेशन)** की शुरुआत के बाद रेडियो के क्षेत्र में कई निजी कंपनियाँ भी आगे आई हैं। लेकिन अभी उन्हें समाचार और सम-सामयिक कार्यक्रमों के प्रसारण की अनुमति नहीं है। 1997 में आकाशवाणी और दूरदर्शन को केंद्र सरकार के सीधे नियंत्रण से निकालकर प्रसार भारती नाम के स्वायत्तशासी निकाय को सौंप दिया गया। असल में, लंबे अर्से तक सरकारी नियंत्रण में रहने के कारण रेडियो में आ गई जड़ता को तोड़ने की पहल 1995 में उच्चतम न्यायालय के एक फ़ैसले ने की। इस फ़ैसले में कहा गया कि ध्वनि तरंगों पर किसी का एकाधिकार नहीं हो सकता और उन्हें मुक्त किया जाना चाहिए। एफ.एम. के दूसरे चरण के साथ देश के 90 शहरों में 350 से अधिक निजी एफएम चैनल शुरू हो रहे हैं। इसके साथ ही सामुदायिक या कम्युनिटी रेडियो केंद्रों के आने से देश में रेडियो की नयी संस्कृति अस्तित्व में आ रही है।

रेडियो एक ध्वनि माध्यम है। इसकी तात्कालिकता, घनिष्ठता और प्रभाव के कारण गांधी जी ने रेडियो को एक अद्भुत शक्ति कहा था। ध्वनि तरंगों के ज़रिये यह देश के कोने-कोने तक पहुँचता है। दूर-दराज़ के गाँवों में, जहाँ संचार और मनोरंजन के अन्य साधन नहीं होते, वहाँ रेडियो ही एकमात्र साधन है, बाहरी दुनिया से जुड़ने का। फिर अखबार और टेलीविज़न की तुलना में यह बहुत सस्ता भी है। इसलिए भारत के दूरदराज़ के इलाकों में लोगों ने रेडियो क्लब बना लिए हैं। आकाशवाणी के अलावा सैकड़ों निजी एफएम स्टेशनों और बीबीसी, वॉयस ऑफ अमेरिका, डोयचे वेले (रेडियो जर्मनी), मास्को रेडियो, रेडियो पेइचिंग, रेडियो आस्ट्रेलिया जैसे कई विदेशी प्रसारण और हैम अमेच्योर रेडियो क्लबों (स्वतंत्र समूह द्वारा संचालित पंजीकृत रेडियो स्टेशन) का जाल बिछा हुआ है।

जनता के बीच आकाशवाणी का दायरा

टेलीविज़न

आज टेलीविज़न जनसंचार का सबसे लोकप्रिय और ताकतवर माध्यम बन गया है। प्रिंट मीडिया के शब्द और रेडियो की ध्वनियों के साथ जब टेलीविज़न के दृश्य मिल जाते हैं तो सूचना

गतिविधि

अपने ट्रांजिस्टर पर आकाशवाणी के स्थानीय केंद्र से प्रसारित होनेवाले कार्यक्रमों को सुनिए, विशेषकर 8 बजे सुबह और रात्रि 8.45 बजे हिंदी में प्रसारित होनेवाले

राष्ट्रीय समाचार बुलेटिन सुनिए। इसके साथ ही शाम 7.30 बजे बीबीसी (हिंदी सेवा) से प्रसारित होनेवाले समाचार भी सुनिए। आकाशवाणी और बीबीसी के समाचार बुलेटिन की तुलना करते हुए 300 शब्दों का एक आलेख तैयार कीजिए और कक्षा में शिक्षक के सहयोग से इस पर चर्चा कीजिए।

© NCERT not to be republished

की विश्वसनीयता कई गुना बढ़ जाती है। पश्चिमी देशों में रेडियो के विकास के साथ ही टेलीविज़न पर भी प्रयोग शुरू हो गए थे। 1927 में बेल टेलीफ़ोन लेबोरैट्रीज़ ने न्यूयॉर्क और वाशिंगटन के बीच प्रायोगिक टेलीविज़न कार्यक्रम का प्रसारण किया। 1936 तक बीबीसी ने भी अपनी टेलीविज़न सेवा शुरू कर दी थी।

भारत में टेलीविज़न की शुरुआत यूनेस्को की एक शैक्षिक परियोजना के तहत 15 सितंबर, 1959 को हुई थी। इसका मकसद टेलीविज़न के ज़रिये शिक्षा और सामुदायिक विकास को प्रोत्साहित करना था। इसके तहत दिल्ली के आसपास के गाँवों में 2 टी.वी. सेट लगाए गए जिन्हें 200 लोगों ने देखा। यह हफ़्ते में दो बार एक-एक घंटे के लिए दिखाया जाता था। लेकिन 1965 में स्वतंत्रता दिवस से भारत में विधिवत टी.वी. सेवा का आरंभ हुआ। तब रोज़ एक घंटे के लिए टी.वी. कार्यक्रम दिखाया जाने लगा। 1975 तक दिल्ली, मुंबई, श्रीनगर, अमृतसर, कोलकाता, मद्रास और लखनऊ में टी.वी. सेंटर खुल गए। लेकिन 1976 तक टी.वी. सेवा आकाशवाणी का हिस्सा थी। 1 अप्रैल 1976 से इसे अलग कर दिया गया। इसे दूरदर्शन नाम दिया गया। 1984 में इसकी रजत जयंती मनाई गई।

स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी को दूरदर्शन की ताकत का एहसास था। वह देशभर में टेलीविज़न केंद्रों का जाल बिछाना चाहती थीं। 1980 में श्रीमती इंदिरा गांधी ने प्रोफ़ेसर पी.सी. जोशी की अध्यक्षता में दूरदर्शन के कार्यक्रमों की गुणवत्ता में सुधार के लिए एक समिति गठित की। जोशी ने अपनी रिपोर्ट में लिखा, **हमारे जैसे समाज में जहाँ पुराने मूल्य टूट रहे हों और नए न बन रहे हों, वहाँ दूरदर्शन बड़ी भूमिका निभाते हुए जनतंत्र को मज़बूत बना सकता है।**

समिति के मुताबिक जनसंचार माध्यम के बतौर भारत में दूरदर्शन के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिए–

- सामाजिक परिवर्तन
- राष्ट्रीय एकता
- वैज्ञानिक चेतना का विकास
- परिवार कल्याण को प्रोत्साहन
- कृषि विकास
- पर्यावरण संरक्षण
- सामाजिक विकास
- खेल संस्कृति का विकास
- सांस्कृतिक धरोहर को प्रोत्साहन

दूरदर्शन ने देश की सूचना, शिक्षा और मनोरंजन की ज़रूरतों को पूरा करने की दिशा में उल्लेखनीय सेवा की है, लेकिन लंबे समय तक सरकारी नियंत्रण में रहने के कारण इसमें ताज़गी

का अभाव खटकने लगा और पत्रकारिता के निष्पक्ष माध्यम के तौर पर यह अपनी जगह नहीं बना पाया। अलबत्ता मनोरंजन के एक लोकप्रिय माध्यम के तौर पर इसने अपनी एक खास जगह बना ली है।

1991 में खाड़ी युद्ध के दौरान दुनियाभर के लोगों ने केबल टी.वी. के ज़रिये युद्ध का सीधा प्रसारण देखा। यह एक अलग ही तरह का अनुभव था। बाद में यह भी कहा गया कि यह युद्ध जितना अमेरिकी सेनाओं ने लड़ा, उतना ही सीएनएन केबल न्यूज़ नेटवर्क नाम के टी.वी. चैनल ने लड़ा। इसके बाद भारत में भी टी.वी. की दुनिया में निजी चैनलों की शुरुआत हुई, विदेशी चैनलों को प्रसारण की अनुमति दी गई और इसके साथ ही भारत में सीएनएन, बीबीसी जैसे चैनल दिखाए जाने लगे। जल्दी ही स्टार टी.वी. जैसे चैनलों ने अपने भारत केंद्रित समाचार चैनल भी आरंभ कर दिए। इसके अलावा डिस्कवरी, नेशनल ज़्यॉग्राफ़िक जैसे शैक्षिक और मनोरंजन चैनलों के साथ ही एफ़टी.वी., एमटी.वी. व वीटी.वी. जैसे विशुद्ध पश्चिमी किस्म के चैनल भी दिखने लगे। कुछ लोगों ने इसे देश पर सांस्कृतिक हमला भी कहा और इन चैनलों का विरोध किया।

लेकिन टेलीविज़न का असली विस्तार तब हुआ, जब भारत में देशी निजी चैनलों की बाढ़ आने लगी। अक्टूबर, 1993 में ज़ी टी.वी. और स्टार टी.वी. के बीच अनुबंध हुआ। उसके बाद समाचार के क्षेत्र में भी ज़ी न्यूज़ और स्टार न्यूज़ नामक चैनल आए और सन् 2002 में आजतक के स्वतंत्र चैनल के रूप में आने के बाद तो जैसे समाचार चैनलों की बाढ़ ही आ गई। जहाँ पहले हमारे सार्वजनिक प्रसारक दूरदर्शन का उद्देश्य राष्ट्र निर्माण और सामाजिक उन्नयन था, वहीं इन निजी चैनलों का मकसद व्यावसायिक लाभ कमाना रह गया। इससे जहाँ टेलीविज़न समाचार को निष्पक्षता की पहचान मिली, उसमें ताज़गी आई और वह पेशेवर हुआ, वहीं एक अंधी होड़ के कारण अनेक बार पत्रकारिता के मूल्यों और उसकी नैतिकता का भी हनन हुआ। इसके बावजूद आज पूरे भारत में 200 से अधिक चैनल प्रसारित हो रहे हैं और रोज़ नए-नए चैनलों की बाढ़ आ रही है।

पुरानी फ़िल्मों के कुछ चित्र

सिनेमा

जनसंचार का सबसे लोकप्रिय और प्रभावशाली माध्यम है—सिनेमा। हालाँकि यह जनसंचार के अन्य माध्यमों की तरह सीधे तौर पर सूचना देने का काम नहीं करता लेकिन परोक्ष रूप में सूचना, ज्ञान और संदेश देने का काम करता है। सिनेमा को मनोरंजन के एक सशक्त माध्यम के तौर पर देखा जाता रहा है।

गतिविधि

आपकी पसंदीदा फ़िल्म कौन-सी है? इस फ़िल्म का कौन-सा चरित्र आपको अच्छा लगा और क्यों? फ़िल्म क्या संदेश देती है। इस बारे में 200 शब्दों की रिपोर्ट लिखें और अपने अध्यापक को दिखाएँ।

सिनेमा के आविष्कार का श्रेय थॉमस अल्वा एडिसन को जाता है और यह 1883 में मिनेटिस्कोप की खोज के साथ जुड़ा हुआ है। 1894 में फ्रांस में पहली फ़िल्म बनी 'द अराइवल ऑफ़ ट्रेन'। सिनेमा की तकनीक में तेज़ी से विकास हुआ और जल्दी ही यूरोप और अमेरिका में कई अच्छी फ़िल्में बनने लगीं।

भारत में पहली मूक फ़िल्म बनाने का श्रेय दादा साहेब फ़ाल्के को जाता है। यह फ़िल्म थी 1913 में बनी–'राजा हरिश्चंद्र'। इसके बाद के दो दशकों में कई और मूक फ़िल्में बनीं। इनके कथानक धर्म, इतिहास और लोक गाथाओं के इर्द-गिर्द बुने जाते रहे। 1931 में पहली बोलती फ़िल्म बनी–'आलम आरा'। इसके बाद बोलती फ़िल्मों का दौर शुरू हुआ। आज़ादी के बाद जहाँ एक तरफ़ भारतीय सिनेमा ने देश के सामाजिक यथार्थ को गहराई से पकड़कर आवाज़ देने की कोशिश की, वहीं लोकप्रिय सिनेमा ने व्यावसायिकता का रास्ता अपनाया। एक तरफ़ पृथ्वीराज कपूर, महबूब खान, सोहराब मोदी, गुरुदत्त जैसे फ़िल्मकार थे तो दूसरी तरफ़ सत्यजित राय जैसे फ़िल्मकार।

सत्तर के दशक तक सिनेमा के मूल में प्रेम, फंतासी और एक कभी न हारने वाले सुपर नैचुरल हीरो की परिकल्पना रही। कहानियों में कुछ न कुछ संदेश देने की भी कोशिश हुई लेकिन बहुत ही अव्यावहारिक तरीके से। सत्तर और अस्सी के दशक में कुछ फ़िल्मकारों ने महसूस किया कि सिनेमा जैसे सशक्त संचार माध्यम का इस्तेमाल आम लोगों में चेतना फैलाने, उसे व्यावहारिक जीवन की समस्याओं से जोड़ने और अन्याय के खिलाफ़ एक कलात्मक अभिव्यक्ति के तौर पर किया जाए। यही समानांतर सिनेमा का दौर था और इस दौरान 'अंकुर', 'निशांत', 'अर्धसत्य' जैसी फ़िल्में बनी।

हालाँकि सत्यजित राय ने पचास के दशक में ही 'पथेर पांचाली' बनाकर इसकी शुरुआत कर दी थी लेकिन समानांतर सिनेमा ने एक आंदोलन की शक्ल ली–साठ के दशक के आखिरी वर्षों और सत्तर के दशक में। यह आंदोलन अस्सी के दशक में भी जारी रहा। इस धारा में सत्यजित राय के अलावा श्याम बेनेगल, मृणाल सेन, ऋत्विक घटक, अदूर गोपालकृष्णन, एम.एस. सथ्यू, गोविंद निहलानी जैसे फ़िल्मकार शामिल हुए।

लेकिन बाज़ारवाद और व्यावसायिकता के दबाव में समानांतर या कला फ़िल्मों का दौर अस्सी के दशक में ही खत्म होने लगा। एक बार फिर लोकप्रिय मुंबइयाँ फिल्में छाने लगीं। दरअसल, हिंदी सिनेमा पर शुरू से ही पॉपुलर या लोकप्रिय फ़िल्मों का दबदबा रहा है। कला फ़िल्मों को

समानांतर सिनेमा इसलिए भी कहा गया क्योंकि वे अपनी अंतरवस्तु में लोकप्रिय फ़िल्मों के समानांतर चलती थीं। कला फ़िल्मों के कमज़ोर पड़ने के साथ एक बार फिर पॉपुलर या लोकप्रिय सिनेमा हावी हो गया और तकनीक कथानक पर भारी पड़ने लगी।

भारतीय सिनेमा में पारिवारिक फ़िल्मों की भी एक धारा लगातार चलती रही है। हलके-फुलके हास्य और एक आम आदमी के परिवार की खट्टी-मीठी कहानी पर बनी इन साफ़-सुथरी फ़िल्मों को भी खूब पसंद किया गया। लोकप्रिय और पारिवारिक फ़िल्मों की पहुँच गाँव और शहर के साधारण दर्शकों तक रहती आई है। इस तरह की फ़िल्मों में दर्शकों को बाँधने वाला कथानक, रोज़मर्रा की समस्याएँ, मधुर संगीत, पारंपरिक नृत्य और संस्कृति के कई आयाम दिखाई देते हैं। इस धारा के फ़िल्मकारों में राज कपूर, गुरुदत्त, बिमल राय, ऋषिकेश मुखर्जी, बासु चटर्जी जैसे कई नाम हैं।

लेकिन अस्सी और नब्बे के दशक में मुंबइया सिनेमा पर व्यावसायिकता का नशा इस कदर छाता गया कि फ़ॉर्मूला फ़िल्में फ़िल्मकारों के लिए मुनाफ़ा कमाने का सबसे बड़ा हथियार बन गईं। ऐसी फ़िल्मों के केंद्र में रोमांस, हिंसा, सेक्स और एक्शन को रखा जाता रहा है। कहने के लिए हर फ़िल्म में कोई न कोई सामाजिक संदेश देने की औपचारिकता निभाई जाती है लेकिन इनका मकसद महज पैसा कमाना है। ऐसी फ़िल्मों ने खासकर युवाओं के मन में बहुत गलत प्रभाव छोड़ा है।

इस तरह हम कह सकते हैं कि सिनेमा जनसंचार के एक बेहतरीन और सबसे ताकतवर माध्यमों में से एक है। इसके कई और आयाम भी हैं। यह मनोरंजन के साथ-साथ समाज को बदलने का, लोगों में नयी सोच विकसित करने का और अत्याधुनिक तकनीक के इस्तेमाल से लोगों को सपनों की दुनिया में ले जाने का माध्यम भी है।

मौजूदा समय में भारत हर साल लगभग 800 फ़िल्मों का निर्माण करता है और दुनिया का सबसे बड़ा फ़िल्म निर्माता देश बन गया है। यहाँ हिंदी के अलावा अन्य क्षेत्रीय भाषा और बोली में फ़िल्में बनती हैं और खूब चलती हैं।

21

इंटरनेट

इंटरनेट जनसंचार का सबसे नया लेकिन तेज़ी से लोकप्रिय हो रहा माध्यम है। एक ऐसा माध्यम जिसमें प्रिंट मीडिया, रेडियो, टेलीविज़न, किताब, सिनेमा यहाँ तक कि पुस्तकालय के सारे गुण मौजूद हैं। उसकी पहुँच दुनिया के कोने-कोने तक है और उसकी रफ़्तार का कोई जवाब नहीं है। उसमें सारे माध्यमों का समागम है। इंटरनेट पर आप दुनिया के किसी भी कोने से छपनेवाले अखबार या पत्रिका में छपी सामग्री पढ़ सकते हैं। रेडियो सुन सकते हैं। सिनेमा देख सकते हैं। किताब पढ़ सकते हैं और विश्वव्यापी जाल के भीतर जमा करोड़ों पन्नों में से पलभर में अपने मतलब की सामग्री खोज सकते हैं।

इंटरनेट पर पत्रिकाएँ

यह एक अंतरक्रियात्मक माध्यम है यानी आप इसमें मूक दर्शक नहीं हैं। आप सवाल-जवाब, बहस-मुबाहिसों में भाग

लेते हैं, आप चैट कर सकते हैं और मन हो तो अपना **ब्लाग** बनाकर पत्रकारिता की किसी बहस के सूत्रधार बन सकते हैं। इंटरनेट ने हमें मीडिया समागम यानी कंवर्जेंस के युग में पहुँचा दिया है और संचार की नयी संभावनाएँ जगा दी हैं। हर माध्यम में कुछ गुण और कुछ अवगुण होते हैं। इंटरनेट ने जहाँ पढ़ने-लिखने वालों के लिए, शोधकर्ताओं के लिए संभावनाओं के नए कपाट खोले हैं, हमें विश्वग्राम का सदस्य बना दिया है, वहीं इसमें कुछ खामियाँ भी हैं। पहली खामी तो यही है कि उसमें लाखों अश्लील पन्ने भर दिए गए हैं जिसका बच्चों के कोमल मन पर बुरा असर पड़ सकता है। दूसरी खामी यह है कि इसका दुरुपयोग किया जा सकता है। हाल के वर्षों में इंटरनेट के दुरुपयोग की कई घटनाएँ सामने आई हैं।

गतिविधि

क्या आपका ईमेल एकाउंट है? अगर नहीं तो अपने शिक्षक की मदद से अपना ईमेल एकाउंट खोलिए और सप्ताह में कम से कम एक बार अपने किसी परिचित, रिश्तेदार या मित्र को ईमेल भेजिए जिसमें अपना हालचाल देने के अलावा उनका हालचाल पूछिए।

जनसंचार माध्यमों का प्रभाव

आज के संचार प्रधान समाज में जनसंचार माध्यमों के बिना हम जीवन की कल्पना नहीं कर सकते। हमारी जीवनशैली पर संचार माध्यमों का ज़बरदस्त असर है। अखबार पढ़े बिना हमारी सुबह नहीं होती। जो अखबार नहीं पढ़ते, वे रोज़मर्रा की खबरों के लिए रेडियो या टी.वी. पर निर्भर रहते हैं। हमारी महानगरीय युवा पीढ़ी समाचारों और सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिए इंटरनेट का उपयोग करने लगी है। खरीद-फ़रोख्त के हमारे फ़ैसलों तक पर विज्ञापनों का असर साफ़ देखा जा सकता है। यहाँ तक कि शादी-ब्याह के लिए भी लोगों की अखबार या इंटरनेट के मैट्रिमोनियल पर निर्भरता बढ़ने लगी है। टिकट बुक कराने और टेलीफ़ोन का बिल जमा कराने से लेकर सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिए इंटरनेट का इस्तेमाल बढ़ा है। इसी तरह फ़ुरसत के क्षणों में टी.वी.-सिनेमा पर दिखाए जाने वाले धारावाहिकों और फ़िल्मों के ज़रिये हम अपना मनोरंजन करते हैं।

अपनी सेहत से लेकर धर्म-अध्यात्म तक के बारे में जानकारी जनसंचार माध्यमों से मिल रही है। आप माने या न माने, जनसंचार माध्यम आज एक उत्पाद की तरह हमारे घरों में घुस आए हैं। वे हमारी जीवनशैली को प्रभावित कर रहे हैं और हम उन्हें चाहते हुए भी रोक नहीं सकते। इसमें कोई दो राय नहीं है कि जनसंचार माध्यमों ने हमारे जीवन को और ज़्यादा सरल, हमारी क्षमताओं को और ज़्यादा समर्थ, हमारे सामाजिक जीवन को और अधिक सक्रिय बनाया है। साथ ही उन्होंने हमारे राष्ट्रीय जीवन को गतिशील और पारदर्शी

बनाया है। सूचनाओं और जानकारियों के आदान-प्रदान से लेकर लोगों को एक-दूसरे से जोड़ने तक और बहस तथा विचार-विमर्श से लेकर लोकतांत्रिक प्रक्रिया को मज़बूत बनाने तक में जनसंचार माध्यमों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

आज राष्ट्रीय स्तर पर हमारी राजनीति और हमारी अर्थनीति तक जनसंचार माध्यमों से प्रभावित होती है। खासकर आपातकाल के बाद जनसंचार माध्यमों की ताकत लगातार बढ़ी है और राष्ट्रीय जीवन में उनका हस्तक्षेप भी बढ़ा है। वे न सिर्फ़ सरकार के कामकाज की निगरानी करते हैं बल्कि सरकार के गलत फ़ैसलों के खिलाफ़ आवाज़ भी उठाते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर फैलते

जनसंचार माध्यम–संभावनाएँ और खतरे

सामाजिक विकास और आधुनिकीकरण के संदर्भ में यदि संचार के इन प्रकारों पर हम विचार करें तो इस क्षेत्र में उसकी कई संभावनाएँ स्पष्ट होंगी। संचार-साधनों को उचित दिशा देकर नए मूल्य प्रतिष्ठित कराए जा सकते हैं, समाज को परंपरा से प्रगति की ओर मोड़ा जा सकता है। उनकी सहायता से जन-मानस को आधुनिकीकरण के लक्ष्यों और कार्यक्रमों को स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। जनसंचार के साधन उनके सम्मुख नए जीवन का एक आकर्षक विकल्प प्रस्तुत कर उन्हें जड़ता का मार्ग छोड़ सक्रियता की राह अपनाने की प्रेरणा दे सकते हैं। जाग्रत जनमत प्रगति की अनिवार्य शर्त है और इसे तैयार करने में जनसंचार के साधनों की बड़ी ही महत्त्वपूर्ण भूमिका है। मनोरंजन के साथ-साथ विकास का संदेश बड़े सार्थक ढंग से जनसाधारण तक पहुँचाया जा सकता है।

इन प्रभावशाली संभावनाओं के साथ संचार की सीमाओं पर ध्यान रखना भी आवश्यक है। संचार एक अस्त्र है, उसका सदुपयोग भी हो सकता है, दुरुपयोग भी। मूल प्रश्न है–यह अस्त्र किसके हाथ में है? क्या उनमें इन साधनों का कल्पनाशील और सार्थक उपयोग करने की कितनी क्षमता है? दूसरे शब्दों में इन साधनों का उपयोग कौन, किस उद्देश्य से और कितनी क्षमता से कर रहा है? कुछ हाथों में यदि संचार प्रगति का प्रेरक बन सकता है, तो दूसरे हाथ उसे परंपरा का पोषक बना सकते हैं। उनका उपयोग देश का ध्यान महत्त्वपूर्ण समस्याओं से हटाकर अर्थहीन प्रश्नों में उलझाए रखने के लिए भी किया जा सकता है। कभी-कभी संचार प्रगति का स्थान ले लेता है, वास्तविक प्रगति कम होती है। पर उसे और काल्पनिक प्रगति को संचार के साधन इतने आकर्षक ढंग से प्रस्तुत करते हैं कि जनता शब्दों के मोहक इंद्रजाल में दिशा-भ्रमित हो जाती है। इसके विपरीत अयोग्य संचारकर्ता आशायुक्त संदेशों को कल्पनाहीन तथा अनाकर्षक ढंग से प्रस्तुत कर उनकी हत्या कर सकते हैं। संचार वस्तुतः दुधारी अस्त्र है, जिसका उपयोग बड़ी ही सावधानी से होना चाहिए।

(प्रो. श्यामाचरण दुबे के भाषण पर आधारित पुस्तिका *संचार और विकास*, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नयी दिल्ली से साभार)।

भ्रष्टाचार, मानवाधिकार-हनन और सांप्रदायिकता जैसे मामलों को जनसंचार माध्यमों ने लगातार उठाया है और लोगों को जागरूक बनाने की कोशिश ही है। हाल के वर्षों में स्टिंग आपरेशन के ज़रिये सामने आया 'तहलका कांड' हो या 'ऑपरेशन दुर्योधन' या 'चक्रव्यूह', सबने यही साबित किया है कि यदि चाहे तो जनसंचार माध्यम सत्ता के शिखर को भी हिला सकते हैं।

लेकिन जनसंचार माध्यमों के कुछ नकारात्मक प्रभाव भी हैं। अगर सावधानी से इस्तेमाल न किया जाए तो लोगों पर उनका बुरा प्रभाव भी पड़ता है। सबसे पहली बात तो यह है कि सिनेमा और टी.वी. जैसे जनसंचार माध्यम काल्पनिक और लुभावनी कथाओं के ज़रिये लोगों को एक नकली दुनिया में पहुँचा देते हैं जिसका वास्तविक जीवन से कोई संबंध नहीं होता है। इस कारण लोग उसके वैसे ही व्यसनी बन जाते हैं, जैसे किसी मादक पदार्थ के। नतीजा यह होता है कि वे अपनी वास्तविक समस्याओं का समाधान काल्पनिक दुनिया में ढूँढ़ने लगते हैं। इससे लोगों में पलायनवादी प्रवृत्ति पैदा होती है।

जनसंचार माध्यमों खासकर सिनेमा पर यह आरोप भी लगता रहा है कि उन्होंने समाज में हिंसा, अश्लीलता और असामाजिक व्यवहार को प्रोत्साहित करने में अगुआ की भूमिका निभाई है। हालाँकि, विशेषज्ञों का यह मानना है कि जनसंचार माध्यमों का लोगों पर उतना वास्तविक प्रभाव नहीं पड़ता जितना कि उसके बारे में समझा जाता है। लेकिन जनसंचार माध्यमों के प्रभाव को लेकर कुछ धारणाएँ इस प्रकार हैं—जनसंचार माध्यम लोगों के व्यवहार और आदतों में परिवर्तन के बजाए उनमें थोड़ा-बहुत फेरबदल और उन्हें और ज़्यादा मज़बूत करने का काम करते हैं।

इसी तरह यह माना जाता है कि जनसंचार माध्यमों का उन लोगों पर अधिक प्रभाव पड़ता है जो किसी चीज़ के प्रति प्रतिबद्ध नहीं हैं या अनिश्चय में हैं। जनसंचार माध्यमों का प्रभाव तब और अधिक बढ़ जाता है जब लगभग सारे माध्यम एक ही समय में एक ही बात कहने लगते हैं। साथ ही जब वे कई मुद्दों के बजाय किसी एक मुद्दे को बहुत अधिक उछालने लगते हैं और बार-बार उन्हीं संदेशों, छवियों, विचारों को दोहराने लगते हैं, तब भी उनका गहरा प्रभाव पड़ता है।

आप अकसर देखते होंगे कि अखबारों और टेलीविज़न चैनलों में किसी खास खबर या मुद्दे को ज़रूरत से ज़्यादा उछाला जाता है। जबकि कुछ अन्य मुद्दों और खबरों को बिलकुल जगह नहीं मिलती है। यह देखा गया है कि अकसर उन मुद्दों और सवालों को अधिक उछाला जाता है जिनसे समाज के ताकतवर वर्गों के हित जुड़े हुए हैं या जो निहायत सतही और अनावश्यक हैं। इसके साथ ही अकसर उन मुद्दों और सवालों को नज़रअंदाज किया जाता है जिनका संबंध व्यापक जनसमुदाय खासकर समाज के कमज़ोर वर्गों से होता है। पिछले एक-डेढ़ दशक में भारत में कई ऐसे मौके आए जब जनसंचार माध्यमों ने उन मुद्दों को खूब हवा दी जो कहीं न कहीं बहुसंख्यकों या समाज के ताकतवर वर्गों के हितों से जुड़े हुए थे।

जनसंचार माध्यमों के प्रभाव के संदर्भ में यह सवाल भी बहुत महत्त्वपूर्ण है कि उन पर किसका नियंत्रण है? यह सवाल इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि जनसंचार माध्यमों का संबंध सार्वजनिक हित से जुड़ा हुआ है। उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे सार्वजनिक हित को आगे बढ़ाएँगे, लेकिन यह एक तथ्य है कि अधिकांश जनसंचार माध्यमों पर कंपनियों या व्यक्तियों का स्वामित्व है।

वे उन्हें सार्वजनिक हित से ज़्यादा अपने व्यावसायिक मुनाफ़े को ध्यान में रखकर संचालित करते हैं। इसका सीधा असर जनसंचार माध्यम की अंतरवस्तु पर पड़ता है। कई मौकों पर विज्ञापनदाताओं के हितों को प्राथमिकता दी जाती है। इसके लिए तथ्यों के साथ तोड़-मरोड़ और सचाई को छुपाने की कोशिश की जाती है।

मीडिया के ज़रिये लोगों को एक खास तरह की जीवनशैली में भी ढालने की कोशिश की जाती है। बहुतेरे विश्लेषकों का मानना है कि उपभोक्तावाद के विकास और फैलाव में जनसंचार माध्यमों की सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका है। फ़ैशन से लेकर खानपान तक में लोगों की रुचियों और आदतों को बदलने में जनसंचार माध्यमों की भूमिका देखी जा सकती है। खासकर बच्चों और युवाओं पर जनसंचार माध्यमों के ज़रिये पेश की जा रही आधुनिक उपभोक्तावादी जीवनशैली का गहरा प्रभाव पड़ रहा है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि जनसंचार माध्यमों ने जहाँ एक ओर लोगों को सचेत और जागरूक बनाने में अहम भूमिका निभाई है, वहीं उसके नकारात्मक प्रभावों से भी इनकार नहीं किया जा सकता। यह भी स्पष्ट है कि जनसंचार माध्यमों के बिना आज सामाजिक जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। ऐसे में यह ज़रूरी है कि हम जनसंचार माध्यमों से प्रसारित और प्रकाशित सामग्री को निष्क्रिय तरीके से ग्रहण करने के बजाए उसे सक्रिय तरीके से सोच-विचार करके और आलोचनात्मक विश्लेषण के बाद ही स्वीकार करें। एक जागरूक पाठक, दर्शक और श्रोता के बतौर हमें अपनी आँखें, कान और दिमाग हमेशा खुले रखने चाहिए।

लिपि से मुद्रण तक का सफ़र

लिपि का आविष्कार संचार के क्षेत्र में दूसरी बड़ी क्रांति थी। ध्वनि पर अवलंबित लिपि के विकास के पूर्व मानव ने भाषा के अतिरिक्त अभिव्यक्ति के कई अन्य माध्यमों के प्रयोग किए थे। चित्रलिपि या पिक्टोग्राफ़ी इसी तरह का एक प्रयोग था। यह लेखन विधि चित्रों की एक श्रृंखला द्वारा किसी घटना या स्थिति का स्वरूप प्रस्तुत करती थी। चित्रलिपि भाषा से जुड़ी नहीं होती, इसलिए उसकी मौखिक अभिव्यक्ति किसी भी भाषा में संभव होती है। आवश्यक होता है, चित्र को समझना। प्रागैतिहासिक मानव ने संसार के विभिन्न भागों में इस लेखन शैली का प्रयोग किया। पिक्टोग्राफ़ी के कुछ रूपों ने विकसित होकर ऑडियोग्राफ़ी का रूप लिया। यह चित्रलिपि का संवर्धित रूप था और उसमें स्थितियों और घटनाओं के प्रस्तुतीकरण के साथ-साथ अमूर्त विचारों की अभिव्यक्ति की असीमित शक्ति भी थी। प्रतीक अब केवल वस्तुओं और स्थितियों का चित्रण नहीं करते थे, वे उनसे संबंधित विचारों और संबंधों को भी अभिव्यक्त करते थे। चित्रलिपि में छोटा-सा वृत्त सूर्य का प्रतिनिधित्व करता था, ऑडियोग्राफ़ी में, संदर्भ के अनुसार, उससे ताप, प्रकाश और दिन का बोध भी होने लगा। इस लिपि में भी प्रस्तुत प्रतीक और उसके बोले हुए में प्रत्यक्ष संबंध नहीं था, चित्रलिपि की तरह यह भी भाषा-संबद्ध नहीं थी। ध्वनि पर आधारित लिपियों के विकास के पहले कई संक्रमणकालीन लिपियाँ आईं, जो मूलतः ऑडियोग्राफ़ी थीं, पर जिनमें धीरे-धीरे ध्वनि आधारित तत्त्व सम्मिलित हो रहे थे। प्राचीन मेसोपोटामिया और कीट की तथा हिट्टीआइट

लिपियाँ इस वर्ग की हैं। लिपियों के विकास के अगले चरण और भी महत्त्वपूर्ण थे। एक और 'लोगोग्राफ़ी' का विकास हुआ, जिसमें प्रत्येक शब्द के लिए एक स्वतंत्र चिह्न था। इस लिपि को शब्द लेखन भी कह सकते हैं। दूसरी धारा थी ध्वनियों के आधार पर लिपियों के विकास की, जिसका चरम उत्कर्ष अक्षरों के आविष्कार में हुआ। इन लिपियों ने लेखन के स्वतंत्र रूप का अंत कर उसे केवल भाषा की अभिव्यक्ति का एक माध्यम बना दिया।

इस क्रांति के प्रभाव बड़े व्यापक थे। लिपिविहीन भाषाओं ने ज्ञान-विज्ञान की परंपरा का वहन किया था, उनमें साहित्य के विभिन्न रूपों की रचना हुई थी और सूक्ष्म दार्शनिक चिंतन भी किया गया था। उस साहित्य को स्थायित्व देने में कठिनाइयाँ थीं। लिपि ने उन्हें बड़ी मात्रा में दूर किया। पत्तों, मिट्टी की पतली ईंटों, पत्थर, चमड़े, वस्त्र आदि पर लिखकर मनुष्य ने अपने संचित ज्ञान को आने वाली पीढ़ियों के लिए बचाने का यत्न किया। लिपि एक रहस्यमय और चमत्कारी शक्ति थी, जिस पर अधिकार रखने वाले थोड़े-से लोगों को समाज में ऊँचा स्थान मिला। इस तरह ज्ञान एक छोटे-से वर्ग के हाथ में आ गया, जिसने उसका उपयोग बहुत कुछ अपने हितों में किया। यह दूसरी बात है कि आगे चल कर इसी ज्ञान का व्यापक प्रसार हुआ।

यह स्थिति संसार की चौथी क्रांति ने बदली जिसे कागज़ और मुद्रण की संयुक्त क्रांति मानना उचित होगा। कागज़ का आविष्कार मुद्रण के आविष्कार के बहुत पहले हो गया था, पर क्रांतिकारी सामाजिक परिणाम उसी समय स्पष्ट हुए जब कागज़ और छपाई का मिलन हुआ। कागज़ के आविष्कार का श्रेय चीन के साईं लुन को दिया जाता है, जिसने ईसवी सन् 105 में वृक्षों की कूटी हुई छाल, सन, पुराने कपड़े और मछली पकड़ने के पुराने जालों के उपयोग से कागज़ बनाया। पाँच सौ वर्षों तक यह शिल्प चीन में ही रहा। सातवीं सदी के आरंभ में यह कला जापान पहुँची और बौद्ध भिक्षुओं ने मलबरी वृक्ष की छाल से कागज़ बनाना आरंभ किया। इसी देश में सन् 770 में साँचों से मुद्रण आरंभ हुआ। साम्राज्ञी शोटोकु की आज्ञा से दस लाख प्रार्थना पत्र छापे गए। इस योजना को पूरा करने में छह वर्ष का समय लगा। ज्ञान को सर्वसुलभ बनाने की क्रिया का आरंभ इसी प्रकार के प्रयत्नों से हुआ। धीरे-धीरे छपाई के प्राथमिक रूप, संसार के दूसरे भागों में भी पहुँचे। कागज़ बनाने की कला वहाँ पहले ही जा चुकी थी। चल-टाइप के आविष्कार ने मुद्रण को नया स्वरूप दिया। इसका श्रेय जर्मनी के गुटेनबर्ग को दिया जाता है, जिसने सन् 1400 और 1468 के बीच चल-टाइप का आविष्कार किया। उसकी 428 पंक्तियों की बाइबिल–गुटेनबर्ग बाइबिल–को कई विद्वान दुनिया की पहली छपी हुई पुस्तक मानते हैं। वैसे यह दावा दूसरी पुस्तकों के लिए भी किया गया है। संभवत: सन् 1300 के आसपास छपी एक कोरियाई धार्मिक पुस्तक अब तक उपलब्ध पुस्तकों में सबसे पुरानी है। इस पुस्तक में चल-टाइप का उपयोग नहीं हुआ था।

मुद्रण के आविष्कार से पुस्तकों और समाचार पत्रों के प्रकाशन का रास्ता खुला। इस तरह ज्ञान के प्रसार और स्थायित्व की संभावनाएँ बढ़ीं। ज्ञान अब तक एक छोटे-से वर्ग के हाथ में था। पुस्तकों और समाचारपत्रों ने उसका दायरा बढ़ाया और वह क्रमश: सर्वसुलभ होने लगा। मुद्रण की क्रांति विचारों की क्रांति की शुरुआत थी।

(प्रो. श्यामाचरण दुबे के भाषण पर आधारित पुस्तिका *संचार और विकास*, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नयी दिल्ली से साभार)

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. इस पाठ में विभिन्न लोक-माध्यमों की चर्चा हुई है। आप पता लगाइए कि वे कौन-कौन-से क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं? अपने क्षेत्र में प्रचलित किसी लोकनाट्य या लोक माध्यम के किसी प्रसंग के बारे में जानकारी हासिल कर उसकी प्रस्तुति के खास अंदाज़ के बारे में भी लिखें।

2. आज़ादी के बाद भी हमारे देश के सामने बहुत सारी चुनौतियाँ हैं। आप समाचारपत्रों को उनके प्रति किस हद तक संवेदनशील पाते हैं?

3. टी.वी. के निजी चैनल अपनी व्यावसायिक सफलता के लिए कौन-कौन-से तरीके अपनाते हैं? टी.वी. के कार्यक्रमों से उदाहरण देकर समझाइए।

4. इंटरनेट पत्रकारिता ने दुनिया को किस प्रकार समेट लिया है, उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

5. किन्हीं दो हिंदी पत्रिकाओं के समान अंकों को (समान अवधि के) पढ़िए और उनमें निम्न बिंदुओ के आधार पर तुलना कीजिए–
   - आवरण पृष्ठ
   - अंदर के पृष्ठों की साज-सज्जा
   - सूचनाओं का क्रम
   - भाषा-शैली

6. निजी चैनलों पर सरकारी नियंत्रण होना चाहिए अथवा नहीं? पक्ष-विपक्ष में तर्क प्रस्तुत कीजिए।

7. नीचे कुछ कथन दिए गए हैं। उनके सामने ✓ या × का निशान लगाते हुए उसकी पुष्टि के लिए उदाहरण भी दीजिए–

   (क) संचार माध्यम केवल मनोरंजन के साधन हैं। ☐

   (ख) केवल तकनीकी विकास के कारण संचार संभव हुआ, इससे पहले संचार संभव नहीं था। ☐

   (ग) समाचारपत्र और पत्रिकाएँ इतने सशक्त संचार माध्यम हैं कि वे राष्ट्र का स्वरूप बदल सकते हैं। ☐

   (घ) टेलीविज़न सबसे प्रभावशाली एवं सशक्त संचार माध्यम है। ☐

   (ङ) इंटरनेट सभी संचार माध्यमों का मिला-जुला रूप या समागम है। ☐

   (च) कई बार संचार माध्यमों का नकारात्मक प्रभाव भी पड़ता है। ☐

© NCERT not to be republished

11071CH02

2

पत्रकारिता के विविध आयाम

इस पाठ में...

- **पत्रकारिता**
  पत्रकारिता क्या है?
- **समाचार**
  समाचार की कुछ परिभाषाएँ
  समाचार क्या है?
- **समाचार के तत्त्व**
- **संपादन**
  संपादन के सिद्धांत
- **पत्रकारिता के अन्य आयाम**
  संपादकीय
  फ़ोटो पत्रकारिता
  कार्टून कोना
  रेखांकन और कार्टोग्राफ़ी
- **पत्रकारिता के प्रमुख प्रकार**
  खोजपरक पत्रकारिता
  विशेषीकृत पत्रकारिता
  वॉचडॉग पत्रकारिता
  एडवोकेसी पत्रकारिता
  वैकल्पिक पत्रकारिता
- **समाचार माध्यमों में मौजूदा रुझान**

माध्यम ही संदेश है।

–मार्शल मैकलुहान

कनाडा के मशहूर संचारशास्त्री

एक नज़र में...

पत्रकारिता का संबंध सूचनाओं को संकलित और संपादित कर आम पाठकों तक पहुँचाने से है। लेकिन हर सूचना समाचार नहीं है। पत्रकार कुछ ही घटनाओं, समस्याओं और विचारों को समाचार के रूप में प्रस्तुत करते हैं। किसी घटना के समाचार बनने के लिए उसमें नवीनता, जनरुचि, निकटता, प्रभाव जैसे तत्त्वों का होना ज़रूरी है।

समाचारों के संपादन में तथ्यपरकता, वस्तुपरकता, निष्पक्षता और संतुलन जैसे सिद्धांतों का ध्यान रखना पड़ता है। इन सिद्धांतों का ध्यान रखकर ही पत्रकारिता अपनी विश्वसनीयता अर्जित करती है। लेकिन पत्रकारिता का संबंध केवल समाचारों से ही नहीं है। उसमें संपादकीय, लेख, कार्टून और फ़ोटो भी प्रकाशित होते हैं। पत्रकारिता के कई प्रकार हैं। उनमें खोजपरक पत्रकारिता, वॉचडॉग पत्रकारिता और एडवोकेसी पत्रकारिता प्रमुख हैं।

© NCERT not to be republished

पत्रकारिता

अपने रोज़मर्रा के जीवन के एक आम दिन की कल्पना कीजिए। दो लोग आसपास रहते हैं और लगभग रोज़ मिलते हैं। कभी बाज़ार में, कभी राह चलते और कभी एक-दूसरे के घर पर। भेंट से पहले के कुछ मिनट की उनकी बातचीत पर ध्यान दीजिए। हर दिन उनका पहला सवाल क्या होता है? 'क्या हालचाल है?' या 'कैसे हैं?' या फिर 'क्या समाचार है?' रोज़मर्रा के इन सहज प्रश्नों में ऊपरी तौर पर कोई विशेष बात नहीं दिखाई देती। इन प्रश्नों को ध्यान से सुनिए और सोचिए। इसमें आपको एक इच्छा दिखाई देगी। नया और ताज़ा समाचार जानने की। पिछले कुछ घंटे का हाल जानने की। या बीती रात की खबरें। कल से आज के बीच या कुछ घंटों के अंतराल में आए बदलाव की जानकारी। यानी हम अपने मित्रों, रिश्तेदारों और सहकर्मियों से हमेशा उनका कुशलक्षेम या उनके आसपास की घटनाओं के बारे में जानना चाहते हैं।

कहने की ज़रूरत नहीं है कि अपने आसपास की चीज़ों, घटनाओं और लोगों के बारे में ताज़ा जानकारी रखना मनुष्य का सहज स्वभाव है। उसमें जिज्ञासा का भाव बहुत प्रबल होता है। यही जिज्ञासा समाचार और व्यापक अर्थ में पत्रकारिता का मूल तत्त्व है। जिज्ञासा नहीं रहेगी तो समाचार की भी ज़रूरत नहीं रहेगी। पत्रकारिता का विकास इसी सहज जिज्ञासा को शांत करने की कोशिश के रूप में हुआ। वह आज भी इसी मूल सिद्धांत के आधार पर काम करती है।

पत्रकारिता क्या है?

हम सूचनाएँ या समाचार क्यों जानना चाहते हैं? दरअसल, सूचनाएँ अगला कदम तय करने में हमारी सहायता करती हैं। इसी तरह हम अपने पास-पड़ोस, शहर, राज्य और देश-दुनिया के बारे में जानना चाहते हैं। ये सूचनाएँ हमारे दैनिक जीवन के साथ-साथ पूरे समाज को प्रभावित करती हैं। आज देश-दुनिया में जो कुछ हो रहा है, उसकी अधिकांश जानकारी हमें समाचार माध्यमों से मिलती है। सच तो यह है कि हमारे प्रत्यक्ष अनुभव से बाहर की दुनिया के बारे में हमें अधिकांश जानकारी समाचार माध्यमों द्वारा दिए जाने वाले समाचारों से ही मिलती है।

समाचार

हम हर दिन समाचारपत्र पढ़ते हैं या टेलीविज़न और रेडियो पर समाचार सुनते हैं या फिर इंटरनेट पर समाचार देखते और पढ़ते हैं। इन विभिन्न समाचार माध्यमों के ज़रिये दुनियाभर के समाचार हमारे घरों में पहुँचते हैं। समाचार संगठनों में काम

गतिविधि

अपने शहर या पास के शहर से प्रकाशित होने वाले दो समाचारपत्रों के मुखपृष्ठ को ध्यान से पढ़िए। उन दोनों समाचारपत्रों के मुखपृष्ठ पर प्रकाशित समाचारों की

अलग-अलग सूची बनाइए। इसके बाद देखिए कि कौन-से समाचार दोनों समाचारपत्रों में छपे हैं और कौन-से समाचार ऐसे हैं जो दोनों समाचारपत्रों में अलग-अलग हैं? ऐसा क्यों है, इस पर अपने शिक्षक के साथ चर्चा कीजिए।

© NCERT not to be republished

करने वाले पत्रकार देश-दुनिया में घटने वाली घटनाओं को समाचार के रूप में परिवर्तित करके हम तक पहुँचाते हैं। इसके लिए वे रोज़ सूचनाओं का संकलन करते हैं और उन्हें समाचार के प्रारूप में ढालकर प्रस्तुत करते हैं। इस पूरी प्रक्रिया को ही पत्रकारिता कहते हैं।

समाचार की कुछ परिभाषाएँ

- प्रेरक और उत्तेजित कर देने वाली हर सूचना समाचार है।
- समय पर दी जाने वाली हर सूचना समाचार का रूप धारण कर लेती है।
- किसी घटना की रिपोर्ट ही समाचार है।
- समाचार जल्दी में लिखा गया इतिहास है?

समाचार क्या है?

इतना तो आप जान ही गए होंगे कि हर सूचना समाचार नहीं है यानी हर सूचना समाचार माध्यमों में प्रकाशित या प्रसारित नहीं होती है। ऐसा क्यों हैं? आखिर हर घटना, समाचार क्यों नहीं है? वह हर बात समाचार क्यों नहीं है जिसके बारे में हमें पहले जानकारी नहीं थी? क्या एक-दूसरे का हालचाल और खोज-खबर लेना समाचार नहीं है? क्या वह सब समाचार नहीं है जिसके बारे में लोग जानना चाहते हैं या जिसके बारे में लोगों को जानना चाहिए? या फिर समाचार वही है जिसे एक पत्रकार समाचार मानता है? निश्चय ही, मित्रों, रिश्तेदारों और सहकर्मियों से आपसी कुशलक्षेम और हालचाल का आदान-प्रदान समाचार माध्यमों के लिए समाचार नहीं है। इसकी वजह यह है कि आपसी कुशलक्षेम हमारा व्यक्तिगत मामला है। हमारे नज़दीकी लोगों के अलावा अन्य किसी की उसमें दिलचस्पी नहीं होगी।

दरअसल, समाचार माध्यम कुछ लोगों के लिए नहीं बल्कि अपने हज़ारों-लाखों पाठकों, श्रोताओं और दर्शकों के लिए काम करते हैं। स्वाभाविक है कि वे समाचार के रूप में उन्हीं घटनाओं, मुद्दों और समस्याओं को चुनते हैं जिन्हें जानने में अधिक से अधिक लोगों की रुचि होती है। यहाँ हमारा आशय उस तरह के समाचारों से है जिनका किसी न किसी रूप में सार्वजनिक महत्त्व होता है। ऐसे समाचार अपने समय के विचार, घटना और समस्याओं के बारे में लिखे जाते हैं। ये समाचार ऐसी सम-सामयिक घटनाओं, समस्याओं और विचारों पर आधारित होते हैं जिन्हें जानने की अधिक से अधिक लोगों में दिलचस्पी होती है और जिनका अधिक से अधिक लोगों के जीवन पर प्रभाव पड़ता है।

इसके बावजूद ऐसा कोई फ़ार्मूला नहीं है जिसके आधार पर यह कहा जाए कि यह घटना समाचार है और यह नहीं। पत्रकार और समाचार संगठन ही किसी भी समाचार के चयन, आकार और उसकी प्रस्तुति का निर्धारण करते हैं। यही कारण है कि समाचारपत्रों और समाचार चैनलों में समाचारों के चयन और प्रस्तुति में इतना फ़र्क दिखाई पड़ता है। एक समाचारपत्र में एक समाचार मुख्य समाचार (लीड स्टोरी) हो सकता है और किसी अन्य समाचारपत्र में वही समाचार भीतर के पृष्ठों पर कहीं एक कॉलम का समाचार हो सकता है। एक टेलीविज़न चैनल के लिए अमिताभ बच्चन के जन्मदिन का समाचार पहला मुख्य समाचार हो सकता है तो संभव है कि कोई अन्य चैनल इराक में युद्ध को या आर्थिक विकास को लेकर दिए गए प्रधानमंत्री के बयान को अपनी मुख्य खबर बनाए।

© NCERT not to be republished

लेकिन विभिन्नताओं का अर्थ यह नहीं है कि समाचार की कोई परिभाषा ही नहीं है। किसी घटना, समस्या और विचार में कुछ ऐसे तत्त्व होते हैं जिनके होने पर उसके समाचार बनने की संभावना बढ़ जाती है। उन तत्त्वों को लेकर समाचार माध्यमों में एक आम सहमति है। इस चर्चा के उपरांत अब हम समाचार को इस तरह परिभाषित कर सकते हैं–

समाचार किसी भी ऐसी ताज़ा घटना, विचार या समस्या की रिपोर्ट है जिसमें अधिक से अधिक लोगों की रुचि हो और जिसका अधिक से अधिक लोगों पर प्रभाव पड़ रहा हो।

दरअसल, समाचार माध्यमों के उपभोक्ता यानी पाठक, दर्शक और श्रोता अपने मूल्यों, रुचियों और दृष्टिकोणों में बहुत विविधताएँ और भिन्नताएँ लिए होते हैं। इन्हीं के अनुरूप उनकी सूचना प्राथमिकताएँ भी निर्धारित होती हैं। परंपरागत पत्रकारिता के मानदंडों के अनुसार समाचार मीडिया को लोगों की सूचनाओं की *ज़रूरत* और *माँग* के बीच संतुलन कायम करना पड़ता है। कुछ घटनाएँ ऐसी होती हैं जिनके बारे में हमें जानकारी होना आवश्यक है और कुछ घटनाएँ ऐसी भी होती हैं जिनके बारे में जानकारी न भी हो तो कोई फ़र्क नहीं पड़ता, अलबत्ता उन्हें पढ़कर या सुनकर या देखकर हमें मज़ा आता है। इन दिनों समाचार माध्यम में मज़ेदार और मनोरंजक समाचारों को प्राथमिकता देने का रुझान प्रबल हुआ है।

समाचार के तत्त्व

लोग आमतौर पर अनेक काम मिलजुल कर करते हैं। सुख-दुख की घड़ी में वे साथ होते हैं। मेलों और उत्सवों में वे साथ-साथ होते हैं। दुर्घटनाओं और विपदाओं के समय वे साथ होते हैं। इन सबको हम घटनाओं की श्रेणी में रख सकते हैं। फिर लोगों को अनेक छोटी-बड़ी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। गाँव, कस्बे या शहर में बिजली-पानी के न होने से लेकर बेरोज़गारी, महंगाई और आर्थिक मंदी जैसी समस्याओं से उन्हें जूझना होता है। इसी तरह लोग अपने समय की घटनाओं, रुझानों और प्रक्रियाओं पर सोचते हैं। उन पर विचार करते हैं और इन सब को लेकर कुछ प्रतिक्रिया करते हैं या कर सकते हैं। इस तरह की विचार मंथन की प्रक्रिया के केंद्र में घटनाओं और समस्याओं के कारणों, प्रभाव और परिणामों का संदर्भ भी रहता है। लेकिन कोई घटना, समस्या या विचार कब और कैसे समाचार बनता है? आखिर वे कौन-से कारक हैं जिनके होने पर कोई घटना खबर बन जाती है?

सामान्य तौर पर किसी भी घटना, विचार और समस्या से जब समाज के बड़े तबके का सरोकार हो तो हम यह कह सकते हैं कि यह समाचार बनने के योग्य है। लेकिन किसी घटना, विचार और समस्या के समाचार बनने की संभावना तब बढ़ जाती है, जब उनमें निम्नलिखित में से कुछ अधिकांश या सभी तत्त्व शामिल हों–

- नवीनता
- निकटता
- प्रभाव

- जनरुचि
- टकराव या संघर्ष
- महत्त्वपूर्ण लोग
- उपयोगी जानकारियाँ
- अनोखापन
- पाठक वर्ग
- नीतिगत ढाँचा

आइए, अब हम इन तत्त्वों या कारकों पर एक-एक कर विचार करते हैं और यह समझने की कोशिश करते हैं कि किसी घटना, समस्या या विचार के समाचार बनने में इनकी कितनी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

नवीनता

किसी भी घटना, विचार या समस्या के समाचार बनने के लिए यह बहुत ज़रूरी है कि वह नया यानी ताज़ा हो। कहा भी जाता है 'न्यू' है इसलिए 'न्यूज़' है। घटना जितनी ताज़ा होगी, उसके समाचार बनने की संभावना उतनी ही बढ़ जाती है। तात्पर्य यह है कि समाचार वही है जो ताज़ा घटना के बारे में जानकारी देता है। एक घटना को एक समाचार के रूप में किसी समाचार संगठन में स्थान पाने के लिए, इसका सही समय पर सही स्थान यानी समाचार कक्ष में पहुँचना आवश्यक है। मोटे तौर पर कह सकते हैं कि उसका समयानुकूल होना ज़रूरी है। एक दैनिक समाचारपत्र के लिए आमतौर पर पिछले 24 घंटों की घटनाएँ समाचार होती हैं। एक चौबीस घंटे के टेलीविज़न और रेडियो चैनल के लिए तो समाचार जिस तेज़ी से आते हैं, उसी तेज़ी से बासी भी होते चले जाते हैं।

एक दैनिक समाचारपत्र के लिए वे घटनाएँ सामयिक हैं जो कल घटित हुई हैं। आमतौर पर एक दैनिक समाचारपत्र की अपनी एक **डेडलाइन** (समय-सीमा) होती है जब तक कि समाचारों को वह कवर कर पाता है। मसलन अगर एक प्रात:कालीन दैनिक समाचारपत्र रात 12 बजे तक के समाचार कवर करता है तो अगले दिन के संस्करण के लिए 12 बजे रात से पहले के चौबीस घंटे के समाचार सामयिक होंगे।

गतिविधि

आपके शहर या कस्बे के सामाजिक जीवन, संस्कृति और मानवीय संबंधों आदि में पिछले दो वर्षों में क्या परिवर्तन आए हैं, यह जानने के लिए ऐसे पाँच वरिष्ठ लोगों से बातचीत कीजिए जो पिछले दो-तीन वर्षों से उसी शहर या कस्बे में एक शिक्षक, दुकानदार, वकील, डॉक्टर और सरकारी कर्मचारी के रूप में काम कर रहे हों। एक प्रश्नावली बनाकर उनसे इंटरव्यू कीजिए। उनसे यह जानने की कोशिश कीजिए कि पिछले दो वर्षों में आपका यह शहर या कस्बा कितना बदल गया है? इस बदलाव का वहाँ के सामाजिक जीवन और संबंधों पर क्या असर पड़ा है? इन बदलावों के क्या कारण हैं? उनसे मिली जानकारी के आधार पर 350 शब्दों की एक रिपोर्ट तैयार कीजिए। क्या यह एक दिलचस्प समाचार हो सकता है? इस पर अपने शिक्षक और साथी छात्रों के साथ चर्चा कीजिए।

लेकिन अगर द्वितीय विश्वयुद्ध या ऐसी किसी अन्य ऐतिहासिक घटना के बारे में आज भी कोई नयी जानकारी मिलती है जिसके बारे में हमारे पाठकों को पहले जानकारी नहीं थी तो निश्चय ही यह उनके लिए समाचार है। दुनिया के अनेक स्थानों पर बहुत-सी ऐसी चीज़ें होती हैं जो वर्षों से मौजूद हैं लेकिन यह किसी अन्य देश के लिए कोई नयी बात हो सकती है और निश्चय ही समाचार बन सकती है।

कुछ ऐसी घटनाएँ भी होती हैं जो रातोंरात घटित नहीं होती बल्कि जिन्हें घटने में वर्षों लग जाते हैं। मसलन किसी गाँव में पिछले 20 वर्षों में लोगों की जीवनशैली में क्या-क्या परिवर्तन आए और इन परिवर्तनों के क्या कारण थे—यह जानकारी निश्चय ही एक समाचार है। लेकिन यह एक ऐसी समाचारीय घटना है, जिसे घटने में बीस वर्ष लगे। स्पष्ट है कि घटना का ताज़ा होना ही ज़रूरी नहीं है। नवीनता के तत्त्व न होने पर भी उसके समाचार बनने की संभावना बढ़ जाती है।

निकटता

किसी भी समाचार संगठन में किसी समाचार के महत्त्व का मूल्यांकन अर्थात उसे समाचारपत्र या बुलेटिन में शामिल किया जाएगा या नहीं, इसका निर्धारण इस आधार पर भी किया जाता है कि वह घटना उसके कवरेज क्षेत्र और पाठक/दर्शक/श्रोता समूह के कितने करीब हुई है? हर घटना का समाचारीय महत्त्व काफ़ी हद तक उसकी स्थानीयता से भी निर्धारित होता है। ज़ाहिर है सबसे करीब वाला ही सबसे प्रिय भी होता है। यह मानव स्वभाव है। स्वाभाविक है कि लोग उन घटनाओं के बारे में जानने के लिए अधिक उत्सुक होते हैं जो उनके करीब होती हैं। लेकिन यह निकटता भौगोलिक नज़दीकी के साथ-साथ सामाजिक-सांस्कृतिक नज़दीकी से भी जुड़ी हुई है। यही कारण है कि हम अपने शहर और आसपास के क्षेत्रों के अलावा अपने राज्य और देश के अंदर क्या हुआ, यह जानने को उत्सुक रहते हैं। हम अपने देशवासियों से सामाजिक-सांस्कृतिक रूप से जुड़े हुए हैं, चाहे वे हमसे सैकड़ों मील दूर बैठे हों।

यही नहीं, इस सांस्कृतिक निकटता के कारण हम विदेशों में बसे भारतीयों से जुड़ी घटनाओं को भी जानना चाहते हैं। लेकिन एक जैसी महत्त्व की दो घटनाओं में से स्थानीय समाचारपत्र में उस घटना के खबर बनने की संभावना ज़्यादा है जो

गतिविधि

एक स्थानीय समाचारपत्र में अपने शहर या ज़िले, पड़ोसी राज्यों, दूर-दराज़ के राज्यों और विदेशों की खबरों की सूची बनाइए और देखिए कि कुल खबरों में कितनी स्थानीय, कितनी पास-पड़ोस के राज्यों की और कितनी खबरें विदेशों की हैं? क्या अखबार स्थानीय खबरों को ज़्यादा प्राथमिकता देते हैं? स्थानीय खबरों और विदेशी खबरों का अनुपात क्या है? क्या आपको लगता है कि आपके समाचारपत्र में विदेशों की और खबरें होनी चाहिए? क्या आपको लगता है कि समाचारपत्र में आपके शहर और ज़िले को छोड़कर आसपास के ज़िलों, शहरों या राज्यों की खबरें कम हैं? क्या ऐसी खबरों का अनुपात बढ़ना चाहिए? इस पर अपने शिक्षक और साथी छात्रों के साथ चर्चा कीजिए।

पत्रकारिता के मूल्य

पत्रकारिता एक तरह से 'दैनिक इतिहास' लेखन है। पत्रकार रोज़ का इतिहास अखबार के पन्नों में दर्ज करता चलता है। उसका काम ऊपरी तौर पर बहुत आसान लगता है लेकिन वह इतना आसान होता नहीं। उस पर कई तरह के दबाव हो सकते हैं। अपनी पूरी स्वतंत्रता के बावजूद पत्रकारिता सामाजिक और नैतिक मूल्यों से जुड़ी रहती है। उदाहरण के लिए सांप्रदायिक दंगों का समाचार लिखते समय पत्रकार प्रयास करता है कि उसके समाचार से आग न भड़के। वह सचाई जानते हुए भी दंगों में मारे गए या घायल लोगों के समुदाय की पहचान स्पष्ट नहीं करता। बलात्कार के मामलों में वह महिला का नाम या चित्र नहीं प्रकाशित करता ताकि उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा को कोई धक्का न पहुँचे। पत्रकारों से अपेक्षा की जाती है कि वे पत्रकारिता की आचार संहिता का पालन करें ताकि उनके समाचारों से बेवजह और बिना ठोस सबूतों के किसी की व्यक्तिगत प्रतिष्ठा को नुकसान न हो और न ही समाज में अराजकता और अशांति फैले।

उसके पाठकों के ज़्यादा करीब हुई है। इसका एक कारण तो करीब होना है और दूसरा कारण यह भी है कि उसका असर उन पर भी पड़ता है। मसलन किसी एक खास कॉलोनी में चोरी-डकैती की घटना के बारे में वहाँ के लोगों की रुचि होना स्वाभाविक है। रुचि इसलिए कि घटना उनके करीब हुई है और इसलिए भी कि इसका संबंध स्वयं उनकी अपनी सुरक्षा से है।

प्रभाव

किसी घटना के प्रभाव से भी उसका समाचारीय महत्त्व निर्धारित होता है। किसी घटना की तीव्रता का अंदाज़ा इस बात से लगाया जाता है कि उससे कितने सारे लोग प्रभावित हो रहे हैं या कितने बड़े भू-भाग पर उसका असर हो रहा है। किसी घटना से जितने अधिक लोग प्रभावित होंगे, उसके समाचार बनने की संभावना उतनी ही बढ़ जाती है। ज़ाहिर है जिन घटनाओं का पाठकों के जीवन पर सीधा प्रभाव पड़ रहा हो, उसके बारे में जानने की उनमें स्वाभाविक इच्छा होती है। जैसे सरकार के किसी निर्णय से अगर सिर्फ़ सौ लोगों को लाभ हो रहा हो तो यह उतना बड़ा समाचार नहीं है जितना कि उससे लाभान्वित होने वाले लोगों की संख्या अगर एक लाख हो। सरकार अनेक नीतिगत फ़ैसले लेती है जिनका प्रभाव तात्कालिक नहीं होता लेकिन दीर्घकालिक प्रभाव महत्त्वपूर्ण हो सकते हैं और इसी दृष्टि से इसके समाचारीय महत्त्व को आँका जाना चाहिए।

जनरुचि

किसी विचार, घटना और समस्या के समाचार बनने के लिए यह भी आवश्यक है कि लोगों की उसमें दिलचस्पी हो। वे उसके बारे में जानना चाहते हों। कोई भी घटना समाचार तभी बन सकती है, जब पाठकों या दर्शकों का एक बड़ा तबका उसके बारे में जानने में रुचि रखता हो। हर समाचार संगठन का अपना एक लक्ष्य समूह (टार्गेट ऑडिएंस) होता है और वह समाचार संगठन अपने पाठकों या श्रोताओं की रुचियों को ध्यान में रखकर समाचारों का चयन करता है। लेकिन हाल के वर्षों में लोगों की रुचियों और प्राथमिकताओं में भी तोड़-मरोड़ की प्रक्रिया काफ़ी तेज़ हुई है और यह भी सच है कि लोगों की रुचियों में परिवर्तन भी आ रहे हैं। कह सकते हैं कि रुचियाँ कोई स्थिर चीज़ नहीं हैं, गतिशील हैं। कई बार इनमें परिवर्तन आते हैं तो मीडिया में भी परिवर्तन आता है। लेकिन आज मीडिया लोगों की रुचियों में परिवर्तन लाने में बहुत बड़ी भूमिका अदा कर रहा है।

टकराव या संघर्ष

किसी घटना में टकराव या संघर्ष का पहलू होने पर उसके समाचार के रूप में चयन की संभावना बढ़ जाती है क्योंकि लोगों में टकराव या संघर्ष के बारे में जानने की स्वाभाविक दिलचस्पी होती

है। इसकी वजह यह है कि टकराव या संघर्ष का उनके जीवन पर सीधा असर पड़ता है। वे उससे बचना चाहते हैं और इसलिए उसके बारे में जानना चाहते हैं। यही कारण है कि युद्ध और सैनिक टकराव के बारे में जानने की लोगों में सर्वाधिक रुचि होती है। लेकिन टकराव का अर्थ केवल खून–खराबा या खूनी संघर्ष ही नहीं है बल्कि खेलों में जब दो टीमें आपस में मुकाबला करती हैं या चुनावों में राजनीतिक दलों के बीच राजनीतिक संघर्ष होता है तो उसे भी जानने में लोगों की उतनी ही दिलचस्पी होती है।

महत्त्वपूर्ण लोग

मशहूर और जाने–माने लोगों के बारे में जानने की आम पाठकों, दर्शकों और श्रोताओं में स्वाभाविक इच्छा होती है। कई बार किसी घटना से जुड़े लोगों के महत्त्वपूर्ण होने के कारण भी उसका समाचारीय महत्त्व बढ़ जाता है। जैसे अगर प्रधानमंत्री को जुकाम भी हो जाए तो यह एक खबर होती है। इसी तरह किसी फ़िल्मी सितारे या क्रिकेट खिलाड़ी का विवाह भी खबर बन जाती है जबकि यह एक नितांत निजी आयोजन होता है। दरअसल, लोग यह जानना चाहते हैं कि मशहूर लोग उस मुकाम तक कैसे पहुँचे, उनका जीवन कैसा होता है और विभिन्न मुद्दों पर उनके क्या विचार हैं। लेकिन कई बार समाचार माध्यम महत्त्वपूर्ण लोगों की खबर देने के लोभ में उनके निजी जीवन की सीमाएँ लाँघ जाते हैं। यही नहीं, महत्त्वपूर्ण लोगों के बारे में जानकारी देने के नाम पर कई बार समाचार माध्यम अफ़वाहें और कोरी गप प्रकाशित–प्रसारित करते दिखाई पड़ते हैं।

उपयोगी जानकारियाँ

अनेक ऐसी सूचनाएँ भी समाचार मानी जाती हैं जिनका समाज के किसी विशेष तबके के लिए खास महत्त्व हो सकता है। ये लोगों की तात्कालिक उपयोग की सूचनाएँ भी हो सकती हैं। मसलन स्कूल कब खुलेंगे, किसी खास कॉलोनी में बिजली कब बंद रहेगी, पानी का दबाव कैसा रहेगा, वहाँ का मौसम कैसा रहेगा, आदि। ऐसी सूचनाओं का हमारे रोज़मर्रा के जीवन में काफ़ी उपयोग होता है और इसलिए उन्हें जानने में आम लोगों की सहज दिलचस्पी होती है।

अनोखापन

एक पुरानी कहावत है कि कुत्ता आदमी को काट ले तो वह खबर नहीं लेकिन अगर आदमी कुत्ते को काट ले तो वह खबर है यानी जो कुछ स्वाभाविक नहीं है या किसी रूप में असाधारण है, वही समाचार है।

निश्चय ही, अनहोनी घटनाएँ समाचार होती हैं। लोग इनके बारे में जानना चाहते हैं। लेकिन समाचार मीडिया को इस तरह की घटनाओं के संदर्भ में काफ़ी सजगता बरतनी चाहिए अन्यथा कई मौकों पर यह देखा गया है कि इस तरह के समाचारों ने लोगों में अवैज्ञानिक सोच और अंधविश्वास को जन्म दिया है। कई बार यह देखा गया है कि किसी विचित्र बच्चे के पैदा होने की घटना का समाचार चिकित्सा विज्ञान के संदर्भ से काटकर किसी अंधविश्वासी संदर्भ में प्रस्तुत कर दिया जाता है। भूत-प्रेत के किस्से-कहानी समाचार नहीं हो सकते। किसी इंसान को भगवान बनाने के मिथ गढ़ने से भी समाचार मीडिया को बचना चाहिए।

पाठक वर्ग

आमतौर पर हर समाचार संगठन से प्रकाशित-प्रसारित होने वाले समाचारपत्र और रेडियो/टी.वी. चैनलों का एक खास पाठक / दर्शक / श्रोता वर्ग होता है। समाचार संगठन समाचारों का चुनाव करते हुए अपने पाठक वर्ग की रुचियों और ज़रूरतों का विशेष ध्यान रखते हैं। ज़ाहिर है कि किसी समाचारीय घटना का महत्त्व इससे भी तय होता है कि किसी खास समाचार का **ऑडिएंस** कौन है और उसका आकार कितना बड़ा है। इन दिनों ऑडिएंस का समाचारों के महत्त्व के आकलन में प्रभाव बढ़ता जा रहा है। इसका एक नतीजा यह हुआ है कि अतिरिक्त क्रय शक्ति वाले सामाजिक तबकों अर्थात अमीरों और मध्यम वर्ग में अधिक पढ़े जाने वाले समाचारों को ज़्यादा महत्त्व मिल रहा है। इसकी वजह यह है कि विज्ञापनदाताओं की इन वर्गों में ज़्यादा रुचि होती है। लेकिन इस वजह से समाचार माध्यमों में गरीब और कमज़ोर वर्ग के पाठकों और उनसे जुड़ी खबरों को नज़रअंदाज़ करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है।

नीतिगत ढाँचा

विभिन्न समाचार संगठनों की समाचारों के चयन और प्रस्तुति को लेकर एक नीति होती है। इस नीति को 'संपादकीय नीति' भी कहते हैं। संपादकीय नीति का निर्धारण संपादक या समाचार संगठन के मालिक करते हैं। समाचार संगठन, समाचारों के चयन में अपनी संपादकीय नीति का

भी ध्यान रखते हैं। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि वे केवल संपादकीय नीति के अनुकूल खबरों का ही चयन करते हैं बल्कि वे उन खबरों को भी चुनते हैं जो संपादकीय नीति के अनुकूल नहीं है। यह ज़रूर हो सकता है कि संपादकीय लाइन के प्रतिकूल खबरों को उतनी प्रमुखता न दी जाए जितनी अनुकूल खबरों को दी जाती है।

संपादन

जनसंचार माध्यमों में द्वारपाल की भूमिका की चर्चा हमने अध्याय 1 में की थी। समाचार संगठनों में द्वारपाल की भूमिका संपादक और सहायक संपादक, समाचार संपादक, मुख्य उपसंपादक और उपसंपादक आदि निभाते हैं। वे न सिर्फ़ अपने संवाददाताओं और अन्य स्रोतों से प्राप्त समाचारों के चयन में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं बल्कि उनकी प्रस्तुति की ज़िम्मेदारी भी उन्हीं पर होती है। समाचार संगठनों में समाचारों के संकलन का कार्य जहाँ रिपोर्टिंग की टीम करती है, वहीं उन्हें संपादित कर लोगों तक पहुँचाने की ज़िम्मेदारी संपादकीय टीम पर होती है।

संपादन का अर्थ है किसी सामग्री से उसकी अशुद्धियों को दूर करके उसे पठनीय बनाना। एक उपसंपादक अपने रिपोर्टर की खबर को ध्यान से पढ़ता है और उसकी भाषा-शैली, व्याकरण, वर्तनी तथा तथ्य संबंधी अशुद्धियों को दूर करता है। वह उस खबर के महत्त्व के अनुसार उसे काटता-छाँटता है और उसे कितनी और कहाँ जगह दी जाए, यह तय करता है। इसके लिए वह संपादन के कुछ सिद्धांतों का पालन करता है।

संपादन के सिद्धांत

पत्रकारिता कुछ सिद्धांतों पर चलती है। एक पत्रकार से अपेक्षा की जाती है कि वह समाचार संकलन और लेखन के दौरान इनका पालन करेगा। आप कह सकते हैं कि ये पत्रकारिता के आदर्श या मूल्य भी हैं। इनका पालन करके ही एक पत्रकार और उसका समाचार संगठन अपने पाठकों का विश्वास जीत सकता है। किसी भी समाचार संगठन की सफलता उसकी विश्वसनीयता पर टिकी होती है। पत्रकारिता की साख बनाए रखने के लिए निम्नलिखित सिद्धांतों का पालन करना ज़रूरी है–

- तथ्यों की शुद्धता (एक्युरेसी)
- वस्तुपरकता (ऑब्जेक्टीविटी)
- निष्पक्षता (फ़ेयरनेस)
- संतुलन (बैलेंस)
- स्रोत (सोर्सिंग-एट्रीब्यूशन)

आइए, अब इन सिद्धांतों की संक्षेप में चर्चा करें और उनका अर्थ समझने की कोशिश करें।

© NCERT not to be republished

तथ्य बनाम सत्य
छह अंधे और एक हाथी

आपने छह अंधों और एक हाथी की कहानी सुनी होगी। यह भारतीय लोककथा तथ्यों और सचाई के बीच के फ़र्क को काफ़ी अच्छे ढंग से उजागर करती है। छह अंधों में बहस छिड़ गई कि हाथी कैसा होता है और फिर उन्होंने इस बहस को खत्म करने के लिए स्वयं हाथी को छूकर यह तय करने का निश्चय किया कि हाथी कैसा होता है। एक अंधे ने हाथी के पेट को छुआ और कहा, "यह दीवार की तरह है।" दूसरे ने

उसके दाँत को छुआ और कहा, "नहीं यह तलवार की तरह है।" तीसरे के हाथ उसकी सूँढ़ आई और उसने कहा, "यह तो साँप की तरह है।" चौथे ने उसका पैर छुआ और चिल्लाया, "तुम पागल हो, यह पेड़ की तरह है।" पाँचवें के हाथ हाथी का कान आया और उसने कहा, "तुम सब गलत हो यह पंखे की तरह है।" छठे अंधे ने उसकी पूँछ पकड़ी और बोला, "बेवकूफ़ों! हाथी दीवार, तलवार, साँप, पेड़, पंखे में से किसी भी तरह का नहीं होता यह तो एक रस्सी की तरह है।" हाथी तो चला गया और छह अंधे आपस में लड़ते रहे। हरेक अपने 'तथ्यों' के आधार पर हाथी की अपनी 'सच्ची छवि' पर अडिग था।

तथ्यों की शुद्धता या तथ्यपरकता (एक्युरेसी)

एक आदर्श रूप में मीडिया और पत्रकारिता यथार्थ या वास्तविकता का प्रतिबिंब है। इस तरह एक पत्रकार समाचार के रूप में यथार्थ को पेश करने की कोशिश करता है। लेकिन यह अपने आप में एक जटिल प्रक्रिया है। सच यह है कि मानव यथार्थ की नहीं, यथार्थ की छवियों की दुनिया में रहता है। किसी भी घटना के बारे में हमें जो भी जानकारियाँ प्राप्त होती हैं, उसी के अनुसार हम उस यथार्थ की एक छवि अपने मस्तिष्क में बना लेते हैं और यही छवि हमारे लिए वास्तविक यथार्थ का काम करती है। एक तरह से हम संचार माध्यमों द्वारा सृजित छवियों की दुनिया में रहते हैं।

दरअसल, यथार्थ को उसकी संपूर्णता में प्रतिबिंबित करने के लिए आवश्यक है कि ऐसे तथ्यों का चयन किया जाए जो उसका संपूर्णता में प्रतिनिधित्व करते हैं। लेकिन समाचार में हम किसी भी यथार्थ को अत्यंत सीमित चयनित सूचनाओं और तथ्यों के माध्यम से ही व्यक्त करते हैं। इसलिए यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि किसी भी विषय के बारे में समाचार लिखते वक्त हम किन सूचनाओं और तथ्यों का चयन करते हैं और किन्हें छोड़ देते हैं। चुनौती यही है कि ये सूचनाएँ और तथ्य सबसे अहम हों और संपूर्ण घटना का प्रतिनिधित्व करते हों। तथ्य बिलकुल सटीक और सही होने चाहिए और उन्हें तोड़ा-मरोड़ा नहीं जाना चाहिए।

जैसे छह अंधों और एक हाथी की कहानी को ही लें। वे तथ्य या सूचनाएँ जो हर अंधे ने हाथी को छूकर प्राप्त किए, अपने आप में सच थे। हाथी का कान पंखे जैसा होता है लेकिन हाथी तो पंखे जैसा नहीं होता। इस तरह हम कह सकते हैं कि तथ्य अपने आप में तो सत्य होते हैं लेकिन अगर किसी संदर्भ में उनका प्रयोग किया जा रहा हो तो उनका पूरे विषय के संदर्भ में प्रतिनिधित्वपूर्ण होना या कई तथ्यों को मिलाकर देखना आवश्यक है। उस स्थिति में तथ्य यथार्थ की सही तसवीर प्रस्तुत करते हैं।

वस्तुपरकता (ऑब्जेक्टीविटी)

वस्तुपरकता को भी तथ्यपरकता से आँकना आवश्यक है। वस्तुपरकता और तथ्यपरकता के बीच काफ़ी समानता भी है

© NCERT not to be republished

लेकिन दोनों के बीच के अंतर को भी समझना ज़रूरी है। एक जैसे होते हुए भी ये दोनों अलग विचार हैं। तथ्यपरकता का संबंध जहाँ अधिकाधिक तथ्यों से है वहीं वस्तुपरकता का संबंध इस बात से है कि कोई व्यक्ति तथ्यों को कैसे देखता है? किसी विषय या मुद्दे के बारे में हमारे मस्तिष्क में पहले से बनी हुई छवियाँ समाचार मूल्यांकन की हमारी क्षमता को प्रभावित करती हैं और हम इस यथार्थ को उन छवियों के अनुरूप देखने का प्रयास करते हैं।

हमारे मस्तिष्क में अनेक मौकों पर इस तरह की छवियाँ वास्तविक भी हो सकती हैं और वास्तविकता से दूर भी हो सकती हैं। यह भी कहा जा सकता है कि वस्तुपरकता की अवधारणा का संबंध हमारे सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक मूल्यों से अधिक है। हमें ये मूल्य हमारे सामाजिक माहौल से मिलते हैं। बचपन से ही हम स्कूल में, घर में, सड़क पर चलते हर कदम, हर पल सूचनाएँ प्राप्त करते हैं और दुनियाभर के स्थानों, लोगों, संस्कृतियों आदि सैकड़ों विषयों के बारे में अपनी एक धारणा या छवि बना लेते हैं। वस्तुपरकता का तकाज़ा यही है कि एक पत्रकार समाचार के लिए तथ्यों का संकलन और उसे प्रस्तुत करते हुए अपने आकलन को अपनी धारणाओं या विचारों से प्रभावित न होने दे।

वैसे यह सच है कि यह दुनिया हमेशा सतरंगी और विविध रहेगी। इसे देखने के दृष्टिकोण भी अनेक होंगे। इसलिए कोई भी समाचार सबके लिए एक साथ वस्तुपरक नहीं हो सकता। एक ही समाचार किसी के लिए वस्तुपरक हो सकता है और किसी के लिए पूर्वाग्रह से प्रभावित हो सकता है। लेकिन एक पत्रकार को जहाँ तक संभव हो, अपने लेखन में वस्तुपरकता का ध्यान ज़रूर रखना चाहिए।

निष्पक्षता (फ़ेयरनेस)

एक पत्रकार के लिए निष्पक्ष होना भी बहुत ज़रूरी है। उसकी निष्पक्षता से ही उसके सामाचार संगठन की साख बनती है। यह साख तभी बनती है जब समाचार संगठन बिना किसी का पक्ष लिए सचाई सामने लाते हैं। पत्रकारिता लोकतंत्र का चौथा स्तंभ है। इसकी राष्ट्रीय और सामाजिक जीवन में अहम भूमिका है। लेकिन निष्पक्षता का अर्थ तटस्थता नहीं है। इसलिए पत्रकारिता सही और गलत, अन्याय और न्याय जैसे मसलों के बीच तटस्थ नहीं हो सकती बल्कि वह निष्पक्ष होते हुए भी सही और न्याय के साथ होती है।

स्रोत और पत्रकारिता

पत्रकारिता और स्रोत के आपसी संबंधों से भी किसी समाज में पत्रकारिता का स्वरूप निर्धारित होता है। आमतौर पर समाचारों के विविध और बहुल स्रोत होते हैं। मीडिया में विविधता के लिए आवश्यक है कि समाचार के स्रोत भी विविध हों। हालाँकि हाल के वर्षों में मीडिया में विविधता को लेकर अनेक सवाल उठाए गए हैं और कुछ अनुसंधान इस ओर इशारा कर रहे हैं कि मीडिया में विविधता की कमी आ रही है और इसका मुख्य कारण इसकी बने-बनाए स्रोतों और पकी-पकाई सूचनाओं पर बढ़ती निर्भरता है। दूसरे खाड़ी युद्ध के दौरान जड़ित पत्रकारिता (एम्बेडेड पत्रकारिता) पर काफ़ी चर्चा हुई और इस संदर्भ में पत्रकारिता के आदर्शों और मानदंडों को लेकर सवाल उठाए गए हैं।

दरअसल, इराक युद्ध के दौरान युद्ध कवर करने गए पश्चिमी देशों के पत्रकार अमेरिकी सेना के साथ संबद्ध हो गए और अमेरिकी सैनिक सूत्रों से मिली सूचनाओं के आधार पर ही वे समाचार भेजते थे। इस तरह वे अमेरिकी सेना के साथ संबद्ध या जड़ित थे। इस तरह के पत्रकार युद्ध की वस्तुपरक और संतुलित रिपोर्टिंग नहीं कर पाए क्योंकि उनका एकमात्र स्रोत अमेरिकी सेना थी और उनका इस्तेमाल काफ़ी हद तक सैनिक प्रोपेगैंडा के लिए किया गया।

पहले और दूसरे दोनों ही खाड़ी युद्धों के दौरान सूचना स्रोतों में विविधता न होने के कारण लोगों को युद्ध की पूरी तसवीर नहीं मिल पाई।

पत्रकार की बैसाखियाँ

संदेह करना पत्रकार का गुण है। उसे चीज़ों की तह तक जाने की आदत डालनी चाहिए। एक तरह से देखा जाए तो संदेह और सवाल किसी भी स्थिति में बदलाव के शुरुआती कदम हैं। अगर संदेह न हो और सवाल न उठाए जाएँ, तो परिवर्तन कठिन हो जाएगा। इस प्रयास में यह ध्यान रखना अनिवार्य है कि इससे पत्रकारिता के मूल्य न प्रभावित हों। इसके लिए पत्रकार को चार बैसाखियों का सहारा लेने से नहीं हिचकना चाहिए। ये बैसाखियाँ संकट या दुविधा के समय उसके काम आती हैं।

पहली बैसाखी है—सचाई। विश्वसनीयता इसी पर टिकी होती है। लिखने से पहले तथ्यों की पूरी जाँच-परख और उसकी पुष्टि करना अनिवार्य है। उसे बयानों को तोड़ना-मरोड़ना नहीं चाहिए। यह सुनिश्चित करना चाहिए कि समाचार में अफ़वाहों को जगह न मिले।

दूसरी बैसाखी है—संतुलन। सचाई की कसौटी पर कसे जाने के बावजूद यह अनिवार्य है कि तथ्यों, बयानों और आँकड़ों के इस्तेमाल में संतुलन रखा जाए। विवादास्पद मुद्दों में दोनों पक्षों की बात सामने रखना ज़रूरी है। एकपक्षीय समाचार असंतुलित होगा।

तीसरी बैसाखी है—निष्पक्षता। किसी पत्रकार के लिए 'पक्षपात' अपशब्द की तरह है। जो पत्रकार अपने समाचारों में निष्पक्ष नहीं हो सकता, वह पत्रकार नहीं हो सकता। पक्षपात करने वाले पत्रकार को उसके पाठक ही खारिज कर देते हैं। इसलिए ज़रूरी है कि पत्रकार समाचार में निजी राय न व्यक्त करे।

चौथी बैसाखी है—स्पष्टता। पत्रकारिता साहित्य से भिन्न है। हो सकता है कि कोई समाचार लालित्यपूर्ण ढंग से लिखा गया हो। उसमें शब्दों की जादूगरी हो। लेकिन इसके कारण समाचार में अस्पष्टता का दोष नहीं आना चाहिए। समाचार से कोई भ्रम नहीं पैदा होना चाहिए। उसे शीशे की तरह साफ़ होना चाहिए। इसके लिए अनिवार्य है कि समाचार में वाक्य छोटे और सीधे रहें तथा उनमें कोई उलझाव न हो।

जब हम समाचारों में निष्पक्षता की बात करते हैं तो इसमें न्यायसंगत होने का तत्त्व अधिक अहम होता है। आज मीडिया एक बहुत बड़ी ताकत है। एक ही झटके में वह किसी की इज़्ज़त पर बट्टा लगाने की ताकत रखती है। इसलिए किसी के बारे में समाचार लिखते वक्त इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि कहीं किसी को अनजाने में ही बिना सुनवाई के फाँसी पर तो नहीं लटकाया जा रहा है।

संतुलन (बैलेंस)

निष्पक्षता की अगली कड़ी संतुलन है। आमतौर पर मीडिया पर आरोप लगाया जाता है कि समाचार कवरेज संतुलित नहीं है यानी वह किसी एक पक्ष की ओर झुका है। आमतौर पर समाचार में संतुलन की आवश्यकता वहीं पड़ती है जहाँ किसी घटना में अनेक पक्ष शामिल हों और उनका आपस में किसी न किसी रूप में टकराव हो। उस स्थिति में संतुलन का तकाज़ा यही है कि सभी संबद्ध पक्षों की बात समाचार में अपने-अपने समाचारीय वज़न के अनुसार स्थान पाए।

समाचार में संतुलन का महत्त्व तब कहीं अधिक हो जाता है जब किसी पर किसी तरह के आरोप लगाए गए हों या इससे मिलती-जुलती कोई स्थिति हो। उस स्थिति में हर पक्ष की बात समाचार में आनी चाहिए अन्यथा यह एकतरफ़ा चरित्र हनन का हथियार बन सकता है। व्यक्तिगत किस्म के आरोपों में आरोपित व्यक्ति के पक्ष को भी स्थान मिलना चाहिए। लेकिन यह स्थिति तभी संभव हो सकती है जब आरोपित व्यक्ति सार्वजनिक जीवन में हो और आरोपों के पक्ष में पक्के सबूत नहीं हों या उनका सही साबित होना काफ़ी संदिग्ध हो। लेकिन घोषित अपराधियों या गंभीर अपराध के आरोपियों को संतुलन के नाम पर सफ़ाई देने का अवसर देने की ज़रूरत नहीं है। संतुलन के नाम पर समाचार मीडिया इस तरह के तत्त्वों का मंच नहीं बन सकता।

© NCERT not to be republished

संतुलन का सिद्धांत अनेक सार्वजनिक मसलों पर व्यक्त किए जाने वाले विचारों और दृष्टिकोणों पर तकनीकी ढंग से लागू नहीं किया जाना चाहिए।

स्रोत

हर समाचार में शामिल की गई सूचना और जानकारी का कोई स्रोत होना आवश्यक है। यहाँ स्रोत के संदर्भ में सबसे पहले यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि किसी भी समाचार संगठन के स्रोत होते हैं और फिर उस समाचार संगठन का पत्रकार जब सूचनाएँ एकत्रित करता है तो उसके अपने भी स्रोत होते हैं। इस तरह किसी भी दैनिक समाचारपत्र के लिए पीटीआई (भाषा), यूएनआई (यूनीवार्ता) जैसी समाचार एजेंसियाँ और स्वयं अपने ही संवाददाताओं और रिपोर्टरों का तंत्र समाचारों का स्रोत होता है। लेकिन चाहे समाचार एजेंसी हो या समाचारपत्र, इनमें काम करने वाले पत्रकारों के भी अपने समाचार स्रोत होते हैं। यहाँ हम एक पत्रकार के समाचार के स्रोतों की चर्चा करेंगे।

समाचार की साख को बनाए रखने के लिए आवश्यक है कि इसमें शामिल की गई सूचना या जानकारी का कोई स्रोत हो और वह स्रोत इस तरह की सूचना या जानकारी देने का अधिकार रखता हो और समर्थ हो। कुछ जानकारियाँ बहुत सामान्य होती हैं जिनके स्रोतों का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है। लेकिन जैसे ही कोई सूचना 'सामान्य' होने के दायरे से बाहर निकलकर 'विशिष्ट' होती है उसके स्रोत का उल्लेख आवश्यक हो जाता है। स्रोत के बिना उसकी साख नहीं होगी। एक समाचार में समाहित सूचनाओं का स्रोत होना आवश्यक है और जिस सूचना का कोई स्रोत नहीं है, उसका स्रोत या तो पत्रकार स्वयं है या फिर यह एक सामान्य जानकारी है जिसका स्रोत देने की आवश्यकता नहीं है।

आमतौर पर पत्रकार स्वयं किसी सूचना का प्रारंभिक स्रोत नहीं होता। वह किसी घटना के समय घटनास्थल पर उपस्थित नहीं होता। वह घटना के बाद घटनास्थल पर पहुँचता है इसलिए यह सब कैसे हुआ, यह जानने के लिए उसे दूसरे स्रोतों पर निर्भर रहना पड़ता है। अगर एक पत्रकार स्वयं अपनी आँखों से पुलिस फ़ायरिंग में या अन्य किसी भी तरह की हिंसा में मरने वाले दस लोगों के शव देखता है तो निश्चय ही वह खुद दस लोगों के मरने के समाचार का स्रोत हो सकता है। लेकिन उसे इसकी पुष्टि करने की कोशिश ज़रूर करनी चाहिए।

पत्रकारिता के अन्य आयाम

समाचारपत्र पढ़ते समय पाठक हर समाचार से एक ही तरह की जानकारी की अपेक्षा नहीं रखता। कुछ घटनाओं के मामले में वह उसका विवरण विस्तार से पढ़ना चाहता है तो कुछ अन्य के संदर्भ में उसकी इच्छा यह जानने की होती है कि घटना के पीछे क्या है? उसकी पृष्ठभूमि क्या है? उस घटना का उसके भविष्य पर क्या प्रभाव पड़ेगा और इससे उसका जीवन तथा समाज किस तरह प्रभावित होगा? समय, विषय और घटना के अनुसार पत्रकारिता में लेखन के तरीके बदल जाते हैं। यही बदलाव पत्रकारिता में कई नए आयाम जोड़ता है। समाचार के अलावा विचार, टिप्पणी, संपादकीय, फ़ोटो और कार्टून पत्रकारिता के अहम हिस्से हैं। समाचारपत्र में इनका विशेष

© NCERT not to be republished

सच में, बच्चों पर इस तरह बोझ बढ़ाना बहुत ही क्रूरता है। मुझे अपने बेटे की मदद के लिए इस लड़के को नौकरी पर रखना पड़ा।

आर. के. लक्ष्मण का एक कार्टून, 'टाइम्स ऑफ इंडिया' से साभार

स्थान और महत्त्व है। इनके बिना कोई समाचारपत्र स्वयं को संपूर्ण नहीं कह सकता।

संपादकीय पृष्ठ को समाचारपत्र का सबसे महत्त्वपूर्ण पृष्ठ माना जाता है। इस पृष्ठ पर अखबार विभिन्न घटनाओं और समाचारों पर अपनी राय रखता है। इसे संपादकीय कहा जाता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर अपने विचार लेख के रूप में प्रस्तुत करते हैं। आमतौर पर संपादक के नाम पत्र भी इसी पृष्ठ पर प्रकाशित किए जाते हैं। वह घटनाओं पर आम लोगों की टिप्पणी होती है। समाचारपत्र उसे महत्त्वपूर्ण मानते हैं।

फ़ोटो पत्रकारिता ने छपाई की टेक्नॉलोजी विकसित होने के साथ ही समाचारपत्रों में अहम स्थान बना लिया है। कहा जाता है कि जो बात हज़ार शब्दों में लिखकर नहीं कही जा सकती, वह एक तसवीर कह देती है। फ़ोटो टिप्पणियों का असर व्यापक और सीधा होता है। टेलीविज़न की बढ़ती लोकप्रियता के बाद समाचारपत्रों और पत्रिकाओं में तसवीरों के प्रकाशन पर ज़ोर और बढ़ा है।

कार्टून कोना लगभग हर समाचारपत्र में होता है और उनके माध्यम से की गई सटीक टिप्पणियाँ पाठक को छूती हैं। एक तरह से कार्टून पहले पन्ने पर प्रकाशित होने वाले हस्ताक्षरित संपादकीय हैं। इनकी चुटीली टिप्पणियाँ कई बार कड़े और धारदार संपादकीय से भी अधिक प्रभावी होती हैं।

रेखांकन और कार्टोग्राफ़ समाचारों को न केवल रोचक बनाते हैं बल्कि उन पर टिप्पणी भी करते हैं। क्रिकेट के स्कोर से लेकर सेंसेक्स के आँकड़ों तक–ग्राफ़ से पूरी बात एक नज़र में सामने आ जाती है। कार्टोग्राफ़ी का उपयोग समाचारपत्रों के अलावा टेलीविज़न में भी होता है।

इरफान का एक कार्टून, 'जनसत्ता' से साभार।

पत्रकारिता के कुछ प्रमुख प्रकार

खोजपरक पत्रकारिता

खोजपरक पत्रकारिता से आशय ऐसी पत्रकारिता से है जिसमें गहराई से छान-बीन करके ऐसे तथ्यों और सूचनाओं को सामने लाने की कोशिश की जाती है जिन्हें दबाने या छुपाने का प्रयास किया जा रहा हो। आमतौर पर खोजी पत्रकारिता सार्वजनिक महत्त्व के मामलों में भ्रष्टाचार, अनियमितताओं और गड़बड़ियों को सामने लाने की कोशिश करती है। खोजी पत्रकारिता का उपयोग उन्हीं स्थितियों में किया जाता है जब यह लगने लगे कि सचाई को सामने लाने के लिए और कोई उपाय नहीं

© NCERT not to be republished

रह गया है। खोजी पत्रकारिता का ही एक नया रूप टेलीविज़न में **स्टिंग ऑपरेशन** के रूप में सामने आया है।

हालाँकि भारत में खोजी पत्रकारिता तीन दशक पहले ही शुरू हो गई थी लेकिन हमारे देश में यह अब भी अपने शैशवकाल में ही है। जब ज़रूरत से ज़्यादा गोपनीयता बरती जाने लगे और भ्रष्टाचार व्यापक हो तो खोजी पत्रकारिता ही उसे सामने लाने का एकमात्र विकल्प बचती है। अमेरिका का वाटरगेट कांड खोजी पत्रकारिता का एक नायाब उदाहरण है, जिसमें राष्ट्रपति निक्सन को इस्तीफ़ा देना पड़ा था। भारत में भी कई केंद्रीय मंत्रियों और मुख्यमंत्रियों को खोजी पत्रकारिता के कारण अपने पदों से इस्तीफ़ा देना पड़ा।

विशेषीकृत पत्रकारिता

पत्रकारिता का अर्थ घटनाओं की सूचना देना मात्र नहीं है। पत्रकार से अपेक्षा होती है कि वह घटनाओं की तह तक जाकर उसका अर्थ स्पष्ट करे और आम पाठक को बताए कि उस समाचार का क्या महत्त्व है? इसके लिए विशेषता की आवश्यकता होती है। पत्रकारिता में विषय के हिसाब से विशेषता के सात प्रमुख क्षेत्र हैं। इनमें संसदीय पत्रकारिता, न्यायालय पत्रकारिता, आर्थिक पत्रकारिता, खेल पत्रकारिता, विज्ञान और विकास पत्रकारिता, अपराध पत्रकारिता तथा फ़ैशन और फ़िल्म पत्रकारिता शामिल हैं। इन क्षेत्रों के समाचार और उनकी व्याख्या उन विषयों में विशेषता हासिल किए बिना देना कठिन होता है।

वॉचडॉग पत्रकारिता

यह माना जाता है कि लोकतंत्र में पत्रकारिता और समाचार मीडिया का मुख्य उत्तरदायित्व सरकार के कामकाज पर निगाह रखना है और कहीं भी कोई गड़बड़ी हो तो उसका परदाफ़ाश करना है। इसे परंपरागत रूप से **वॉचडॉग पत्रकारिता** कहा जाता है। इसका दूसरा छोर सरकारी सूत्रों पर आधारित पत्रकारिता है। समाचार मीडिया केवल वही समाचार देता है जो सरकार चाहती है और अपने आलोचनात्मक पक्ष का परित्याग कर देता है। आमतौर पर इन दो बिंदुओं के बीच तालमेल के ज़रिये ही समाचार मीडिया और इसके तहत काम करने वाले विभिन्न समाचार संगठनों की पत्रकारिता का निर्धारण होता है।

एडवोकेसी पत्रकारिता

ऐसे अनेक समाचार संगठन होते हैं जो किसी विचारधारा या किसी खास उद्देश्य या मुद्दे को उठाकर आगे बढ़ते हैं और उस विचारधारा या उद्देश्य या मुद्दे के पक्ष में जनमत बनाने के लिए लगातार और ज़ोर-शोर से अभियान चलाते हैं। इस तरह की पत्रकारिता को **पक्षधर** या **एडवोकेसी पत्रकारिता** कहा जाता है। आपने अकसर देखा होगा कि भारत में भी कुछ समाचारपत्र या टेलीविज़न चैनल किसी खास मुद्दे पर जनमत बनाने और सरकार को उसके अनुकूल प्रतिक्रिया करने के लिए अभियान चलाते हैं। उदाहरण के लिए जेसिका लाल हत्याकांड में न्याय के लिए समाचार माध्यमों ने सक्रिय अभियान चलाया।

© NCERT not to be republished

गतिविधि

पत्रकारिता के कुछ खास प्रकार हैं– खोजपरक, विशेषीकृत, वॉचडॉग, एडवोकेसी पत्रकारिता। विभिन्न समाचारपत्रों से इन प्रकारों के पाँच-पाँच नमूने इकट्ठे कर फ़ाइल में चिपकाएँ, और अपने अध्यापक से इस पर चर्चा करें।

वैकल्पिक पत्रकारिता

मीडिया स्थापित राजनीतिक-सामाजिक व्यवस्था का ही एक हिस्सा है और व्यवस्था के साथ तालमेल बिठाकर चलने वाले मीडिया को **मुख्यधारा का मीडिया** कहा जाता है। इस तरह की मीडिया आमतौर पर व्यवस्था के अनुकूल और आलोचना के एक निश्चित दायरे में ही काम करता है। इस तरह के मीडिया का स्वामित्व आमतौर पर बड़ी पूँजी के पास होता है और वह मुनाफ़े के लिए काम करती है। उसका मुनाफ़ा मुख्यत: विज्ञापन से आता है।

इसके विपरीत जो मीडिया स्थापित व्यवस्था के विकल्प को सामने लाने और उसके अनुकूल सोच को अभिव्यक्त करता है उसे **वैकल्पिक पत्रकारिता** कहा जाता है। आमतौर पर इस तरह के मीडिया को सरकार और बड़ी पूँजी का समर्थन हासिल नहीं होता है। उसे बड़ी कंपनियों के विज्ञापन भी नहीं मिलते हैं और वह अपने पाठकों के सहयोग पर निर्भर होता है।

समाचार माध्यमों में मौजूदा रुझान

देश में मध्यम वर्ग के तेज़ी से विस्तार के साथ ही मीडिया के दायरे में आने वाले लोगों की संख्या भी तेज़ी से बढ़ रही है। साक्षरता और क्रय शक्ति बढ़ने से भारत में अन्य वस्तुओं के अलावा मीडिया के बाज़ार का भी विस्तार हो रहा है। इस बाज़ार की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए हर तरह के मीडिया का फैलाव हो रहा है—रेडियो, टेलीविज़न, समाचारपत्र, सेटेलाइट टेलीविज़न और इंटरनेट सभी विस्तार के रास्ते पर हैं। लेकिन बाज़ार के इस विस्तार के साथ ही मीडिया का व्यापारीकरण भी तेज़ हो गया है और मुनाफ़ा कमाने को ही मुख्य ध्येय समझने वाले पूँजीवादी वर्ग ने भी मीडिया के क्षेत्र में बड़े पैमाने पर प्रवेश किया है।

व्यापारीकरण और बाज़ार होड़ के कारण हाल के वर्षों में समाचार मीडिया ने अपने खास बाज़ार (क्लास मार्केट) को आम बाज़ार (मास मार्केट) में तब्दील करने की कोशिश की है। यही कारण है कि समाचार मीडिया और मनोरंजन की दुनिया के बीच का अंतर कम होता जा रहा है और कभी-कभार तो दोनों में अंतर कर पाना मुश्किल हो जाता है। समाचार के नाम पर मनोरंजन बेचने के इस रुझान के कारण आज समाचारों में वास्तविक और सरोकारीय सूचनाओं और जानकारियों का अभाव होता जा रहा है।

आज निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि समाचार मीडिया का एक बड़ा हिस्सा लोगों को 'जानकार नागरिक' बनाने में मदद कर रहा है बल्कि अधिकांश मौकों पर यही लगता

है कि लोग 'गुमराह उपभोक्ता' अधिक बन रहे हैं, अगर आज समाचार की परंपरागत परिभाषा के आधार पर देश के जाने-माने समाचार चैनलों का मूल्यांकन करें तो एक-आध चैनल को छोड़कर अधिकांश सूचनारंजन (इन्फ़ोटेनमेंट) के चैनल बनकर रह गए हैं, जिसमें सूचना कम और मनोरंजन ज़्यादा है। इसकी वजह यह है कि आज समाचार मीडिया का एक बड़ा हिस्सा एक ऐसा उद्योग बन गया है जिसका मकसद अधिकतम मुनाफ़ा कमाना है। समाचार उद्योग के लिए समाचार भी पेप्सी-कोक जैसा एक उत्पाद बन गया है जिसका उद्देश्य उपभोक्ताओं को गंभीर सूचनाओं के बजाय सतही मनोरंजन से बहलाना और अपनी ओर आकर्षित करना हो गया है।

दरअसल, उपभोक्ता समाज का वह तबका है जिसके पास अतिरिक्त क्रय शक्ति है और व्यापारीकृत मीडिया अतिरिक्त क्रय शक्ति वाले सामाजिक तबके में अधिकाधिक पैठ बनाने की होड़ में उतर गया है। इस तरह की बाज़ार होड़ में उपभोक्ता को लुभाने वाले समाचार पेश किए जाने लगे हैं और उन वास्तविक समाचारीय घटनाओं की उपेक्षा होने लगी है जो उपभोक्ता के भीतर ही बसने वाले नागरिक की वास्तविक सूचना आवश्यकताएँ थीं और जिनके बारे में जानना उसके लिए आवश्यक है। इस दौर में समाचार मीडिया बाज़ार को हड़पने की होड़ में ज़्यादा से ज़्यादा लोगों की चाहत पर निर्भर होता जा रहा है और लोगों की ज़रूरत किनारे की जा रही है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि समाचार मीडिया में हमेशा से ही सनसनीखेज़ या **पीत-पत्रकारिता** और **पेज-थ्री पत्रकारिता** की धाराएँ मौजूद रही हैं। इनका हमेशा अपना स्वतंत्र अस्तित्व रहा है, जैसे ब्रिटेन का टेबलॉयड मीडिया और भारत में भी 'ब्लिट्ज़' जैसे कुछ समाचारपत्र रहे हैं। पेज-थ्री भी मुख्यधारा की पत्रकारिता में मौजूद रहा है। लेकिन इन पत्रकारीय धाराओं के बीच एक विभाजन रेखा थी जिसे व्यापारीकरण के मौजूदा रुझान ने खत्म कर दिया है।

यह स्थिति हमारे लोकतंत्र के लिए एक गंभीर राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संकट पैदा कर रही है। आज हर समाचार संगठन सबसे अधिक बिकाऊ बनने की होड़ में एक ही तरह के समाचारों पर टूटता दिखाई पड़ रहा है। इससे विविधता खत्म हो रही है और ऐसी स्थिति पैदा हो रही है जिसमें अनेक अखबार हैं और सब एक जैसे ही हैं। अनेक समाचार चैनल हैं। 'सर्फ़' करते रहिए, बदलते रहिए और एक ही तरह के समाचारों को एक ही तरह से प्रस्तुत होते देखते रहिए।

विविधता समाप्त होने के साथ-साथ समाचार माध्यमों में केंद्रीकरण का रुझान भी प्रबल हो रहा है। हमारे देश में परंपरागत रूप से कुछ बड़े राष्ट्रीय अखबार थे। इसके बाद क्षेत्रीय प्रेस था और अंत में ज़िला-तहसील स्तर के छोटे समाचारपत्र थे। नयी प्रौद्योगिकी आने के बाद पहले तो क्षेत्रीय अखबारों ने ज़िला और तहसील स्तर के प्रेस को हड़प लिया और अब राष्ट्रीय प्रेस क्षेत्रीय पाठकों में अपनी पैठ बना रहा है और क्षेत्रीय प्रेस राष्ट्रीय रूप अख्तियार कर रहा है। आज चंद समाचारपत्रों के अनेक संस्करण हैं और समाचारों का कवरेज अत्यधिक आत्मकेंद्रित, स्थानीय और विखंडित हो गया है। समाचार कवरेज में विविधता का अभाव तो है ही, साथ ही समाचारों की पिटी-पिटाई अवधारणाओं के आधार पर लोगों की रुचियों और प्राथमिकताओं को परिभाषित करने का रुझान भी प्रबल हुआ है।

लेकिन समाचार मीडिया के प्रबंधक बहुत समय तक इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकते क्योंकि साख और प्रभाव समाचार मीडिया की सबसे बड़ी ताकत होती है। आज समाचार मीडिया की साख में तेज़ी से ह्रास हो रहा है और इसके साथ ही लोगों की सोच को प्रभावित करने की इसकी क्षमता भी कुंठित हो रही है। समाचारों को उनके न्यायोचित और स्वाभाविक स्थान पर बहाल करके ही समाचार मीडिया की साख और प्रभाव के ह्रास की प्रक्रिया को रोका जा सकता है।

पाठ से संवाद

1. किसी भी दैनिक अखबार में राजनीतिक खबरें ज़्यादा स्थान क्यों घेरती है? इस पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

2. किन्हीं तीन हिंदी समाचारपत्रों (एक ही तारीख के) को ध्यान से पढ़िए और बताइए कि एक आम आदमी की ज़िंदगी में अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रखने वाली खबरें समाचारपत्रों में कहाँ और कितना स्थान पाती हैं।

3. निम्न में से किसे आप समाचार कहना पसंद नही करेंगें और क्यों?
   (क) प्रेरक और उत्तेजित कर देने वाली हर सूचना
   (ख) किसी घटना की रिपोर्ट
   (ग) समय पर दी जाने वाली हर सूचना
   (घ) सहकर्मियों का आपसी कुशलक्षेम या किसी मित्र की शादी

4. आमतौर पर ऐसा माना जाता है कि खबरों को बनाते समय जनता की रुचि का ध्यान रखा जाता है। इसके विपरीत जनता की रुचि बनाने-बिगाड़ने में खबरों का क्या योगदान होता है? विचार करें।

5. निम्न पंक्तियों की व्याख्या करें–
   (क) इस दौर में समाचार मीडिया बाज़ार को हड़पने के लिए अधिकाधिक लोगों का मनोरंजन तो कर रहा है। लेकिन जनता के मूल सरोकार को दरकिनार करता जा रहा है।
   (ख) समाचार मीडिया के प्रबंधक बहुत समय तक इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकते कि साख और प्रभाव समाचार मीडिया की सबसे बड़ी ताकत होती हैं।

अभ्यास

© NCERT not to be republished

3

विभिन्न माध्यमों के लिए लेखन

खबर लिखना बहुत ही रचनात्मक काम हो सकता है। उतना ही रचनात्मक, जितना कविता लिखना; दोनों का उद्देश्य मनुष्य को और समाज को ताकत पहुँचाना है। खबर में लेखक तथ्यों को बदल नहीं सकता, पर दो या दो से अधिक तथ्यों के मेल से असलियत खोल सकता है।

–रघुवीर सहाय

हिंदी के प्रमुख कवि और पत्रकार

इस पाठ में...

- **प्रमुख जनसंचार माध्यम (प्रिंट, टी.वी., रेडियो और इंटरनेट)**
  जनसंचार के विभिन्न माध्यमों की खूबियाँ और खामियाँ
- **प्रिंट माध्यम**
  मुद्रित माध्यम में लेखन के लिए ध्यान रखने योग्य बातें
- **रेडियो**
  रेडियो समाचार की संरचना
- **रेडियो के लिए समाचार लेखन–बुनियादी बातें**
- **टेलीविज़न**
  टी.वी. खबरों के विभिन्न चरण
- **रेडियो और टेलीविज़न समाचार की भाषा और शैली**
- **इंटरनेट**
  इंटरनेट पत्रकारिता
  इंटरनेट पत्रकारिता का इतिहास
  भारत में इंटरनेट पत्रकारिता
- **हिंदी नेट संसार**

एक नज़र में...

विभिन्न जनसंचार माध्यमों के लिए लेखन के अलग-अलग तरीके हैं। अखबार और पत्र-पत्रिकाओं में लिखने की अलग शैली है, जबकि रेडियो और टेलीविज़न के लिए लिखना एक अलग कला है। चूँकि माध्यम अलग-अलग हैं इसलिए उनकी ज़रूरतें भी अलग हैं। विभिन्न माध्यमों के लिए लेखन के अलग-अलग तरीकों को समझना बहुत ज़रूरी है। इन माध्यमों के लेखन के लिए बोलने, लिखने के अतिरिक्त पाठकों-श्रोताओं और दर्शकों की ज़रूरत को भी ध्यान में रखा जाता है।

प्रमुख जनसंचार माध्यम (प्रिंट, टी.वी., रेडियो और इंटरनेट)

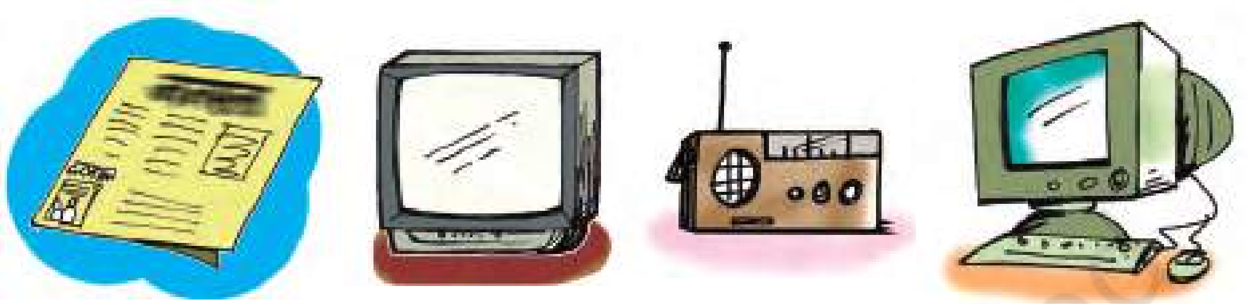

उम्मीद है कि आप नियमित रूप से अखबार पढ़ते होंगे। इसके अलावा मनोरंजन या समाचार जानने के लिए टी.वी. भी देखते होंगे और रेडियो भी सुनते होंगे। संभव है कि आप कभी-कभार इंटरनेट पर भी समाचार पढ़ते, सुनते या देखते हों। क्या आपने कभी गौर किया है कि जनसंचार के इन सभी प्रमुख माध्यमों में, समाचारों के लेखन और प्रस्तुति में क्या अंतर है? कभी ध्यान से किसी शाम या रात को टी.वी. और रेडियो पर सिर्फ़ समाचार सुनिए और मौका मिले तो इंटरनेट पर जाकर उन्हीं समाचारों को फिर से पढ़िए। अगले दिन सुबह अखबार ध्यान से पढ़िए। अब बताइए कि इन सभी माध्यमों में पढ़े, सुने या देखे गए समाचारों की लेखन-शैली, भाषा और प्रस्तुति में आपको क्या फ़र्क नज़र आया? उनमें कोई विशेष अंतर है भी या नहीं?

निश्चय ही, इन सभी माध्यमों में समाचारों की लेखन-शैली, भाषा और प्रस्तुति में आपको कई अंतर देखने को मिले होंगे। सबसे सहज और आसानी से नज़र आनेवाला अंतर तो यही दिखाई देता है कि जहाँ अखबार पढ़ने के लिए है, वहीं रेडियो सुनने के लिए और टी.वी. देखने के लिए ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है। इंटरनेट पर पढ़ने, सुनने और देखने, तीनों की ही सुविधा है। ज़ाहिर है कि अखबार छपे हुए शब्दों का माध्यम है जबकि रेडियो बोले हुए शब्दों का।

जनसंचार के विभिन्न माध्यमों के बीच फ़र्क को समझने के लिए सभी माध्यमों के लेखन की बारीकियों को समझना ज़रूरी है। लेकिन इन माध्यमों के बीच के फ़र्क को आप तभी समझ सकते हैं जब आप हर माध्यम की विशेषताओं, उसकी खूबियों और खामियों से परिचित हों। हर माध्यम की अपनी कुछ खूबियाँ हैं तो कुछ खामियाँ भी। खबर लिखने के समय हमें इनका पूरा ध्यान रखना पड़ता है और इन माध्यमों की ज़रूरत को समझना पड़ता है।

जनसंचार के विभिन्न माध्यमों की खूबियाँ और खामियाँ

जनसंचार के विभिन्न माध्यमों से आपको रोज़, कम या ज़्यादा, साबका पड़ता होगा। अगर आपसे पूछा जाए कि आप इन सभी माध्यमों में सबसे अधिक किसे पसंद करते हैं और क्यों, तो आपका जवाब क्या होगा? शायद आप थोड़ा सोच में पड़ जाएँ। आपका उत्तर चाहे जो हो, इतना तय है कि इस सवाल का कोई एक निश्चित जवाब नहीं है। संभव है आपको टी.वी. ज़्यादा पसंद हो और आपके दोस्त को रेडियो। आपका दोस्त रेडियो अपने पढ़ने के कमरे में फ़ुरसत से या कुछ और काम

© NCERT not to be republished

करते हुए सुनता हो। इसी तरह आपके किसी और साथी को पढ़ना बहुत पसंद हो और उसके फ़ुरसत के क्षण अखबार और पत्रिकाओं के साथ गुज़रते हों जबकि आपका कोई अन्य दोस्त इंटरनेट पर चैटिंग करते या कुछ और पढ़ते/देखते हुए उसी से चिपके रहना पसंद करता हो।

ज़ाहिर है सब की अपनी-अपनी पसंद है। लेकिन सब की पसंद के पीछे कुछ कारण ज़रूर हैं। आप या आपके अन्य दोस्त अलग-अलग जनसंचार माध्यमों को इसलिए अधिक पसंद करते हैं क्योंकि उनकी विशेषताएँ या खूबियाँ, आपकी या आपके अन्य दोस्तों के मिजाज़, रुचियों, ज़रूरतों और पहुँच के अनुकूल हैं। स्पष्ट है कि हम सब अपनी-अपनी रुचियों, ज़रूरतों और स्वभाव के मुताबिक माध्यम चुनते और उनका इस्तेमाल करते हैं। इसका अर्थ यह भी है कि हर माध्यम की अपनी कुछ विशेषताएँ या खूबियाँ हैं तो कुछ खामियाँ भी हैं। जिसके कारण कोई माध्यम-विशेष किसी को अधिक पसंद आता है तो किसी को कम।

लेकिन इसका यह अर्थ कतई नहीं है कि जनसंचार का कोई एक माध्यम सबसे अच्छा या बेहतर है या कोई एक-दूसरे से कमतर है। सब की अपनी कुछ खूबियाँ और खामियाँ हैं। जैसे इंद्रधनुष की छटा अलग-अलग रंगों के एक साथ आने से बनती है, वैसे ही जनसंचार के विभिन्न माध्यमों की असली शक्ति उनके परस्पर पूरक होने में है। जनसंचार के विभिन्न माध्यमों के बीच फ़र्क चाहे जितना हो लेकिन वे आपस में प्रतिद्वंद्वी नहीं बल्कि एक-दूसरे के पूरक और सहयोगी हैं।

कहने की ज़रूरत नहीं है कि अखबार में समाचार पढ़ने और रुककर उस पर सोचने में एक अलग तरह की संतुष्टि मिलती है, जबकि टी.वी. पर घटनाओं की तसवीरें देखकर उसकी जीवंतता का एहसास होता है। इस तरह का रोमांच अखबार या इंटरनेट पर नहीं मिल सकता। इसी तरह रेडियो पर खबरें सुनते हुए आप जितना उन्मुक्त होते हैं, उतना किसी और माध्यम में संभव नहीं है। उधर, इंटरनेट अंतरक्रियात्मकता (इंटरएक्टिविटी) और सूचनाओं के विशाल भंडार का अद्‌भुत माध्यम है, बस एक बटन दबाइए और सूचनाओं के अथाह संसार में पहुँच जाइए। जिस भी विषय पर आप जानना चाहें, इंटरनेट के ज़रिये वहाँ पहुँच सकते हैं।

ये सभी माध्यम हमारी अलग-अलग ज़रूरतों को पूरा करते हैं और इन सभी की हमारे दैनिक जीवन में कुछ न कुछ उपयोगिता है। यही कारण है कि अलग-अलग माध्यम होने के बावजूद इनमें से कोई समाप्त नहीं हुआ और इन सभी माध्यमों का लगातार विस्तार और विकास हो रहा है।

आइए अब इन सभी माध्यमों की अलग-अलग खूबियों और खामियों को समझने की कोशिश करें।

प्रिंट माध्यम

प्रिंट यानी मुद्रित माध्यम जनसंचार के आधुनिक माध्यमों में सबसे पुराना है। असल में आधुनिक युग की शुरुआत ही मुद्रण यानी छपाई के आविष्कार से हुई। हालाँकि मुद्रण की शुरुआत चीन से हुई लेकिन आज हम जिस छापेखाने को देखते हैं, इसके आविष्कार का श्रेय जर्मनी के गुटेनबर्ग को जाता है। छापाखाना यानी प्रेस के आविष्कार ने दुनिया की तसवीर बदल दी। यूरोप में पुनर्जागरण 'रेनेसाँ' की शुरुआत में छापेखाने की अहम भूमिका थी। भारत में पहला छापाखाना सन् 1556 में गोवा में खुला। इसे मिशनरियों ने धर्म प्रचार की पुस्तकें छापने के लिए खोला था। तब से अब तक मुद्रण तकनीक में काफ़ी बदलाव आया है और मुद्रित माध्यमों का व्यापक विस्तार हुआ है।

लेखन से छापेखाने तक

मुद्रित माध्यमों के तहत अखबार, पत्रिकाएँ, पुस्तकें आदि हैं। हमारे दैनिक जीवन में इनका कितना महत्त्व है, यह दोहराने की ज़रूरत नहीं है। मुद्रित माध्यमों की सबसे बड़ी विशेषता या शक्ति यह है कि छपे हुए शब्दों में स्थायित्व होता है। उसे आप आराम से और धीरे-धीरे पढ़ सकते हैं। पढ़ते हुए उस पर सोच सकते हैं। अगर कोई बात समझ में नहीं आई तो उसे दोबारा या जितनी बार इच्छा करे, उतनी बार पढ़ सकते हैं।

यही नहीं, अगर आप अखबार या पत्रिका पढ़ रहे हों तो आप अपनी पसंद के अनुसार किसी भी पृष्ठ और उस पर प्रकाशित किसी भी समाचार या रिपोर्ट से पढ़ने की शुरुआत कर सकते हैं। ऐसी कोई बाध्यता नहीं है कि आप अखबार पहले पृष्ठ और पहली खबर से पढ़ना शुरू करें। साथ ही, मुद्रित माध्यमों के स्थायित्व का एक लाभ यह भी है कि आप उन्हें लंबे समय तक सुरक्षित रख सकते हैं और उसे संदर्भ की तरह इस्तेमाल कर सकते हैं।

मुद्रित माध्यमों की दूसरी बड़ी विशेषता यह है कि यह लिखित भाषा का विस्तार है। ज़ाहिर है कि इसमें लिखित भाषा की सभी विशेषताएँ शामिल हैं। लिखित और मौखिक भाषा में सबसे बड़ा अंतर यह है कि लिखित भाषा अनुशासन की माँग करती है। बोलने में एक स्वतःस्फूर्तता होती है लेकिन लिखने में आपको भाषा, व्याकरण, वर्तनी और शब्दों के उपयुक्त इस्तेमाल का ध्यान रखना

कुछ वर्तमान समाचारपत्रों का एक कोलाज़

पड़ता है। यही नहीं, अगर लिखे हुए को प्रकाशित होना है यानी काफ़ी लोगों तक पहुँचना है तो आपको एक प्रचलित भाषा में लिखना पड़ता है ताकि उसे अधिक से अधिक लोग समझ पाएँ।

मुद्रित माध्यमों की तीसरी विशेषता यह है कि यह चिंतन, विचार और विश्लेषण का माध्यम है। इस माध्यम में आप गंभीर और गूढ़ बातें लिख सकते हैं क्योंकि पाठक के पास न सिर्फ़ उसे पढ़ने, समझने और सोचने का समय होता है बल्कि उसकी योग्यता भी होती है। असल में, मुद्रित माध्यमों का पाठक वही हो सकता है जो साक्षर हो और जिसने औपचारिक या अनौपचारिक शिक्षा के ज़रिये एक विशेष स्तर की योग्यता भी हासिल की हो।

लेकिन मुद्रित माध्यमों की यही कमज़ोरी या सीमा भी है। निरक्षरों के लिए मुद्रित माध्यम किसी काम के नहीं हैं। साथ ही, मुद्रित माध्यमों के लिए लेखन करने वालों को अपने पाठकों के भाषा-ज्ञान के साथ-साथ उनके शैक्षिक ज्ञान और योग्यता का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। इसके अलावा उन्हें पाठकों की रुचियों और ज़रूरतों का भी पूरा ध्यान रखना पड़ता है। मुद्रित माध्यमों की एक और सीमा यह है कि वे रेडियो, टी.वी. या इंटरनेट की तरह तुरंत घटी घटनाओं को संचालित नहीं कर सकते। ये एक निश्चित अवधि पर प्रकाशित होते हैं। जैसे अखबार 24 घंटे में एक बार या साप्ताहिक पत्रिका सप्ताह में एक बार प्रकाशित होती है। अखबार या पत्रिका में समाचारों या रिपोर्ट को प्रकाशन के लिए स्वीकार करने की एक निश्चित समय-सीमा होती है, जिसे डेडलाइन कहते हैं। कुछ अपवादों को छोड़कर समय-सीमा समाप्त होने के बाद कोई सामग्री प्रकाशन के लिए स्वीकार नहीं की जाती। इसलिए मुद्रित माध्यमों के लेखकों और पत्रकारों को प्रकाशन की समय-सीमा का पूरा ध्यान रखना पड़ता है।

इसी तरह मुद्रित माध्यमों में लेखक को जगह (स्पेस) का भी पूरा ध्यान रखना चाहिए। जैसे किसी अखबार या पत्रिका के संपादक ने अगर आपको 250 शब्दों में रिपोर्ट या फ़ीचर लिखने को कहा है तो आपको उस शब्द सीमा का ध्यान रखना पड़ेगा। इसकी वजह यह है कि अखबार या पत्रिका में असीमित जगह नहीं होती। साथ ही उन्हें विभिन्न विषयों और मुद्दों पर सामग्री प्रकाशित करनी होती है। महत्त्व और जगह की उपलब्धता के अनुसार वे निश्चित करते हैं कि किसे कितनी जगह मिलेगी।

मुद्रित माध्यम के लेखक या पत्रकार को इस बात का भी ध्यान रखना पड़ता है कि छपने से पहले आलेख में मौजूद सभी गलतियों और अशुद्धियों को दूर कर दिया जाए क्योंकि एक बार प्रकाशन के बाद वह गलती या अशुद्धि वहीं चिपक जाएगी। उसे सुधारने के लिए अखबार या पत्रिका के अगले अंक का इंतज़ार करना पड़ेगा। यही कारण है कि अखबार या पत्रिका में यथासंभव कोशिश की जाती है कि कोई गलती या अशुद्धि न छप जाए। इसके लिए अखबार / पत्रिकाओं में संपादक के साथ एक पूरी संपादकीय टीम होती है जिसकी मुख्य ज़िम्मेदारी प्रकाशन के लिए जा रही सामग्री से गलतियों और अशुद्धियों को हटाकर उसे प्रकाशन योग्य बनाना है।

मुद्रित माध्यमों में लेखन के लिए ध्यान रखने योग्य बातें

1. लेखन में भाषा, व्याकरण, वर्तनी और शैली का ध्यान रखना ज़रूरी है। प्रचलित भाषा के प्रयोग पर ज़ोर रहता है।	2. समय-सीमा और आवंटित जगह के अनुशासन का पालन करना हर हाल में ज़रूरी है।	3. लेखन और प्रकाशन के बीच गलतियों और अशुद्धियों को ठीक करना ज़रूरी होता है।	4. लेखन में सहज प्रवाह के लिए तारतम्यता बनाए रखना ज़रूरी है।

रेडियो

रेडियो श्रव्य माध्यम है। इसमें सब कुछ ध्वनि, स्वर और शब्दों का खेल है। इन सब वजहों से रेडियो को श्रोताओं से संचालित माध्यम माना जाता है। रेडियो पत्रकारों को अपने श्रोताओं का पूरा ध्यान रखना चाहिए। इसकी वजह यह है कि अखबार के पाठकों को यह सुविधा उपलब्ध रहती है कि वे अपनी पसंद और इच्छा से कभी भी और कहीं से भी पढ़ सकते हैं। अगर किसी समाचार / लेख या फ़ीचर को पढ़ते हुए कोई बात समझ में नहीं आई तो पाठक उसे फिर से पढ़ सकता है या शब्दकोश में उसका अर्थ देख सकता है या किसी से पूछ सकता है। लेकिन रेडियो के श्रोता को यह सुविधा उपलब्ध नहीं होती। वह अखबार की तरह रेडियो समाचार बुलेटिन को कभी भी और कहीं से भी नहीं सुन सकता। उसे बुलेटिन के प्रसारण समय का इंतज़ार करना होगा और फिर शुरू से लेकर अंत तक बारी-बारी से एक के बाद दूसरा समाचार सुनना होगा। इस बीच, वह इधर-उधर नहीं आ जा सकता और न ही उसके पास किसी गूढ़ शब्द या वाक्यांश के आने पर शब्दकोश का सहारा लेने का समय होता है। अगर वह शब्दकोश में अर्थ ढूँढ़ने लगेगा तो बुलेटिन आगे निकल जाएगा।

स्पष्ट है कि रेडियो में अखबार की तरह पीछे लौटकर सुनने की सुविधा नहीं है। अगर रेडियो बुलेटिन में कुछ भी भ्रामक या अरुचिकर है तो संभव है कि श्रोता तुरंत स्टेशन बंद कर दे। दरअसल, रेडियो मूलतः एकरेखीय (लीनियर) माध्यम है और रेडियो समाचार बुलेटिन का स्वरूप, ढाँचा और शैली इस आधार पर ही तय होता है। रेडियो की तरह टेलीविज़न भी एकरेखीय माध्यम है लेकिन वहाँ शब्दों और ध्वनियों की तुलना में दृश्यों / तसवीरों का महत्त्व सर्वाधिक होता है। टी.वी. में शब्द दृश्यों के अनुसार और उनके सहयोगी के रूप में चलते हैं। लेकिन रेडियो में शब्द और आवाज़ ही सब कुछ है।

© NCERT not to be republished

वैसे तो तीनो ही माध्यमों–प्रिंट, रेडियो और टी.वी. की अपनी-अपनी चुनौतियाँ हैं लेकिन संभवत: रेडियो प्रसारणकर्ताओं के लिए अपने श्रोताओ को बाँधकर रखने की चुनौती सबसे कठिन है।

रेडियो समाचार की संरचना

रेडियो के लिए समाचार लेखन अखबारों से कई मामलों में भिन्न है। चूँकि दोनों माध्यमों की प्रकृति अलग-अलग है, इसलिए समाचार लेखन करते हुए उसका ध्यान ज़रूर रखा जाना चाहिए।

रेडियो समाचार की संरचना अखबारों या टी.वी. की तरह उलटा पिरामिड (इंवर्टेड पिरामिड) शैली पर आधारित होती है। चाहे आप किसी भी माध्यम के लिए समाचार लिख रहे हों, समाचार लेखन की सबसे प्रचलित, प्रभावी और लोकप्रिय शैली उलटा पिरामिड-शैली ही है। सभी तरह के जनसंचार माध्यमों में सबसे अधिक यानी 90 प्रतिशत खबरें या स्टोरीज़ इसी शैली में लिखी जाती हैं।

उलटा पिरामिड-शैली में समाचार के सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य को सबसे पहले लिखा जाता है और उसके बाद घटते हुए महत्त्वक्रम में अन्य तथ्यों या सूचनाओं को लिखा या बताया जाता है। इस शैली में किसी घटना / विचार / समस्या का ब्योरा कालानुक्रम के बजाए सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य या सूचना से शुरू होता है। तात्पर्य यह कि इस शैली में, कहानी की तरह क्लाइमेक्स अंत में नहीं बल्कि खबर के बिलकुल शुरू में आ जाता है। उलटा पिरामिड शैली में कोई निष्कर्ष नहीं होता।

उलटा पिरामिड शैली के तहत समाचार को तीन हिस्सों में विभाजित किया जा सकता है–इंट्रो, बॉडी और समापन। समाचार के इंट्रो या लीड को हिंदी में मुखड़ा भी कहते हैं। इसमें खबर के मूल तत्त्व को शुरू की दो या तीन पंक्तियों में बताया जाता है। यह खबर का सबसे अहम हिस्सा होता है। इसके बाद बॉडी में समाचार के विस्तृत ब्योरे को घटते हुए महत्त्वक्रम में लिखा जाता है। हालाँकि इस शैली में अलग से समापन जैसी कोई चीज़ नहीं होती और यहाँ तक कि प्रासंगिक तथ्य और सूचनाएँ दी जा सकती हैं, अगर ज़रूरी हो तो समय और जगह की कमी को देखते हुए आखिरी कुछ लाइनों या पैराग्राफ़ को काटकर हटाया भी जा सकता है और उस स्थिति में खबर वहीं समाप्त हो जाती है।

रेडियो समाचार के एक इंट्रो पर गौर कीजिए–**उत्तर प्रदेश के उन्नाव ज़िले में एक बस दुर्घटना में आज बीस लोगों की मौत हो गई। मृतकों में पाँच महिलाएँ और तीन बच्चे शामिल हैं।**

एक और उदाहरण देखिए– **महाराष्ट्र में बाढ़ का संकट गहराता जा रहा है। राज्य में बाढ़ से मरनेवालों की संख्या बढ़कर चार सौ पैंसठ हो गई है।**

रेडियो के लिए समाचार लेखन–बुनियादी बातें

रेडियो के लिए समाचार कॉपी तैयार करते हुए कुछ बुनियादी बातों का ध्यान रखना बहुत ज़रूरी है।

(क) ***साफ़-सुथरी और टाइप्ड कॉपी***–रेडियो समाचार कानों के लिए यानी सुनने के लिए होते हैं, इसलिए उनके लेखन में इसका ध्यान रखना ज़रूरी हो जाता है। लेकिन एक महत्त्वपूर्ण

तथ्य नहीं भूलना चाहिए कि सुने जाने से पहले समाचार वाचक या वाचिका उसे पढ़ते हैं और तब वह श्रोताओं तक पहुँचता है। इसलिए समाचार कॉपी ऐसे तैयार की जानी चाहिए कि उसे पढ़ने में वाचक/वाचिका को कोई दिक्कत नहीं हो। अगर समाचार कॉपी टाइप्ड और साफ़–सुथरी नहीं है तो उसे पढ़ने के दौरान वाचक/वाचिका के अटकने या गलत पढ़ने का खतरा रहता है और इससे श्रोताओं का ध्यान बँटता है या वे भ्रमित हो जाते हैं।

प्रसारण के लिए तैयार की जा रही समाचार कॉपी को कंप्यूटर पर ट्रिपल स्पेस में टाइप किया जाना चाहिए। कॉपी के दोनों ओर पर्याप्त हाशिया छोड़ा जाना चाहिए। एक लाइन में अधिकतम 12–13 शब्द होने चाहिए। पंक्ति के आखिर में कोई शब्द विभाजित नहीं होना चाहिए और पृष्ठ के आखिर में कोई लाइन अधूरी नहीं होनी चाहिए। प्रत्येक लाइन में कितने शब्द हैं, इस बारे में एक सुसंगतता होने से बुलेटिन के संपादक को यह तय करने में सुविधा होती है कि कुल शब्द संख्या के आधार पर कितनी खबरें लेनी हैं और किस खबर को कितना बड़ा लेना है। समाचार कॉपी में ऐसे जटिल और उच्चारण में कठिन शब्द, संक्षिप्ताक्षर (एब्रीवियेशंस), अंक आदि नहीं लिखने चाहिए जिन्हें पढ़ने में ज़बान लड़खड़ाने लगे।

अंकों को लिखने के मामले में खास सावधानी रखनी चाहिए। जैसे–एक से दस तक के अंकों को शब्दों में और 11 से 999 तक अंकों में लिखा जाना चाहिए। लेकिन 2837550 लिखने के बजाय अट्ठाइस लाख सैंतीस हज़ार पाँच सौ पचास लिखा जाना चाहिए अन्यथा वाचक/वाचिका को पढ़ने में बहुत मुश्किल होगी। इसे हमेशा ध्यान में रखना चाहिए। इसी तरह अखबारों में % और $ जैसे संकेत चिह्नों से काम चल जाता है लेकिन रेडियो में यह पूरी तरह वर्जित है यानी प्रतिशत और डॉलर लिखा जाना चाहिए। जहाँ भी संभव और उपयुक्त हो, दशमलव को उसके नज़दीकी पूर्णांक में लिखना बेहतर होता है। इसी तरह 2837550 रुपए को रेडियो में लगभग अट्ठाइस लाख रुपए लिखना श्रोताओं को समझाने के लिहाज़ से बेहतर है। इस तरह की वित्तीय संख्याओं को उनके नज़दीकी पूर्णांक में लिखना चाहिए। लेकिन इसके कुछ अपवाद भी हैं। जैसे खेलों के स्कोर को उसी तरह लिखना चाहिए। सचिन तेंदुलकर ने अगर 98 रन बनाए हैं तो उसे लगभग सौ रन नहीं लिख सकते। इसी तरह मुद्रास्फीति के आँकड़े नज़दीकी पूर्णांक में नहीं बल्कि दशमलव में ही लिखे जाने चाहिए।

वैसे रेडियो समाचार में अत्यधिक आँकड़ों और संख्या का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए क्योंकि श्रोताओं के लिए उन्हें समझ पाना काफ़ी कठिन होता है। आँकड़े तुलनात्मक हों तो बेहतर होता है। **इस साल गेहूँ का उत्पादन पिछले वर्ष के 80 लाख टन से बढ़कर 86 लाख टन हो गया है** की तुलना में **इस साल गेहूँ का उत्पादन पिछले वर्ष की तुलना में साढ़े सात फ़ीसदी बढ़कर 86 लाख टन पहुँच गया है** ज़्यादा संप्रेषणीय है। रेडियो समाचार कभी भी संख्या से नहीं शुरू होना चाहिए। इसी तरह तिथियों को उसी तरह लिखना चाहिए जैसे हम बोलचाल में इस्तेमाल करते हैं–15 अगस्त उन्नीस सौ पचासी न कि अगस्त 15, 1985।

(ख) *डेडलाइन, संदर्भ और संक्षिप्ताक्षर का प्रयोग*–रेडियो में अखबारों की तरह डेडलाइन अलग से नहीं बल्कि समाचार से ही गुँथी होती है। हम इसकी चर्चा पहले कर चुके हैं। इसी तरह समाचार में समय संदर्भ का मसला भी महत्त्वपूर्ण है। अखबार दिन में एक बार और वह भी सुबह (और कहीं शाम) छपकर आता है जबकि रेडियो पर चौबीसों घंटे समाचार चलते रहते

हैं। श्रोता के लिए समय का फ्रेम हमेशा आज होता है। इसलिए समाचार में आज, आज सुबह, आज दोपहर, आज शाम, आज तड़के आदि का इस्तेमाल किया जाता है। इसी तरह ...बैठक कल होगी या ...कल हुई बैठक में... का प्रयोग किया जाता है। इसी सप्ताह, अगले सप्ताह, पिछले सप्ताह, इस महीने, अगले महीने, पिछले महीने, इस साल, पिछले साल, अगले साल, अगले बुधवार या पिछले शुक्रवार का इस्तेमाल करना चाहिए।

संक्षिप्ताक्षरों के इस्तेमाल में काफ़ी सावधानी बरतनी चाहिए। बेहतर तो यही होगा कि उनके प्रयोग से बचा जाए और अगर ज़रूरी हो तो समाचार के शुरू में पहले उसे पूरा दिया जाए, फिर संक्षिप्ताक्षर का प्रयोग किया जाए। संक्षिप्ताक्षरों के प्रयोग के दौरान यह देखा जाना चाहिए कि वह कितना लोकप्रिय है। जैसे डब्ल्यूटीओ, यूनिसेफ़, सार्क, आईसीआईसीआई बैंक का इस्तेमाल सीधे भी किया जा सकता है।

टेलीविज़न

जब हम टेलीविज़न लेखन की बात करते हैं तो यह साफ़ है कि इसमें दृश्यों की अहमियत सबसे ज़्यादा है। यह कहने की ज़रूरत नहीं कि टेलीविज़न देखने और सुनने का माध्यम है और इसके लिए समाचार या आलेख (स्क्रिप्ट) लिखते समय इस बात पर खास ध्यान रखने की ज़रूरत पड़ती है कि आपके शब्द परदे पर दिखने वाले दृश्य के अनुकूल हों। अभी तक हमने प्रिंट और रेडियो माध्यम के लिए लेखन की शर्तों की चर्चा की लेकिन टेलीविज़न लेखन इन दोनों ही माध्यमों से काफ़ी अलग है। इसमें कम से कम शब्दों में ज़्यादा से ज़्यादा खबर बताने की कला का इस्तेमाल होता है।

इसलिए टी.वी. के लिए खबर लिखने की बुनियादी शर्त दृश्य के साथ लेखन है। दृश्य यानी कैमरे से लिए गए शॉट्स, जिनके आधार पर खबर बुनी जानी है। अगर शॉट्स आसमान के हैं तो हम आसमान की बात लिखेंगे, समंदर की नहीं। अगर कहीं आग लगी हुई है तो हम उसका ज़िक्र

गतिविधि

दूरदर्शन न्यूज़ और कोई एक निजी समाचार चैनल जैसे आजतक, एनडीटी.वी.-इंडिया, स्टार न्यूज़ या जी न्यूज़ आदि के रात 9 बजे के बुलेटिन, एक दिन का अंतर देकर लगातार दो सप्ताह तक देखिए। जैसे एक दिन डीडी न्यूज़ देखिए तो अगले दिन कोई निजी समाचार चैनल। दोनों के समाचार बुलेटिन के कलेवर और प्रस्तुति की तुलना करते हुए 200 शब्दों की एक रिपोर्ट तैयार कीजिए। अपने शिक्षक के साथ कक्षा में चर्चा कीजिए।

करेंगे पानी का नहीं। मान लें कि दिल्ली की किसी इमारत में आग लगने की खबर लिखनी है। अखबार में आमतौर पर इस खबर का इंट्रो कुछ इस तरह का बन सकता है–**दिल्ली के लाजपत नगर की एक दुकान में आज शाम आग लगने से दो लोग घायल हो गए और लाखों रुपए की संपत्ति जलकर राख हो गई। ये आग शॉर्ट सर्किट की वजह से लगी।**

लेकिन टी.वी. में इस खबर की शुरुआत कुछ अलग होगी। दरअसल टेलीविज़न पर खबर दो तरह से पेश की जाती है। इसका शुरुआती हिस्सा, जिसमें मुख्य खबर होती है, बगैर दृश्य के न्यूज़ रीडर या एंकर पढ़ता है। दूसरा हिस्सा वह होता है जहाँ से परदे पर एंकर की जगह खबर से संबंधित दृश्य दिखाए जाते हैं। इसलिए टेलीविज़न पर खबर दो हिस्सों में बँटी होती है। अगर खबरों के प्रस्तुतिकरण के तरीकों पर बात करें तो इसके भी कई तकनीकी पहलू हैं।

फ़िलहाल हम दिल्ली में आग की जिस खबर की चर्चा कर रहे हैं, उसे टी.वी. में पेश करने के तरीकों पर बात करते हैं। अखबार में जिस तरह का इंट्रो हमने लिखा उसे टी.वी. में एक एंकर सूचना के तौर पर सबसे पहले पढ़ता है लेकिन अगर आग लगने के दृश्य हमारे पास हैं तो प्रारंभिक सूचना के बाद हम इसे इस तरह लिख सकते हैं–**आग की ये लपटें सबसे पहले शाम चार बजे दिखीं, फिर तेज़ी से फैल गई...।** निश्चय ही, इस खबर की इससे भी बेहतर शुरुआत हो सकती हैं, लेकिन दृश्य के साथ बँधे होने की शर्त हर खबर पर लागू होगी।

दरअसल टेलीविज़न के लिए लेखन कई तरीके से होता है। चूँकि टेलीविज़न पर खबर पेश करने के तरीकों में लगातार बदलाव आ रहा है इसलिए इसे लिखने के तरीके भी लगातार बदल रहे हैं। इसे समझने के लिए ज़रूरी है कि हम टी.वी. पर दिखाई जाने वाली खबरों के प्रचलित ढाँचे या फॉर्मेट को समझें।

टी.वी. खबरों के विभिन्न चरण

किसी भी टी.वी. चैनल पर खबर देने का मूल आधार वही होता है जो प्रिंट या रेडियो पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रचलित है यानी सबसे पहले सूचना देना। टी.वी. में भी यह सूचनाएँ कई चरणों से होकर दर्शकों के पास पहुँचती हैं। ये चरण हैं–

- फ़्लैश या ब्रेकिंग न्यूज़
- ड्राई एंकर
- फ़ोन-इन
- एंकर-विजुअल
- एंकर-बाइट
- लाइव
- एंकर-पैकेज

फ़्लैश या ब्रेकिंग न्यूज़–सबसे पहले कोई बड़ी खबर फ़्लैश या ब्रेकिंग न्यूज़ के रूप में तत्काल दर्शकों तक पहुँचाई जाती है। इसमें कम से कम शब्दों में महज़ सूचना दी जाती है।

ड्राई एंकर–इसमें एंकर खबर के बारे में दर्शकों को सीधे-सीधे बताता है कि कहाँ, क्या, कब और कैसे हुआ। जब तक खबर के दृश्य नहीं आते एंकर, दर्शकों को रिपोर्टर से मिली जानकारियों के आधार पर सूचनाएँ पहुँचाता है।

फ़ोन-इन–इसके बाद खबर का विस्तार होता है और एंकर रिपोर्टर से फ़ोन पर बात करके सूचनाएँ दर्शकों तक पहुँचाता है। इसमें रिपोर्टर घटना वाली जगह पर मौजूद होता है और वहाँ से उसे जितनी ज़्यादा से ज़्यादा जानकारियाँ मिलती हैं, वह दर्शकों को बताता है।

एंकर-विजुअल–जब घटना के दृश्य या विजुअल मिल जाते हैं तब उन दृश्यों के आधार पर खबर लिखी जाती है, जो एंकर पढ़ता है। इस खबर की शुरुआत भी प्रारंभिक सूचना से होती है और बाद में कुछ वाक्यों पर प्राप्त दृश्य दिखाए जाते हैं।

एंकर-बाइट–बाइट यानी कथन। टेलीविज़न पत्रकारिता में बाइट का काफ़ी महत्त्व है। टेलीविज़न में किसी भी खबर को पुष्ट करने के लिए इससे संबंधित बाइट दिखाई जाती है। किसी घटना की सूचना देने और उसके दृश्य दिखाने के साथ ही इस घटना के बारे में प्रत्यक्षदर्शियों या संबंधित व्यक्तियों का कथन दिखा और सुनाकर खबर को प्रामाणिकता प्रदान की जाती है।

लाइव–लाइव यानी किसी खबर का घटनास्थल से सीधा प्रसारण। सभी टी.वी. चैनल कोशिश करते हैं कि किसी बड़ी घटना के दृश्य तत्काल दर्शकों तक सीधे पहुँचाए जा सकें। इसके लिए मौके पर मौजूद रिपोर्टर और कैमरामैन ओ.बी. वैन के ज़रिये घटना के बारे में सीधे दर्शकों को दिखाते और बताते हैं।

एंकर-पैकेज–पैकेज किसी भी खबर को संपूर्णता के साथ पेश करने का एक ज़रिया है। इसमें संबंधित घटना के दृश्य, इससे जुड़े लोगों की बाइट, ग्राफ़िक के ज़रिये ज़रूरी सूचनाएँ आदि होती हैं।

टेलीविज़न लेखन इन तमाम रूपों को ध्यान में रखकर किया जाता है। जहाँ जैसी ज़रूरत होती है, वहाँ वैसे वाक्यों का इस्तेमाल होता है। शब्द का काम दृश्य को आगे ले जाना है ताकि वह दूसरे दृश्यों से जुड़ सके, उसमें निहित अर्थ को सामने लाना है, ताकि खबर के सारे आशय खुल सकें।

अकसर टी.वी. पर खबर लिखने की एक प्रचलित शैली दिखाई पड़ती है। पहला वाक्य दृश्य के वर्णन से शुरू होता है। जैसे–**दिल्ली के रामलीला मैदान में हो रही ये सभा...।** या फिर **झील में छलांग लगाते बच्चे...।**

इस प्रचलित शैली में आसानी यह है कि बिना किसी कल्पनाशीलता के टी.वी. रिपोर्टिंग का बुनियादी अनुशासन, यानी दृश्य पर लेखन निभ जाता है, लेकिन इसमें शब्दों की भूमिका बेमानी हो जाती है। दर्शक जो अपनी आँख से देख रहा है, उसे दुहराने का कोई फ़ायदा नहीं है। कोई कल्पनाशील रिपोर्टर इन्हीं दृश्यों को अपने शब्दों से ज़्यादा बड़े मायने दे सकता है। जैसे–**दिल्ली के रामलीला मैदान में हो रही इस सभा में लोग लाए नहीं गए हैं, अपनी मर्ज़ी से आए हैं** या फिर झील में छलांग लगाते बच्चों के शॉट्स के साथ लिखा जा सकता है–**इन दिनों तेज़ गरमी से निजात पाने का एक तरीका ये भी है...।**

अगर वेलेंटाइन डे सेलिब्रेशन की खबर लेनी हो और एक-दूसरे को बधाई देने का कोई शॉट हो तो इसे कई तरीके से लिखा जा सकता है। इसे प्रचलित तरीके में इस प्रकार लिखा जा सकता है कि **वेलेंटाइन डे पर एक-दूसरे को बधाई देते ये छात्र...।** दूसरा तरीका इसको किसी अर्थ से जोड़ने का है। यहीं से रिपोर्टर की दृष्टि सक्रिय होती है और उसकी अपनी समझ भी दिखाई देती है। वह लिख सकता है–**भारतीय समाज में आए इस नए चलन से लोग खुश भी हैं और दुखी भी...** या फिर **यह नयी आधुनिकता परंपरावादियों को रास नहीं आ रही...।**

लेकिन टी.वी. सिर्फ़ दृश्य और शब्द नहीं होता, बीच में होती हैं ध्वनियाँ। टी.वी. में दृश्य और शब्द–यानी विज़ुअल और वॉयस ओवर (वीओ) के साथ दो तरह की आवाज़ें और होती हैं। एक तो वे कथन या बाइट जो खबर बनाने के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं और दूसरी वे प्राकृतिक आवाज़ें जो दृश्य के साथ-साथ चली आती हैं–यानी चिड़ियों का चहचहाना या फिर गाड़ियों के गुज़रने की आवाज़ या फिर किसी कारखाने में किसी मशीन के चलने की ध्वनि।

टी.वी. के लिए खबर लिखते हुए इन दोनों तरह की आवाज़ों का ध्यान रखना ज़रूरी है। पहली तरह की आवाज़ यानी कथन या बाइट का तो खैर ध्यान रखा ही जाता है। अकसर टी. वी. की खबर बाइट्स के आसपास ही बुनी जाती है। लेकिन यह काम पर्याप्त सावधानी से किया जाना चाहिए। कथनों से खबर तो बनती ही है, टी.वी. के लिए उसका फ़ॉर्म भी बनता है। बाइट सिर्फ़ किसी का बयान भर नहीं होते जिन्हें खबर के बीच उसकी पुष्टिभर के लिए डाल दिया जाता है। वह दो वॉयस ओवर या दृश्यों का अंतराल भरने के लिए पुल का भी काम करता है।

लेकिन टी.वी. में सिर्फ़ बाइट या वॉयस ओवर नहीं होते, और भी ध्वनियाँ होती हैं। उन ध्वनियों से भी खबर बनती है या उसका मिजाज़ बनता है। इसलिए किसी खबर का वॉयस ओवर लिखते हुए उसमें शॉट्स के मुताबिक ध्वनियों के लिए गुंजाइश छोड़ देनी चाहिए। टी.वी. में ऐसी ध्वनियों को **नेट** या **नेट साउंड** यानी प्राकृतिक आवाज़ें कहते हैं–यानी वो आवाज़ें जो शूट करते हुए खुद-ब-खुद चली आती हैं। जैसे रिपोर्टर किसी आंदोलन की खबर ला रहा हो जिसमें खूब नारे लगे हों। वह अगर सिर्फ़ इतना बताकर निकल जाता है कि उसमें कई नारे लगे और उसके बाद किसी नेता की बाइट का इस्तेमाल कर लेता है तो यह अच्छी खबर का नमूना नहीं कहलाएगा। उसे वे नारे लगते हुए दिखाना होगा और इसकी गुंजाइश अपने वीओ में छोड़नी होगी।

ध्वनियों के साथ-साथ ऐसे दृश्यों के अंतराल भी खबर में उपयोगी होते हैं। जैसे किसी क्रिकेट मैच की खबर में वॉयस ओवर खत्म होने के बाद भी कुछ देर तक मैदान में शॉट्स चलते रहें तो दर्शक को अच्छा लगता है। यानी ऐसी खबरें लिखते हुए भाषा में बहुत सब्र की ज़रूरत होती है। रिपोर्टर सारी बातें खुद बता देना चाहते हैं, जबकि ज़्यादा बेहतर ये होता है कि दृश्य और ध्वनियाँ भी बोलें। छोटे-छोटे वाक्यों और सुगठित संपादन से टी.वी. की अच्छी खबर खिलकर आती है।

रेडियो और टेलीविज़न समाचार की भाषा और शैली

दरअसल, किसी भी तरह के लेखन का कोई फ़ार्मूला नहीं हो सकता–रेडियो और टी.वी. पत्रकारिता का भी नहीं। प्रयोगशीलता भाषा को भी समृद्ध करती है और माध्यम को भी। रेडियो और टी.वी. आम आदमी के माध्यम हैं। भारत जैसे विकासशील देश में उसके श्रोताओं और दर्शकों में पढ़े-लिखे लोगों से निरक्षर तक और मध्यम वर्ग से लेकर किसान-मज़दूर तक सभी हैं। इन सभी लोगों की सूचना की ज़रूरतें पूरी करना ही रेडियो और टी.वी. का उद्देश्य है। ज़ाहिर है कि लोगों तक पहुँचने का माध्यम भाषा है और इसलिए भाषा ऐसी होनी चाहिए कि वह सभी को आसानी से समझ में आ सके लेकिन साथ ही भाषा के स्तर और गरिमा के साथ कोई समझौता भी न करना पड़े।

इस कारण हमारा यह दायित्व है कि हम आपसी बोलचाल में जिस भाषा का इस्तेमाल करते हैं, उसी तरह की भाषा का इस्तेमाल रेडियो और टी.वी. समाचार में भी करें। सरल भाषा लिखने का सबसे बेहतर उपाय यह है कि वाक्य छोटे, सीधे और स्पष्ट लिखे जाएँ। असल में, जब आप खुद किसी चीज़ को ठीक से समझ नहीं पाते तो उसे जटिल तरीके से लिखते हैं। इसलिए आप जब भी कोई खबर लिख रहे हों तो पहले उसकी प्रमुख बातों को ठीक से समझने की कोशिश कीजिए और उसके बाद सोचिए कि अगर आपको यह खबर अपने माता-पिता, छोटी बहन और सहपाठी को बतानी होती तो कैसे बताते?

रेडियो और टी.वी. में आप कितनी सरल, संप्रेषणीय और प्रभावी भाषा लिख रहे हैं, यह जाँचने का एक बेहतर तरीका यह है कि आप समाचार लिखने के बाद उसे बोल-बोलकर पढ़ें। इस प्रक्रिया में आपको स्वयं यह अहसास हो जाएगा कि भाषा में कितना प्रवाह है, उसे पढ़ने में समाचार वाचक / वाचिका या एंकर को कोई दिक्कत तो नहीं होगी, या उसे सभी लोग आसानी से समझ तो जाएँगे?

रेडियो और टी.वी. समाचार में भाषा और शैली के स्तर पर काफ़ी सावधानी बरतनी पड़ती है। ऐसे कई शब्द हैं जिनका अखबारों में धड़ल्ले से इस्तेमाल होता है लेकिन रेडियो और टी.वी. में उनके प्रयोग से बचा जाता है। जैसे *निम्नलिखित, उपरोक्त, अधोहस्ताक्षरित* और *क्रमांक* आदि शब्दों का प्रयोग इन माध्यमों में बिलकुल मना है। इसी तरह *द्वारा* शब्द के इस्तेमाल से भी बचने की कोशिश की जाती है क्योंकि इसका प्रयोग कई बार बहुत भ्रामक अर्थ देने लगता है। उदाहरण के लिए इस वाक्य पर गौर कीजिए–**पुलिस द्वारा चोरी करते हुए दो व्यक्तियों को पकड़ लिया गया।** इसके बजाय **पुलिस ने दो व्यक्तियों को चोरी करते हुए पकड़ लिया।** ज़्यादा स्पष्ट है।

इसी तरह *तथा, एवं, अथवा, व, किंतु, परंतु, यथा* आदि शब्दों के प्रयोग से बचना चाहिए और उनकी जगह *और, या, लेकिन* आदि शब्दों का इस्तेमाल करना चाहिए। साफ़-सुथरी और सरल भाषा लिखने के लिए गैरज़रूरी विशेषणों, सामासिक और तत्सम शब्दों, अतिरंजित उपमाओं आदि से बचना चाहिए। इनसे भाषा कई बार बोझिल होने लगती है। मुहावरों के इस्तेमाल से भाषा आकर्षक और प्रभावी बनती है। इसलिए उनका प्रयोग होना चाहिए। लेकिन मुहावरों का इस्तेमाल स्वाभाविक और जहाँ ज़रूरी हो, वहीं होना चाहिए अन्यथा वे भाषा के स्वाभाविक प्रवाह को बाधित करते हैं।

गतिविधि

नेशनल चैनल पर प्रसारित रात नौ बजे के समाचार बुलेटिन को ध्यान से देखिए और सुनिए। देखे और सुने गए समाचार में बाइट, वायस ओवर और नेट को अलग कर लिखें और अगले दिन कक्षा में इस पर चर्चा करें।

भाषा को साफ़ रखने के कुछ जाने-पहचाने नुस्खे हैं। एक तो वाक्य छोटे-छोटे हों। एक वाक्य में एक ही बात कहने का धीरज हो। वाक्यों में तारतम्य ऐसा हो कि कुछ टूटता या छूटता हुआ न लगे। दूसरी बात यह कि शब्द प्रचलित हों और उनका उच्चारण सहजता से किया जा सके। **क्रय-विक्रय** की जगह **खरीद-बिक्री**, **स्थानांतरण** की जगह **तबादला** और **पंक्ति** की जगह **कतार** टी.वी. में सहज माने जाते हैं, यानी वैसे शब्द जो बोलचाल के करीब हों, उनसे विद्वता न झलके, बल्कि अपना सहज पड़ोस दिखाई पड़े।

इंटरनेट

इंटरनेट पत्रकारिता, ऑनलाइन पत्रकारिता, साइबर पत्रकारिता या वेब पत्रकारिता। इसे आप कुछ भी कह लीजिए। आप इसे चाहे जो कहें, नयी पीढ़ी के लिए अब यह एक आदत-सी बनती जा रही है। जो लोग इंटरनेट के अभ्यस्त हैं, या जिन्हें चौबीसों घंटे इंटरनेट की सुविधा उपलब्ध है, उन्हें अब कागज़ पर छपे हुए अखबार उतने ताज़े और मनभावन नहीं लगते। उन्हें हर घंटे-दो-घंटे में खुद को **अपडेट** करने की लत लगती जा रही है!

भारत में कंप्यूटर साक्षरता की दर बहुत तेज़ी से बढ़ रही है। पर्सनल कंप्यूटर इस्तेमाल करनेवालों की संख्या में भी लगातार इज़ाफ़ा हो रहा है। हर साल करीब 50-55 फ़ीसदी की रफ़्तार से इंटरनेट कनेक्शनों की संख्या बढ़ रही है। उसकी वजह यह है कि इंटरनेट पर आप एक ही झटके में झुमरीतलैया से लेकर होनोलूलू तक की खबरें पढ़ सकते हैं। दुनियाभर की चर्चाओं-परिचर्चाओं में शरीक हो सकते हैं और अखबारों की पुरानी फाइलें खंगाल सकते हैं।

सबसे पहले यह स्पष्ट कर देना ज़रूरी है कि इंटरनेट सिर्फ़ एक टूल यानी औज़ार है, जिसे आप सूचना, मनोरंजन, ज्ञान और व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक संवादों के आदान-प्रदान के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं। लेकिन इंटरनेट जहाँ सूचनाओं के आदान-प्रदान का बेहतरीन औज़ार है, वहीं वह अश्लीलता, दुष्प्रचार और गंदगी फैलाने का भी ज़रिया है। इंटरनेट पर पत्रकारिता के भी दो रूप हैं। पहला तो इंटरनेट का एक माध्यम या औज़ार के तौर पर इस्तेमाल, यानी खबरों के संप्रेषण के लिए इंटरनेट का उपयोग। दूसरा, रिपोर्टर अपनी खबर को एक जगह से दूसरी जगह तक ईमेल के ज़रिये भेजने और समाचारों के संकलन, खबरों के सत्यापन और पुष्टिकरण में भी इसका इस्तेमाल करता है। रिसर्च या शोध का काम तो इंटरनेट ने बेहद आसान कर दिया है। टेलीविज़न या अन्य समाचार माध्यमों में खबरों के बैकग्राउंडर तैयार करने या किसी खबर की पृष्ठभूमि तत्काल जानने के लिए जहाँ पहले ढेर सारी अखबारी कतरनों की फ़ाइलों को ढूँढ़ना पड़ता था, वहीं आज चंद मिनटों में इंटरनेट विश्वव्यापी संजाल के भीतर से कोई भी बैकग्राउंडर या पृष्ठभूमि खोजी जा सकती है। एक जमाना था जब टेलीप्रिंटर पर एक मिनट में 80 शब्द एक जगह से दूसरी जगह भेजे जा सकते थे, आज स्थिति यह है कि एक सेकेंड में 56 किलोबाइट यानी लगभग 70 हज़ार शब्द भेजे जा सकते हैं।

© NCERT not to be republished

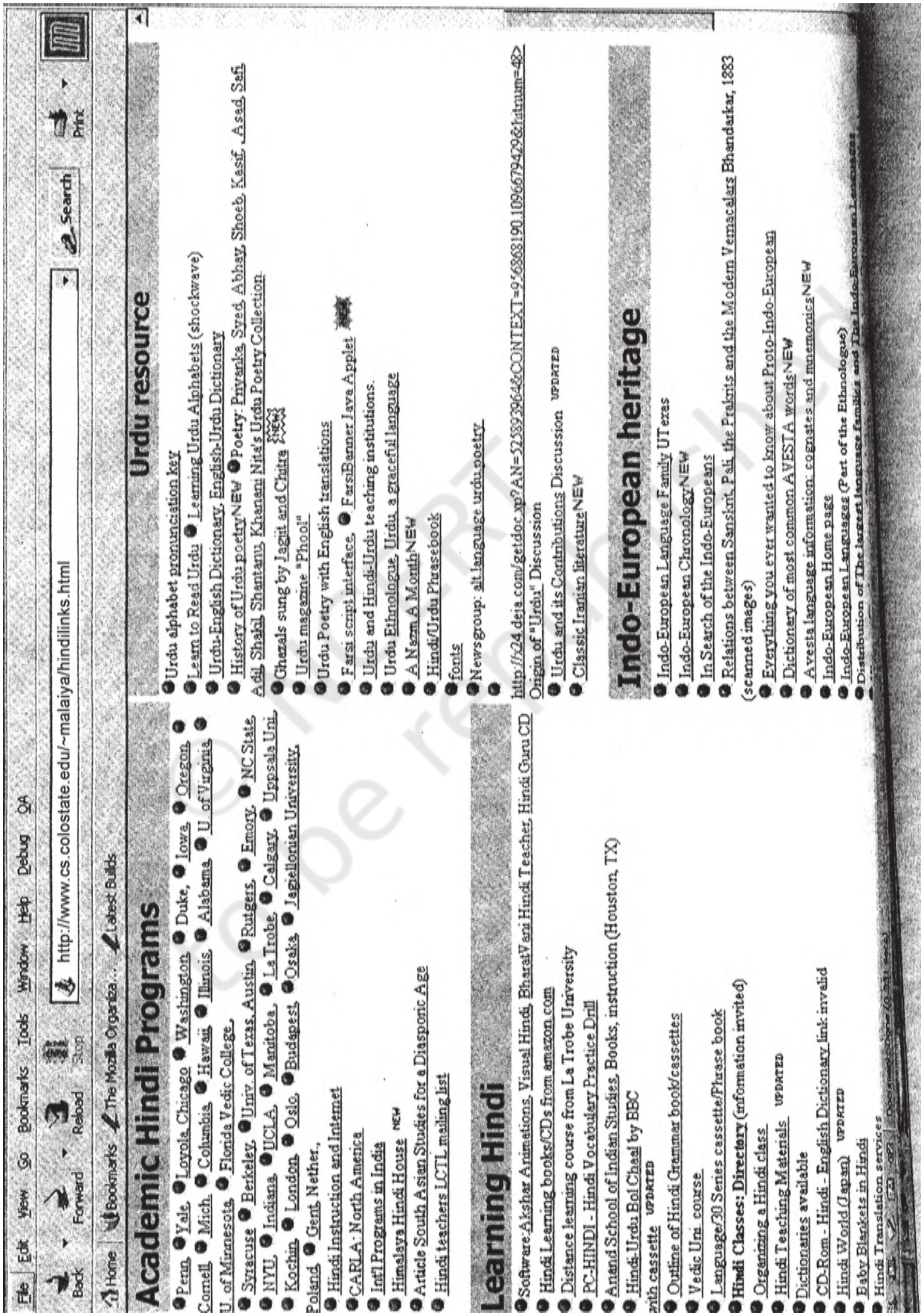

हिंदी की जानकारी के लिए एक वेबसाइट

इंटरनेट पत्रकारिता

एक माध्यम के तौर पर यह तो हुआ इंटरनेट का इस्तेमाल जिसके फ़ायदों से शायद ही कोई इंकार करे। लेकिन इसे इंटरनेट पत्रकारिता नहीं कहा जा सकता है। इंटरनेट पर अखबारों का प्रकाशन या खबरों का आदान-प्रदान ही वास्तव में इंटरनेट पत्रकारिता है। इंटरनेट पर यदि हम, किसी भी रूप में खबरों, लेखों, चर्चा-परिचर्चाओं, बहसों, फ़ीचर, झलकियों, डायरियों के ज़रिये अपने समय की धड़कनों को महसूस करने और दर्ज करने का काम करते हैं तो वही इंटरनेट पत्रकारिता है। आज तमाम प्रमुख अखबार पूरे के पूरे इंटरनेट पर उपलब्ध हैं। कई प्रकाशन समूहों ने और कई निजी कंपनियों ने खुद को इंटरनेट पत्रकारिता से जोड़ लिया है। चूँकि यह एक अलग माध्यम है, इसलिए इस पर पत्रकारिता का तरीका भी थोड़ा-सा अलग है।

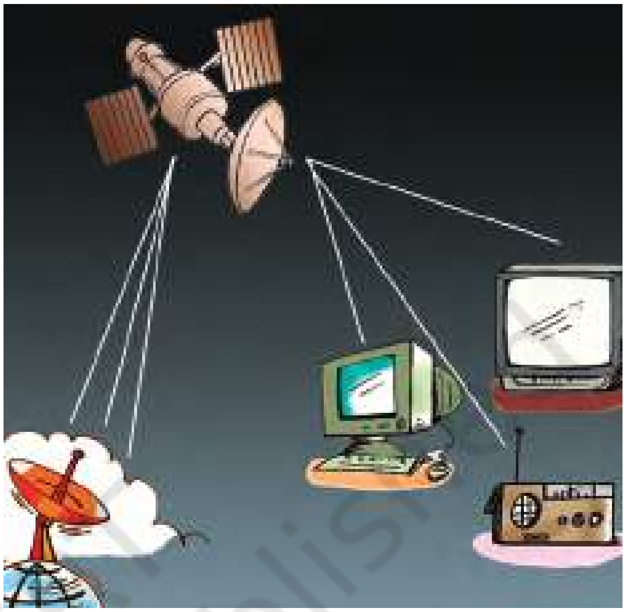

कैसे आती हैं तरंगें

इंटरनेट पत्रकारिता का इतिहास

आइए अब एक नज़र विश्व स्तर पर इंटरनेट पत्रकारिता के स्वरूप और विकास पर डालते हैं। विश्व स्तर पर इस समय इंटरनेट पत्रकारिता का तीसरा दौर चल रहा है। पहला दौर था 1982 से 1992 तक जबकि दूसरा दौर चला 1993 से 2001 तक। तीसरे दौर की इंटरनेट पत्रकारिता 2002 से अब तक की है। पहले चरण में इंटरनेट खुद प्रयोग के धरातल पर था, इसलिए बड़े प्रकाशन समूह यह देख रहे थे कि कैसे अखबारों की उपस्थिति सुपर इंफॉर्मेशन-हाईवे पर दर्ज हो।

तब एओएल यानी अमेरिका ऑनलाइन जैसी कुछ चर्चित कंपनियाँ सामने आईं। लेकिन कुल मिलाकर यह प्रयोगों का दौर था। सच्चे अर्थों में इंटरनेट पत्रकारिता की शुरुआत 1983 से 2002 के बीच हुई। इस दौर में तकनीक के स्तर पर भी इंटरनेट का ज़बरदस्त विकास हुआ। नयी वेब भाषा एचटीएमएल (हाइपर टेक्स्ट मार्क्डअप लैंग्वेज) आई, इंटरनेट ईमेल आया, इंटरनेट एक्सप्लोरर और नेटस्केप नाम के ब्राउजर (वह औज़ार जिसके ज़रिये विश्वव्यापी जाल में गोते लगाए जा सकते हैं) आए। इन्होंने इंटरनेट को और भी सुविधासंपन्न और तेज़-रफ़्तार बना दिया। इस दौर में लगभग सभी बड़े अखबार और टेलीविज़न समूह विश्व जाल में आए। 'न्यूयॉर्क टाइम्स', 'वाशिंगटन पोस्ट', 'सीएनएन', 'बीबीसी' सहित तमाम बड़े घरानों ने अपने प्रकाशनों, प्रसारणों के इंटरनेट संस्करण निकाले। दुनियाभर में इस बीच इंटरनेट का काफ़ी विस्तार हुआ। न्यू मीडिया के नाम पर डॉटकॉम कंपनियों का उफ़ान आया। जिसे देखो, वही इंटरनेट और डॉटकॉम

की बात करने लगा। लोग रातोंरात अमीर बनने का ख्वाब देखने लगे। इसलिए जितनी तेज़ी के साथ यह उफ़ान आया था, उतनी ही तेज़ी के साथ इसका बुलबुला फूटा भी। सन् 1996 से 2002 के बीच अकेले अमेरिका में ही पाँच लाख लोगों को डॉटकॉम की नौकरियों से हाथ धोना पड़ा। विषय सामग्री और पर्याप्त आर्थिक आधार के अभाव में ज़्यादातर डॉटकॉम कंपनियाँ बंद हो गईं। लेकिन यह भी सही है कि बड़े प्रकाशन समूहों ने इस दौर में भी खुद को किसी तरह जमाए रखा। चूँकि जनसंचार के क्षेत्र में सक्रिय लोग यह जानते थे कि और चाहे जो हो, सूचनाओं के आदान-प्रदान के माध्यम के तौर पर इंटरनेट का कोई जवाब नहीं। इसलिए इसकी प्रासंगिकता हमेशा बनी रहेगी। इसलिए कहा जा रहा है कि इंटरनेट पत्रकारिता का 2002 से शुरू हुआ तीसरा दौर सच्चे अर्थों में टिकाऊ हो सकता है।

भारत में इंटरनेट पत्रकारिता

भारत में इंटरनेट पत्रकारिता का अभी दूसरा दौर चल रहा है। भारत के लिए पहला दौर 1993 से शुरू माना जा सकता है जबकि दूसरा दौर सन् 2003 से शुरू हुआ है। पहले दौर में हमारे यहाँ भी प्रयोग हुए। डॉटकॉम का तूफ़ान आया और बुलबुले की तरह फूट गया। अंततः वही टिके रह पाए जो मीडिया उद्योग में पहले से ही टिके हुए थे। आज पत्रकारिता की दृष्टि से 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया', 'हिंदुस्तान टाइम्स', 'इंडियन एक्सप्रेस', 'हिंदू', 'ट्रिब्यून', 'स्टेट्समैन', 'पॉयनियर', 'एनडीटी.वी.', 'आईबीएन', 'जी न्यूज़', 'आजतक' और 'आउटलुक' की साइटें ही बेहतर हैं। 'इंडिया टुडे' जैसी कुछ साइटें भुगतान के बाद ही देखी जा सकती हैं। जो साइटें नियमित अपडेट होती हैं, उनमें 'हिंदू', 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया', 'आउटलुक', 'इंडियन एक्सप्रेस', 'एनडीटी.वी.', 'आजतक' और 'जी न्यूज़' प्रमुख हैं।

लेकिन भारत में सच्चे अर्थों में यदि कोई वेब पत्रकारिता कर रहा है तो वह 'रीडिफ़ डॉटकॉम', 'इंडियाइंफोलाइन' व 'सीफी' जैसी कुछ ही साइटें हैं। रीडिफ़ को भारत की पहली साइट कहा जा सकता है जो कुछ गंभीरता के साथ इंटरनेट पत्रकारिता कर रही है। वेब साइट पर विशुद्ध पत्रकारिता शुरू करने का श्रेय 'तहलका डॉटकॉम' को जाता है।

हिंदी नेट संसार

अब हिंदी की बात करें। हिंदी में नेट पत्रकारिता 'वेब दुनिया' के साथ शुरू हुई। इंदौर के नयी दुनिया समूह से शुरू हुआ यह पोर्टल हिंदी का संपूर्ण पोर्टल है। इसके साथ ही हिंदी के अखबारों ने भी विश्वजाल में अपनी उपस्थिति दर्ज़ करानी शुरू की। 'जागरण', 'अमर उजाला', 'नयी दुनिया', 'हिन्दुस्तान', 'भास्कर', 'राजस्थान पत्रिका', 'नवभारत टाइम्स', 'प्रभात खबर' व 'राष्ट्रीय सहारा' के वेब संस्करण शुरू हुए। 'प्रभासाक्षी' नाम से शुरू हुआ अखबार, प्रिंट रूप में न होकर सिर्फ़ इंटरनेट पर ही उपलब्ध है। आज पत्रकारिता के लिहाज़ से हिंदी की सर्वश्रेष्ठ साइट बीबीसी की है। यही एक साइट है जो इंटरनेट के मानदंडों के हिसाब से चल रही है। वेब दुनिया ने शुरू में काफ़ी आशाएँ जगाई थीं, लेकिन धीरे-धीरे स्टाफ और साइट की अपडेटिंग में कटौती की जाने लगी जिससे पत्रकारिता की वह ताज़गी जाती रही जो शुरू में नज़र आती थी।

हिंदी वेबजगत का एक अच्छा पहलू यह भी है कि इसमें कई साहित्यिक पत्रिकाएँ चल रही हैं। अनुभूति, अभिव्यक्ति, हिंदी नेस्ट, सराय आदि अच्छा काम कर रहे हैं। यही नहीं, सरकार के

तमाम मंत्रालय, विभाग, सार्वजनिक उपक्रम और बैंकों ने भी अपने हिंदी अनुभाग शुरू किए हैं जो भले ही आज तकनीकी उपेक्षा के शिकार हैं लेकिन उनका डाटा बेस तो तैयार हो ही रहा है। अंततः ये सब मिलकर हिंदी की ऑनलाइन पत्रकारिता का मार्ग प्रशस्त करेंगे।

कुल मिलाकर हिंदी की वेब पत्रकारिता अभी अपने शैशव काल में ही है। सबसे बड़ी समस्या हिंदी के फ़ौंट की है। अभी भी हमारे पास कोई एक 'की-बोर्ड' नहीं है। डायनमिक फ़ौंट की अनुपलब्धता के कारण हिंदी की ज़्यादातर साइटें खुलती ही नहीं हैं। अब माइक्रोसॉफ़्ट और वेबदुनिया ने यूनिकाड फ़ौंट बनाए हैं। लेकिन ये भी खास लोकप्रिय नहीं हो पा रहे हैं। हिंदी जगत जब तक हिंदी के बेलगाम फ़ौंट संसार पर नियंत्रण नहीं लगाएगा और 'की-बोर्ड' का मानकीकरण नहीं करेगा, तब तक यह समस्या बनी रहेगी।

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर के लिए चार-चार विकल्प दिए गए हैं। सटीक विकल्प पर (✓) का निशान लगाइए–

(क) इंटरनेट पत्रकारिता आजकल बहुत लोकप्रिय है क्योंकि–
- इससे दृश्य एवं प्रिंट दोनों माध्यमों का लाभ मिलता है। ☐
- इससे खबरें बहुत तीव्र गति से पहुँचाई जाती है। ☐
- इससे खबरों की पुष्टि तत्काल होती है। ☐
- इससे न केवल खबरों का संप्रेषण, पुष्टि, सत्यापन होता है बल्कि खबरों के बैकग्राउंडर तैयार करने में तत्काल सहायता मिलती है। ☐

(ख) टी.वी. पर प्रसारित खबरों में सबसे महत्त्वपूर्ण है–
- विजुअल ☐
- नेट ☐
- बाइट ☐
- उपर्युक्त सभी ☐

(ग) रेडियो समाचार की भाषा ऐसी हो–
- जिसमें आम बोलचाल के शब्दों का प्रयोग हो ☐
- जो समाचार वाचक आसानी से पढ़ सके ☐
- जिसमें आम बोलचाल की भाषा के साथ-साथ सटीक मुहावरों का इस्तेमाल हो ☐
- जिसमें सामासिक और तत्सम शब्दों की बहुलता हो ☐

2. विभिन्न जनसंचार माध्यमों–प्रिंट, रेडियो, टेलीविज़न, इंटरनेट से जुड़ी पाँच-पाँच खूबियों और खामियों को लिखते हुए एक तालिका तैयार करें।

© NCERT not to be republished

अभ्यास

3. इंटरनेट पत्रकारिता सूचनाओं को तत्काल उपलब्ध कराता है, परंतु इसके साथ ही उसके कुछ दुष्परिणाम भी हैं। उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

4. श्रोताओं या पाठकों को बाँधकर रखने की दृष्टि से प्रिंट माध्यम, रेडियो और टी.वी. में से सबसे सशक्त माध्यम कौन हैं? पक्ष-विपक्ष में तर्क दें।

5. नीचे दिए गए चित्रों को ध्यान से देखें और इनके आधार पर टी.वी. के लिए तीन अर्थपूर्ण संक्षिप्त स्क्रिप्ट लिखें।

© NCERT not to be republished

11071CH04

4

पत्रकारीय लेखन के विभिन्न रूप और लेखन प्रक्रिया

इस पाठ में...

- **पत्रकारीय लेखन क्या है?**
- **समाचार कैसे लिखा जाता है?**
- **समाचार लेखन और छह ककार**
- **फ़ीचर क्या है?**
- **फ़ीचर कैसे लिखें?**
- **विशेष रिपोर्ट कैसे लिखें?**
- **विचारपरक लेखन–लेख, टिप्पणियाँ और संपादकीय**
  - संपादकीय लेखन
  - स्तंभ लेखन
  - संपादक के नाम पत्र
  - लेख
  - साक्षात्कार / इंटरव्यू

समाचारपत्रों में बड़ी शक्ति है, ठीक वैसी ही जैसी कि पानी के ज़बरदस्त प्रवाह में होती है। इसे खुला छोड़ देगें तो गाँव के गाँव बहा देगा। उसी तरह निरंकुश कलम समाज के विनाश का कारण बन सकती है। लेकिन अंकुश भीतर का होना चाहिए, बाहर का अंकुश तो और भी ज़हरीला होगा।

–महात्मा गांधी

एक नज़र में...

एक अच्छा पत्रकार या लेखक बनने के लिए विभिन्न जनसंचार माध्यमों में लिखने की अलग-अलग शैलियों से परिचित होना ज़रूरी है। अखबारों या पत्रिकाओं में समाचार, फ़ीचर, विशेष रिपोर्ट, लेख और टिप्पणियाँ प्रकाशित होती हैं। इन सबको लिखने की अलग-अलग पद्धति है जिनका ध्यान रखा जाना चाहिए। समाचार लेखन में उलटा पिरामिड-शैली का उपयोग किया जाता है। समाचार लिखते हुए छह ककारों का ध्यान रखना ज़रूरी है।

फ़ीचर लेखन में उलटा पिरामिड के बजाए फ़ीचर की शुरुआत कहीं से भी हो सकती है। जबकि विशेष रिपोर्ट के लेखन में तथ्यों की खोज और विश्लेषण पर ज़ोर दिया जाता है। समाचारपत्रों में विचारपरक लेखन के तहत लेख, टिप्पणियों और संपादकीय लेखन में भी विचारों और विश्लेषण पर ज़ोर होता है।

© NCERT not to be republished

अच्छे लेखन के लिए ध्यान रखने योग्य बातें–

- छोटे वाक्य लिखें। जटिल वाक्य की तुलना में सरल वाक्य संरचना को वरीयता दें।
- आम बोलचाल की भाषा और शब्दों का इस्तेमाल करें। गैर-ज़रूरी शब्दों के इस्तेमाल से बचें। शब्दों को उनके वास्तविक अर्थ समझकर ही प्रयोग करें।
- अच्छा लिखने के लिए अच्छा पढ़ना भी बहुत ज़रूरी है। जाने-माने लेखकों की रचनाएँ ध्यान से पढ़िए।
- लेखन में विविधता लाने के लिए छोटे वाक्यों के साथ-साथ कुछ मध्यम आकार के और कुछ बड़े वाक्यों का प्रयोग कर सकते हैं। इसके साथ-साथ मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग से लेखन में रंग भरने की कोशिश कीजिए।
- अपने लिखे को दोबारा ज़रूर पढ़िए और अशुद्धियों के साथ-साथ गैर-ज़रूरी चीज़ों को हटाने में संकोच मत कीजिए। लेखन में कसावट बहुत ज़रूरी है।
- लिखते हुए यह ध्यान रखिए कि आपका उद्देश्य अपनी भावनाओं, विचारों और तथ्यों को व्यक्त करना है न कि दूसरे को प्रभावित करना।
- एक अच्छे लेखक को पूरी दुनिया से लेकर अपने आसपास घटने वाली घटनाओं, समाज और पर्यावरण पर गहरी निगाह रखनी चाहिए और उन्हें इस तरह से देखना चाहिए कि वे अपने लेखन के लिए उससे विचारबिंदु निकाल सकें।
- एक अच्छे लेखक में तथ्यों को जुटाने और किसी विषय पर बारीकी से विचार करने का धैर्य होना चाहिए।

आमतौर पर हर नए लेखक की अखबारों में लिखने और छपने की इच्छा होती है। यह बहुत स्वाभाविक है लेकिन अखबारों के लिए लेखन आसान भी है और मुश्किल भी। आसान इसलिए कि अगर आप पत्रकारीय लेखन के विभिन्न रूपों और उनकी लेखन प्रक्रिया की बारीकियों से परिचित हैं तो अखबारों के लिए लिखना बहुत सहज और आसान है, लेकिन अगर आप पत्रकारीय लेखन की प्रक्रिया और उसके तौर-तरीकों से वाकिफ़ न हों तो आसान दिखने वाला लेखन खासा मुश्किल और पसीना छुड़ानेवाला साबित हो सकता है।

पत्रकारीय लेखन क्या है?

पत्रकारीय लेखन की दुनिया में आने की कोशिश करने वाले हर नए लेखक के लिए सबसे पहले यह समझना बहुत ज़रूरी है कि पत्रकारीय लेखन क्या है, समाज में उसकी भूमिका क्या है और वह अपनी इस भूमिका को कैसे पूरा करता है? दरअसल, अखबार पाठकों को सूचना देने, जागरूक और शिक्षित बनाने और उनका मनोरंजन करने का दायित्व निभाते हैं। लोकतांत्रिक समाजों में वे एक पहरेदार, शिक्षक और जनमत निर्माता के तौर पर बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। अपने पाठकों के लिए वे बाहरी दुनिया में खुलने वाली ऐसी खिड़की हैं जिसके ज़रिये असंख्य पाठक हर रोज़ सुबह देश-दुनिया और अपने पास-पड़ोस की घटनाओं, समस्याओं, मुद्दों और विचारों से अवगत होते हैं।

अखबार या अन्य समाचार माध्यमों में काम करने वाले पत्रकार अपने पाठकों, दर्शकों और श्रोताओं तक सूचनाएँ पहुँचाने के लिए लेखन के विभिन्न रूपों का इस्तेमाल करते हैं। इसे ही पत्रकारीय लेखन कहते हैं और इसके कई रूप हैं। पत्रकार तीन तरह के होते हैं–पूर्णकालिक, अंशकालिक और **फ्रीलांसर** यानी स्वतंत्र। पूर्णकालिक पत्रकार किसी समाचार संगठन में काम करनेवाला नियमित वेतनभोगी कर्मचारी होता है जबकि अंशकालिक पत्रकार (स्ट्रिंगर) किसी समाचार संगठन के लिए एक निश्चित मानदेय पर काम करनेवाला पत्रकार है। लेकिन फ्रीलांसर पत्रकार का संबंध किसी खास अखबार से नहीं होता है बल्कि वह

भुगतान के आधार पर अलग-अलग अखबारों के लिए लिखता है।

ऐसे में, यह समझना बहुत ज़रूरी है कि पत्रकारीय लेखन का संबंध और दायरा समसामयिक और वास्तविक घटनाओं, समस्याओं और मुद्दों से है। हालाँकि यह माना जाता है कि पत्रकारिता जल्दी में लिखा गया साहित्य है। लेकिन यह साहित्यिक और सृजनात्मक लेखन–कविता, कहानी, उपन्यास आदि से इस मायने में अलग है कि इसका रिश्ता तथ्यों से है न कि कल्पना से। दूसरे, पत्रकारीय लेखन साहित्यिक-सृजनात्मक लेखन से इस मायने में भी अलग है कि यह अनिवार्य रूप से तात्कालिकता और अपने पाठकों की रुचियों और ज़रूरतों को ध्यान में रखकर किया जाने वाला लेखन है। जबकि साहित्यिक रचनात्मक लेखन में लेखक को काफ़ी छूट होती है।

अखबार और पत्रिका के लिए लिखने वाले लेखक और पत्रकार को यह हमेशा याद रखना चाहिए कि वह विशाल समुदाय के लिए लिख रहा है जिसमें एक विश्वविद्यालय के कुलपति सरीखे विद्वान से लेकर कम पढ़ा-लिखा मज़दूर और किसान सभी शामिल हैं। इसलिए उसकी लेखन शैली, भाषा और गूढ़ से गूढ़ विषय की प्रस्तुति ऐसी सहज, सरल और रोचक होनी चाहिए कि वह आसानी से सबकी समझ में आ जाए। पत्रकारीय लेखन में अलंकारिक-संस्कृतनिष्ठ भाषा-शैली के बजाय आम बोलचाल की भाषा का इस्तेमाल किया जाता है।

पाठकों को ध्यान में रखकर ही अखबारों में सीधी, सरल, साफ़-सुथरी लेकिन प्रभावी भाषा के इस्तेमाल पर ज़ोर दिया जाता है। शब्द सरल और आसानी से समझ में आने वाले होने चाहिए। वाक्य छोटे और सहज होने चाहिए। जटिल और लंबे वाक्यों से बचना चाहिए। भाषा को प्रभावी बनाने के लिए गैरज़रूरी विशेषणों, जार्गन्स (ऐसी शब्दावली जिससे बहुत कम पाठक परिचित होते हैं) और क्लीशे (पिष्टोक्ति या दोहराव) का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इनके प्रयोग से भाषा बोझिल हो जाती है।

समाचार कैसे लिखा जाता है?

पत्रकारीय लेखन का सबसे जाना-पहचाना रूप समाचार लेखन है। आमतौर पर अखबारों में समाचार पूर्णकालिक और अंशकालिक पत्रकार लिखते हैं, जिन्हें संवाददाता या रिपोर्टर भी कहते हैं।

© NCERT not to be republished

गतिविधि

अपनी पसंद के किसी भी अखबार में से पाँच समाचार चुनिए और उन्हें ध्यान से पढ़िए। इनमें से कितने समाचार उलटा पिरामिड-शैली में लिखे गए हैं? क्या आपको लगता है कि इन समाचारों में सूचनाएँ घटते हुए महत्त्वक्रम में दी गई हैं? हर समाचार में कितने पैराग्राफ़ हैं? क्या आपको लगता है कि पैराग्राफ़्स की संख्या कम या अधिक है? क्या आप उस समाचार से गैरज़रूरी लाइनें या पैराग्राफ़्स निकाल सकते हैं? कोशिश कीजिए और बताइए कि आपने गैरज़रूरी लाइनों या पैराग्राफ़्स का चुनाव किस आधार पर किया?

लेकिन समाचार लिखे कैसे जाते हैं? क्या समाचार लेखन की कोई विशेष शैली होती है? इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए ज़रूरी है कि अपनी पसंद के किसी भी अखबार में छपनेवाली खबरों को ध्यान से पढ़िए। क्या आपको ऐसा लगता है कि उसमें छपी अधिकांश खबरें एक खास शैली में लिखी गई हैं? आपने बिलकुल ठीक पहचाना। अखबारों में प्रकाशित अधिकांश समाचार एक खास शैली में लिखे जाते हैं। इन समाचारों में किसी भी घटना, समस्या या विचार के सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य, सूचना या जानकारी को सबसे पहले पैराग्राफ़ में लिखा गया है। उसके बाद के पैराग्राफ़ में उससे कम महत्त्वपूर्ण सूचना या तथ्य की जानकारी दी गई है। यह प्रक्रिया तब तक जारी रहती है जब तक समाचार खत्म नहीं हो जाता।

पिछले अध्याय में हमनें समाचार लिखने की इस शैली के बारे में बताया है जैसा कि आपको पता है कि इसे समाचार लेखन की **उलटा पिरामिड-शैली** (इंवर्टेड पिरामिड स्टाइल) के नाम से जाना जाता है। यह समाचार लेखन की सबसे लोकप्रिय, उपयोगी और बुनियादी शैली है। यह शैली कहानी या कथा लेखन की शैली के ठीक उलटी है जिसमें क्लाइमेक्स बिलकुल आखिर में आता है। इसे उलटा पिरामिड इसलिए कहा जाता

सीधा पिरामिड–कथात्मक लेखन

उलटा पिरामिड–समाचार लेखन शैली

उलटा पिरामिड में समाचार का ढाँचा

© NCERT not to be republished

है क्योंकि इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य या सूचना 'यानी क्लाइमेक्स' पिरामिड के सबसे निचले हिस्से में नहीं होती बल्कि इस शैली में पिरामिड को उलट दिया जाता है।

हालाँकि इस शैली का प्रयोग 19वीं सदी के मध्य से ही शुरू हो गया था लेकिन इसका विकास अमेरिका में गृहयुद्ध के दौरान हुआ। उस समय संवाददाताओं को अपनी खबरें टेलीग्राफ़ संदेशों के ज़रिये भेजनी पड़ती थीं जिसकी सेवाएँ महँगी, अनियमित और दुर्लभ थीं। कई बार तकनीकी कारणों से सेवा ठप्प हो जाती थी। इसलिए संवाददाताओं को किसी घटना की खबर कहानी की तरह विस्तार से लिखने के बजाय संक्षेप में देनी होती थी। इस तरह उलटा पिरामिड-शैली का विकास हुआ और धीरे-धीरे लेखन और संपादन की सुविधा के कारण यह शैली समाचार लेखन की मानक (स्टैंडर्ड) शैली बन गई।

समाचार लेखन और छह ककार

किसी समाचार को लिखते हुए मुख्यत: छह सवालों का जवाब देने की कोशिश की जाती है क्या हुआ, किसके साथ हुआ, कहाँ हुआ, कब हुआ, कैसे और क्यों हुआ? इस–**क्या**, **किसके** (या कौन), **कहाँ**, **कब**, **क्यों** और **कैसे**–को छह ककारों के रूप में भी जाना जाता है। किसी घटना, समस्या या विचार से संबंधित खबर लिखते हुए इन छह ककारों को ही ध्यान में रखा जाता है।

समाचार के मुखड़े (इंट्रो) यानी पहले पैराग्राफ़ या शुरुआती दो-तीन पंक्तियों में आमतौर पर तीन या चार ककारों को आधार बनाकर खबर लिखी जाती है। ये चार ककार हैं–क्या, कौन, कब और कहाँ? इसके बाद समाचार की बॉडी में और समापन के पहले बाकी दो ककारों–कैसे और क्यों-का जवाब दिया जाता है। इस तरह छह ककारों के आधार पर समाचार तैयार होता है। इनमें से पहले चार ककार–क्या, कौन, कब और कहाँ–सूचनात्मक और तथ्यों पर आधारित होते हैं जबकि बाकी दो ककारों–कैसे और क्यों–में विवरणात्मक, व्याख्यात्मक और विश्लेषणात्मक पहलू पर ज़ोर दिया जाता है।

© NCERT not to be republished

अब अखबार में प्रकाशित एक समाचार पर गौर कीजिए :

समाचार का शीर्षक **मास्को में छत ढहने से 4 लोग मरे, 29 घायल**

क्या : *4 मरे 29 घायल* ***कौन:*** *आम नागरिक* ***कब :*** *गुरुवार की शाम* ***कहाँ:*** *उत्तर पश्चिम मास्को का बाओमांस्की बाज़ार*	**समाचार का इंट्रो**–मास्को, 23 फरवरी (भाषा)। उत्तर पश्चिमी मास्को के बाओमांस्की बाज़ार में गुरुवार की शाम छत ढहने से 4 लोगों की मौत हो गई और 29 घायल हो गए। सौ से अधिक लोगों के अब भी मलबे में फँसे होने की आशंका है। घायलों को अस्पताल में भरती करा दिया गया है।
कैसे : *छत ढहने से, आतंकवादी घटना नहीं* ***क्यों :*** *छत पर बरफ़ जमने से*	**समाचार की बॉडी :** प्रत्यक्षदर्शियों के मुताबिक पहले तो बाओमांस्की भूमिगत बाज़ार की गुंबदनुमा विशालकाय छत ढही और उसके बाद छत को संभालने वाले खंभे एक-एक कर गिरने लगे। शहर में मेयर ने इस दुर्घटना के पीछे किसी आतंकवादी संगठन का हाथ होने की बात से साफ़ इंकार किया है। प्रारंभिक जाँच से पता चला है कि पिछले दिनों हुए भारी हिमपात की वजह से इस 30 साल पुरानी इमारत की छत ढही है।
उद्धरण / स्रोत : *आपात मामलों के मंत्री, मास्को के मेयर, प्रत्यक्षदर्शी*	आपात मामलों के मंत्री सर्गेई शोगो ने बताया कि मलबे के नीचे अभी कई लोग ज़िंदा हैं। वे रो रहे हैं, चिल्ला रहे हैं और किसी भी तरह अपने जीवित होने के संकेत बाहर भेजने की कोशिश कर रहे हैं। मोबाइल आपरेटरों ने भी मलबे से सौ से अधिक मोबाइल संदेश मिलने की पुष्टि की है। माना जा रहा है कि छत गिरने का मुख्य कारण इस पूरी इमारत का डिज़ाइन भी है। इसकी गुंबदनुमा छत पर भारी बरफ़ जम गई थी। संभवत: गुंबद बरफ़ का वज़न बर्दाश्त नहीं कर पाया।

उपरोक्त समाचार के पहले पैराग्राफ़ यानी मुखड़े (इंट्रो) में चार ककारों–क्या, कौन, कब और कहाँ–के बाबत जानकारी दी गई है जबकि उसके बाद के तीन पैराग्राफ़ में दो अन्य ककारों–कैसे और क्यों–के ज़रिये दुर्घटना के कारणों पर रोशनी डाली गई है। अधिकांश समाचार इसी शैली में लिखे जाते हैं। लेकिन कभी-कभी अपने महत्त्व के कारण कैसे या क्यों भी समाचार के मुखड़े में आ सकते हैं। एक और बात याद रखने की है कि समाचार में सूचना के स्रोत यानी जिससे जानकारी मिली है, उसको भी अवश्य उद्धृत करना चाहिए। जैसे उपरोक्त समाचार में प्रत्यक्षदर्शियों और आपात मामलों के मंत्री को उद्धृत किया गया है।

© NCERT not to be republished

फ़ीचर क्या है?

अखबारों में समाचारों के अलावा भी अन्य कई तरह का पत्रकारीय लेखन छपता है। इनमें फ़ीचर प्रमुख है। समाचार और फ़ीचर के बीच स्पष्ट अंतर होता है। फ़ीचर एक सुव्यवस्थित, सृजनात्मक और आत्मनिष्ठ लेखन है जिसका उद्देश्य पाठकों को सूचना देने, शिक्षित करने के साथ मुख्य रूप से उनका मनोरंजन करना होता है। फ़ीचर समाचार की तरह पाठकों को तात्कालिक घटनाक्रम से अवगत नहीं कराता। फ़ीचर लेखन की शैली भी समाचार लेखन की शैली से अलग होती है। समाचार लेखन में वस्तुनिष्ठता और तथ्यों की शुद्धता पर ज़ोर दिया जाता है यानी समाचार लिखते हुए रिपोर्टर उसमें अपने विचार नहीं डाल सकता जबकि फ़ीचर में लेखक के पास अपनी राय या दृष्टिकोण और भावनाएँ ज़ाहिर करने का अवसर होता है।

दूसरे, फ़ीचर लेखन में उलटा पिरामिड-शैली का प्रयोग नहीं होता यानी फ़ीचर लेखन का कोई एक तय ढाँचा या फार्मूला नहीं होता है। फ़ीचर लेखन की शैली काफ़ी हद तक कथात्मक शैली की तरह है। तीसरे, फ़ीचर लेखन की भाषा समाचारों के विपरीत सरल, रूपात्मक, आकर्षक और मन को छूनेवाली होती है। फ़ीचर की भाषा में समाचारों की सपाटबयानी नहीं चलती। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि फ़ीचर की भाषा और शैली को अलंकारिक और दुरूह बना दिया जाए। चौथे, फ़ीचर में समाचारों की तरह शब्दों की कोई अधिकतम सीमा नहीं होती। फ़ीचर आमतौर पर समाचार रिपोर्ट से बड़े होते हैं। अखबारों और पत्रिकाओं में 250 शब्दों से लेकर 2000 शब्दों तक के फ़ीचर छपते हैं।

एक अच्छे और रोचक फ़ीचर के साथ फ़ोटो, रेखांकन, ग्राफ़िक्स आदि का होना ज़रूरी है। फ़ीचर का विषय कुछ भी हो सकता है। हलके-फुलके विषयों से लेकर गंभीर विषयों और मुद्दों पर भी फ़ीचर लिखा जा सकता है। जैसे आप अपने स्कूल पर एक परिचयात्मक फ़ीचर लिखने से लेकर उसके सालाना समारोह या अपनी शैक्षणिक यात्रा (स्टडी टूर) पर केंद्रित फ़ीचर लिख सकते हैं। दरअसल, फ़ीचर एक तरह का ट्रीटमेंट है जो आमतौर पर विषय और मुद्दे की ज़रूरत के मुताबिक उसे प्रस्तुत करते हुए दिया जाता है। यही कारण है कि समाचार और फ़ीचर अलग होने के बावजूद कुछ समाचारों को फ़ीचर शैली में भी लिखा जाता

गतिविधि

दो अलग-अलग अखबारों के रविवारीय परिशिष्ट को ध्यान से पढ़िए। उसमें प्रकाशित सामग्री की सूची बनाइए। आपने फ़ीचर की परिभाषा पढ़ी है। इस आधार पर बताइए कि प्रकाशित सामग्री में किसे आप फ़ीचर की श्रेणी में रखेंगे? उनमें प्रकाशित फ़ीचर को ध्यान से पढ़िए और उसकी खूबियाँ बताइए। उन फ़ीचरों पर कक्षा में चर्चा कीजिए। इसके अलावा विभिन्न अखबारों और पत्रिकाओं से अपनी पसंद के पाँच फ़ीचर चुनकर निकालिए और उन्हें बड़े पोस्टर पर चिपकाकर कक्षा में प्रदर्शित कीजिए।

है। लेकिन हर समाचार को फ़ीचर शैली में नहीं लिखा जा सकता है। फ़ीचर शैली का इस्तेमाल हलके-फुलके, नरम और मानवीय रुचि के समाचारों को लिखते हुए ही किया जाता है।

फ़ीचर कैसे लिखें?

फ़ीचर लिखते हुए कुछ बातों का ध्यान रखना बहुत ज़रूरी है। पहली बात यह है कि फ़ीचर को सजीव बनाने के लिए उसमें उस विषय से जुड़े लोगों यानी पात्रों की मौजूदगी ज़रूरी है। दूसरे, कहानी को उनके ज़रिये कहने की कोशिश कीजिए यानी पात्रों के माध्यम से उस विषय के विभिन्न पहलुओं को सामने ले आइए। तीसरे, कहानी को बताने का अंदाज़ ऐसा हो कि आपके पाठक यह महसूस करें कि वे खुद देख और सुन रहे हैं। चौथे, फ़ीचर को मनोरंजक होने के साथ-साथ सूचनात्मक होना चाहिए।

र ✧ वि ✧ वा ✧ री

सुलफे दी ला

याद : अमृता प्रीतम

पद्मा सचदेव

अपनी खेती की ओर

1

2

1. *व्यक्तिचित्र फ़ीचर, 13 नवंबर 2005 2. समाचार फ़ीचर, 25 दिसंबर 2005 (जनसत्ता से साभार)*

तात्पर्य यह है कि फ़ीचर को किसी बैठक या सभा के कार्यवाही विवरण की तरह नहीं लिखा जाना चाहिए। साथ ही, फ़ीचर कोई नीरस शोध रिपोर्ट भी नहीं है। वह बड़ी घटनाओं, कार्यक्रमों और आयोजनों की सूखी और बेजान रिपोर्ट भी नहीं है। फ़ीचर आमतौर पर तथ्यों, सूचनाओं और

विचारों पर आधारित कथात्मक विवरण और विश्लेषण होता है। फ़ीचर की कोई न कोई थीम होनी चाहिए। उस थीम के इर्द-गिर्द सभी प्रासंगिक सूचनाएँ, तथ्य और विचार गुँथे होने चाहिए। फ़ीचर कई प्रकार के होते हैं। इनमें समाचार बैकग्राउंडर, खोजपरक फ़ीचर, साक्षात्कार फ़ीचर, जीवनशैली फ़ीचर, रूपात्मक फ़ीचर, व्यक्तिचित्र फ़ीचर, यात्रा फ़ीचर और विशेषरुचि के फ़ीचर प्रमुख हैं।

फ़ीचर लेखन का कोई निश्चित ढाँचा या फ़ॉर्मूला नहीं होता है। इसलिए आप फ़ीचर कहीं से भी शुरू कर सकते हैं। हर फ़ीचर का एक प्रारंभ, मध्य और अंत होता है। प्रारंभ आकर्षक और उत्सुकता पैदा करनेवाला होना चाहिए। हालाँकि प्रारंभ, मध्य और अंत को अलग-अलग देखने के बजाय पूरे फ़ीचर को समग्रता में देखना चाहिए लेकिन अगर फ़ीचर का प्रारंभ आकर्षक, रोचक और प्रभावी हो तो बाकी पूरा फ़ीचर भी पठनीय और रोचक बन सकता है। जैसे अगर आप किसी जाने-माने व्यक्ति पर एक व्यक्तिचित्र फ़ीचर तैयार कर रहे हैं तो उसकी शुरुआत किसी ऐसी घटना के उल्लेख से कर सकते हैं जिसने उनके जीवन की दिशा बदल दी या उसकी शुरुआत उनकी किसी ताज़ा उपलब्धि के ब्योरे से हो सकती है और फिर फ़ीचर को उनके पिछले जीवन के संघर्षों की ओर मोड़ा जा सकता है।

इसके बाद फ़ीचर में उनके और उनके कुछ करीबी लोगों और उनकी उपलब्धियों से वाकिफ़ विशेषज्ञों के दिलचस्प, आकर्षक और खास वक्तव्यों को उद्धृत करते हुए उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को उजागर किया जा सकता है। फ़ीचर में एक या दो ऐसी घटनाओं को खुद उनकी ज़बान में पेश किया जा सकता है जो न सिर्फ़ दिलचस्प और अनूठी हों बल्कि उससे उनके जीवन के अहम क्षणों पर रोशनी पड़ती हो।

फ़ीचर के आखिरी हिस्से में उनकी भविष्य की योजनाओं पर फ़ोकस करना चाहिए। वे अपने सामने क्या चुनौतियाँ देखते हैं और उनसे निपटने के लिए उनकी क्या तैयारी है। यहाँ आप स्वयं उन्हें उद्धृत कर सकते हैं। इस तरह फ़ीचर का प्रारंभ, मध्य और अंत का यह एक संभावित ढाँचा हो सकता है। लेकिन असली चुनौती यह होती है कि प्रारंभ, मध्य और अंत को सहज और स्वाभाविक तरीके से एक साथ कैसे बाँधे? हर पैराग्राफ़ अपने पहले के पैराग्राफ़ से सहज तरीके से जुड़ा हो और शुरू से आखिर तक प्रवाह और गति बनी रहे, यह सुनिश्चित करने के लिए पैराग्राफ़ छोटे रखिए और एक पैराग्राफ़ में एक पहलू पर ही फ़ोकस कीजिए।

गतिविधि

अपने स्कूल की लाइब्रेरी या खेल के मैदान पर एक 300 शब्दों का फ़ीचर लिखिए। इसमें लाइब्रेरी या खेल के मैदान से जुड़े तथ्यों के अलावा दिलचस्प जानकारियाँ भी शामिल कीजिए। इस फ़ीचर के लिए लाइब्रेरियन या खेल के मैदान के प्रभारी शिक्षक से बातचीत के अलावा विभिन्न कक्षाओं के छात्र-छात्राओं से इंटरव्यू कर जानकारी इकट्ठी कीजिए।

© NCERT not to be republished

विशेष रिपोर्ट कैसे लिखें?

अखबारों और पत्रिकाओं में सामान्य समाचारों के अलावा गहरी छानबीन, विश्लेषण और व्याख्या के आधार पर विशेष रिपोर्टें भी प्रकाशित होती हैं। ऐसी रिपोर्टों को तैयार करने के लिए किसी घटना, समस्या या मुद्दे की गहरी छानबीन की जाती है। उससे संबंधित महत्त्वपूर्ण तथ्यों को इकट्ठा किया जाता है। तथ्यों के विश्लेषण के ज़रिये उसके नतीजे, प्रभाव और कारणों को स्पष्ट किया जाता है।

विशेष रिपोर्ट के भी कई प्रकार होते हैं। खोजी रिपोर्ट (इंवेस्टिगेटिव रिपोर्ट), इन-डेप्थ रिपोर्ट, विश्लेषणात्मक रिपोर्ट और विवरणात्मक रिपोर्ट–विशेष रिपोर्टों के कुछ प्रमुख प्रकार हैं। खोजी रिपोर्ट में रिपोर्टर मौलिक शोध और छानबीन के ज़रिये ऐसी सूचनाएँ या तथ्य सामने लाता है जो सार्वजनिक तौर पर पहले से उपलब्ध नहीं थीं। खोजी रिपोर्ट का इस्तेमाल आमतौर पर भ्रष्टाचार, अनियमितताओं और गड़बड़ियों को उजागर करने के लिए किया जाता है।

इन-डेप्थ रिपोर्ट में सार्वजनिक तौर पर उपलब्ध तथ्यों, सूचनाओं और आँकड़ों की गहरी छानबीन की जाती है और उसके आधार पर किसी घटना, समस्या या मुद्दे से जुड़े महत्त्वपूर्ण पहलुओं को सामने लाया जाता है। इसी तरह विश्लेषणात्मक रिपोर्ट में ज़ोर किसी घटना या समस्या से जुड़े तथ्यों के विश्लेषण और व्याख्या पर होता है जबकि विवरणात्मक रिपोर्ट में किसी घटना या समस्या के विस्तृत और बारीक विवरण को प्रस्तुत करने की कोशिश की जाती है।

आमतौर पर विभिन्न प्रकार की विशेष रिपोर्टों को समाचार लेखन की उलटा पिरामिड-शैली में ही लिखा जाता है लेकिन कई बार ऐसी रिपोर्टों को फ़ीचर शैली में भी लिखा जाता है। चूँकि ऐसी रिपोर्टें सामान्य समाचारों की तुलना में बड़ी और विस्तृत होती हैं, इसलिए पाठकों की रुचि बनाए रखने के लिए कई बार उलटा पिरामिड और फ़ीचर दोनों ही शैलियों को मिलाकर इस्तेमाल किया जाता है। रिपोर्ट बहुत विस्तृत और बड़ी हो तो उसे शृंखलाबद्ध करके कई दिनों तक किस्तों में छापा जाता है। विशेष रिपोर्ट की भाषा सरल, सहज और आम बोलचाल की होनी चाहिए।

विशेष रिपोर्ट का एक उदाहरण प्रस्तुत है–

बिरहोरों का विलुप्त होता संसार

झबहर, पलामू (बिहार): अखू बिरहोर की विधवा पत्तियों और घास-फूस से बनी अपनी कुंभा या झोपड़ी के बगल में चुपचाप बैठी है। बिरहोर बस्ती पलामू ज़िले के बालूमठ ब्लाक में स्थित झबहर गाँव के बिलकुल बाहर है। झबहर के लोग, जिनमें से कुछ ने ज़िला मुख्यालय डाल्टनगंज के शानदार बँगलों को देखा है, इन कुंभों को एयरकंडीशंड कहते हैं, वे ऐसा क्यों कहते हैं यह हमें उस समय पता चला जब छोटानागपुर से आने वाली ठंडी हवाएँ इन झोपड़ों से होकर गुज़रीं और ठंड से हमारी हड्डियाँ काँप गईं।

बिरहोर भी उसी आस्ट्रो-एशियाटिक भाषाई समूह के हैं जिनमें हो, संथाल या मुंडा जनजाति के लोग आते हैं। वे जंगल (बिर) के लोग

(हो) हैं। छोटानागपुर क्षेत्र की खानाबदोश जाति के ये लोग मुख्य रूप से पलामू, राँची, लोहरदगा, हज़ारीबाग और सिंहभूम के आसपास विचरते रहते हैं। कई मामलों में बिरहोर लोग अजीबोगरीब प्राणी हैं।

इनकी जाति भी समाप्त होती जा रही है। 1971 की जनगणना में बताया गया कि उस वर्ष इनकी संख्या लगभग 4000 थी। अब वे (1993 में) महज 2000 के आसपास हैं। हो सकता है इससे भी कम हो। इसमें उड़ीसा से लगभग 144 और मध्य प्रदेश के 67 भी शामिल है। बेशक इनका मुख्य समूह बिहार में है। इस राज्य में 1971 की जनगणना के समय इनकी संख्या 3,464 थी। 1987 में बिहार के एक सरकारी अध्ययन के मुताबिक इनकी संख्या घटकर 159 हो गई थी। मध्य प्रदेश में इनकी संख्या 1971 में 738 से घटकर 1991 में 67 हो गई थी।

इनके समाप्त होते जाने की वजह उन जंगलों का धुँआधार ढंग से विनाश है जिन पर ये निर्भर हैं। इनकी ज़रूरतों अथवा इनके अजीबोगरीब स्वरूप पर ध्यान दिए बिना तैयार की गई विकास प्रक्रिया से कोई मदद नहीं मिली। बिरहोर मुख्य रूप से शिकार जुटाने वाली जाति रही हैं। वे रस्सियाँ बनाने और लकड़ी का काम भी करते रहे हैं। जंगलों को आरक्षित कर दिए जाने के बाद से वे न तो लकड़ी काट सकते थे और न रस्सी बनाने के लिए रेशा निकाल सकते थे। वे जो सामान तैयार करते थे उनकी कीमत इतनी कम मिलती थी कि उनकी लागत भी नहीं निकल पाती थी। जब कुछ इलाकों में जंगलों की ज़बरदस्त कटाई होने लगी तो शिकार के काम से भी इनकी छुट्टी हो गई। प्राकृतिक विपदा या संकट के समय सबसे ज़्यादा मार इन पर ही पड़ती है।

इस जनजाति के बारे में अज्ञानता से भी काफ़ी गड़बड़ हुई। इसी कारण बिरहोरों के बारे में जनगणना का आँकड़ा भी गलतियों से भरा है। यहाँ के लोग बिरहोर हैं। उड़ीसा के सुंदरगढ़ ज़िले में स्थानीय लोग इन्हें मनकिदी कहते हैं। संबलपुर ज़िले में ये मनकिर्दिया हो जाते है। ये दोनों नाम बंदरों को पकड़ने में इनकी निपुणता के कारण है। चूँकि बंदर प्रायः फसलों और फलों को बरबाद करते रहते हैं, स्थानीय लोग बंदरों को पकड़ने के लिए बिरहोरों को लगाते हैं। जंगलों के खत्म होने के साथ उनका यह काम भी खत्म हो गया।

1971 में इस खानाबदोश समूह को उड़ीसा में तीन अलग-अलग जनजातियों-बिरहोर, मनकिदी और मनकिर्दिया—के रूप में गिनती करके काम समाप्त कर दिया गया। इस गलती को 1981 में दुरुस्त किया गया और इनकी गिनती एक जनजाति के रूप में की गई। इस तरह उस राज्य में बिरहोरों की संख्या में 44 प्रतिशत का इज़ाफ़ा हो गया जबकि सचाई यह थी कि उनका समूह कम होता जा रहा था। उड़ीसा सरकार ने इस बढ़ोतरी पर अपनी पीठ थपथपाई। इसलिए बिरहोरों के बारे में आँकड़ा बेहद अविश्वसनीय है।

शिकारी के रूप में बिरहोर लोग बड़े-बड़े जंगलों के साथ अपने जीवन की भरपूर संगति बैठा कर रहते थे। जंगलों का उन्होंने कभी फ़िजूल इस्तेमाल नहीं किया और हमेशा वे विवेक से काम लेते रहे। यहाँ तक कि कायदे से देखा जाए तो उनकी बस्तियों में भी दस से ज़्यादा झोपड़ियाँ नहीं दिखाई देतीं। उनकी ये बस्तियाँ जंगल में चारों तरफ़ फैली रहती हैं। इससे फ़ायदा यह होता है कि जो विभिन्न समूह हैं उनको जंगल के संसाधनों में हिस्सा बँटाने का समान और उचित अवसर मिल जाता है। आज अपनी पैतृक भूमि बिहार में वे जंगलों की अभूतपूर्व कटाई और विकास के शिकार हो गए हैं।

इनकी इस दुरावस्था के लिए शराबखोरी भी काफ़ी हद तक ज़िम्मेदार है। बावजूद इसके यहाँ अपराध नहीं है। झबहर पंचायत के एक सदस्य ने बताया कि ये लोग अद्भुत प्राणी हैं। अगर इन्हें पता

चल जाता है कि एक मील दूर पर भी कहीं कोई डकैती वगैरह पड़ रही है तो वे इसे अपना व्यक्तिगत मामला मानते हुए लाठी डंडा लेकर दौड़ पड़ते हैं। मैंने आज तक किसी बिरहोर को अपराध करते हुए नहीं देखा। झबहर के लोग बिरहोरों के प्रति असाधारण रूप से उदार हैं। बेशक, पलामू और हज़ारीबाग के अलावा इन लोगों को आमतौर पर उपेक्षा का ही शिकार होना पड़ा है।

जहाँ तक सरकारी कार्यक्रमों की बात है, इनमें से ज़्यादातर बेकार ही साबित हुए हैं। इसे आप यह भी कह सकते हैं कि सरकारी कार्यक्रमों को भ्रष्ट तंत्र ले उड़ता है। आवास योजनाएँ विनाशकारी साबित हुईं क्योंकि जिन वास्तुकारों ने इनके लिए मकानों की योजना तैयार की थी, उन्होंने कभी बिरहोर लोगों को देखा ही नहीं था। उन्हें इनकी व्यावहारिक विशिष्टताओं की भी कोई जानकारी नहीं थी। इन आदिवासियों की स्वास्थ्य संबंधी चिंताजनक स्थिति को देखते हुए सरकार ने कुछ योजनाएँ तैयार कीं लेकिन अफ़सरों और उनके दलालों ने इन योजनाओं के लिए निर्धारित रकम को हड़प लिया।

झबहर गाँव के एक निवासी ने हँसते हुए कहा कि "यहाँ तक कि इनके पास तीसरी फ़सल भी नहीं पहुँच सकी।" मैंने उत्सुकतावश पूछा– तीसरी फसल का क्या मतलब? मुझे तो अभी तक केवल दो ही फ़सलों की जानकारी है। मैंने गौर किया कि उसे इस सवाल की उम्मीद थी। उसने बताया–"इस इलाके में तीसरी फसल है, सूखा राहत। इसके लिए बहुत ज़्यादा पैसा मिलता है लेकिन इस फ़सल को आमतौर से ब्लाक स्तर के अफसर और उनके ठेकेदार दोस्त काट ले जाते हैं। केवल मामूली सा हिस्सा जनता तक पहुँचता है। अब उस मामूली से हिस्से में से बिरहोर लोगों को क्या मिले? वे तो जंगल में कंदमूल और बेर, मौसमी फल आदि खाकर ज़िंदा रहते हैं और कभी-कभी तो कई-कई दिनों तक भूखे ही रह जाते हैं।"

जब हमने रामवृक्ष बिरहोर को 'देशज लोगों के अंतर्राष्ट्रीय वर्ष (1993)' के बारे में बताया तो उसे बहुत आश्चर्य हुआ। "क्या सचमुच यह हमलोगों के लिए बनाया गया था?" उसने सवाल किया। फिर कुछ देर सोचने के बाद उसने कहा– ऐसा नहीं हो सकता। अगर ऐसा होता तो हम अभी तक इस हालत में नहीं पड़े रहते। उसने अपना सामान उठाया और चुपचाप वहाँ से चला गया। चौबे ने कहा–जहाँ तक मुझे जानकारी है, इस क्षेत्र में कभी किसी बिरहोर का नाम मतदाता सूची में नहीं रहा। यह समूह भारतीय समाज के सबसे निचले हिस्से में रहता है। खरगोश पकड़ना, रस्सियाँ बुनना, तैयार होने पर कुछ डोलचियाँ बेच देना– इन गतिविधियों को देखते हुए लगता है कि बिरहोर लोग अभी किसी दूसरे युग में रह रहे हैं। उनके अंदर जमा पूँजी रखने की प्रवृत्ति नहीं है और उनका जीवन आत्मसम्मान से भरा रहता है।

(पी. साईनाथ का यह आलेख विशेष रिपोर्ट के साथ-साथ एक अच्छे फ़ीचर का भी बढ़िया उदाहरण है।)

विचारपरक लेखन–लेख, टिप्पणियाँ और संपादकीय

अखबारों में समाचार और फ़ीचर के अलावा विचारपरक सामग्री का भी प्रकाशन होता है। कई अखबारों की पहचान उनके वैचारिक रुझान से होती है। एक तरह से अखबारों में प्रकाशित होने वाले विचारपूर्ण लेखन से उस अखबार की छवि बनती है। अखबारों में संपादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित होने वाले संपादकीय अग्रलेख, लेख और टिप्पणियाँ इसी विचारपरक पत्रकारीय लेखन की श्रेणी में आते हैं। इसके अलावा विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों या वरिष्ठ पत्रकारों के स्तंभ (कॉलम) भी विचारपरक लेखन के तहत आते हैं। कुछ अखबारों में संपादकीय पृष्ठ के सामने **ऑप-एड** पृष्ठ पर भी विचारपरक लेख, टिप्पणियाँ और स्तंभ प्रकाशित होते हैं।

गतिविधि

अपने क्षेत्र की किसी समस्या पर एक 250 शब्दों की विशेष रिपोर्ट तैयार कीजिए। उसे अपने शहर या क्षेत्र से प्रकाशित होनेवाले अखबार में प्रकाशन के लिए भेजिए। विशेष रिपोर्ट तैयार करने के लिए उस समस्या की तह में जाने की कोशिश कीजिए। समस्या से पीड़ित या परेशान लोगों से बातचीत करने के अलावा संबंधित विभाग के अधिकारियों/कर्मचारियों से भी उनका पक्ष पूछिए।

संपादकीय लेखन

संपादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित होने वाले संपादकीय को उस अखबार की अपनी आवाज़ माना जाता है। संपादकीय के ज़रिये अखबार किसी घटना, समस्या या मुद्दे के प्रति अपनी राय प्रकट करते हैं। संपादकीय किसी व्यक्ति विशेष का विचार नहीं होता इसलिए उसे किसी के नाम के साथ नहीं छापा जाता। संपादकीय लिखने का दायित्व उस अखबार में काम करने वाले संपादक और उनके सहयोगियों पर होता है। आमतौर पर अखबारों में सहायक संपादक, संपादकीय लिखते हैं। कोई बाहर का लेखक या पत्रकार संपादकीय नहीं लिख सकता है।

हिंदी के अखबारों में कुछ में तीन, कुछ में दो और कुछ में केवल एक संपादकीय प्रकाशित होता है। संपादकीय का एक उदाहरण प्रस्तुत है–

मूल्यांकन का दायरा

अगले विद्यालयी शिक्षा-सत्र से विद्यार्थियों के सतत और व्यापक मूल्यांकन की प्रक्रिया लागू हो जाएगी। इससे पाठ्यपुस्तकों का बोझ और परीक्षा का तनाव कम करने का सरकार का मकसद किसी हद तक पूरा हो सकता है। इस प्रक्रिया को अपनाने का प्रस्ताव राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् का था। फिलहाल लिखित और प्रायोगिक परीक्षाओं के आधार पर मूल्यांकन का प्रावधान है। जबकि विद्यालय में रहते हुए विद्यार्थी की सक्रियता पाठ्यपुस्तकों तक सीमित नहीं होती। वह खेलकूद, संगीत, भाषण, वाद-विवाद जैसी अनेक रचनात्मक गतिविधियों में भी शरीक होता है।

इनका पाठ्यक्रम से सीधे-सीधे कोई संबंध भले न हो, पर ये विद्यार्थी के सीखने-समझने की प्रक्रिया का हिस्सा होती हैं। इसलिए इस बात की ज़रूरत लंबे समय से महसूस की जा रही है कि विद्यार्थी का समग्र मूल्यांकन होना चाहिए। लिखित और प्रायोगिक परीक्षा के आधार पर सिर्फ़ पाठगत ज्ञान और बोध को जाँचा-परखा जा सकता है। प्रो. यशपाल भी विद्यार्थी के समग्र मूल्यांकन के पक्षधर रहे हैं। जब एनसीईआरटी की नयी पाठ्यचर्या की रूपरेखा तैयार करने के लिए उनकी अध्यक्षता में समिति का गठन किया गया तभी उन्होंने सतत् और व्यापक मूल्यांकन की पद्धति अपनाने का सुझाव दिया था। अब यह विद्यालयों की ज़िम्मेदारी होगी कि वे विद्यार्थियों की शैक्षणिक योग्यता के साथ ही उनकी दूसरी गतिविधियों को भी आँकें। इसके लिए सौ में से बीस अंक निर्धारित किए गए हैं। इन्हें विद्यार्थी के वार्षिक और बोर्ड परीक्षाओं में प्राप्त अंकों में जोड़ा जाएगा। इस पद्धति के लागू होने से जहाँ विद्यार्थियों में पाठ्यक्रम से अलग स्कूली गतिविधियों में हिस्सा लेने का उत्साह बढ़ेगा वहीं अध्यापक भी इनके प्रति अधिक ज़िम्मेदारी महसूस करेंगे।

हालाँकि केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और हरियाणा बोर्ड के विद्यालयों में आंतरिक मूल्यांकन पद्धति पहले से लागू है और दूसरे कई राज्यों में इस पर विचार चल रहा है, लेकिन इसके अंक वार्षिक और बोर्ड परीक्षा के अंकों में जोड़े जाने का प्रावधान न होने के कारण समग्र मूल्यांकन का मकसद पूरा नहीं हो पा रहा था। एनसीईआरटी की नयी पाठ्यचर्या में विद्यार्थियों को खेल-खेल में, अपने आसपास के वातावरण और रोज़मर्रा की ज़िंदगी से भी सीखने-सिखाने पर ज़ोर है। इसलिए प्रस्तावित मूल्यांकन पद्धति से यह प्रक्रिया और पुष्ट होगी। देखा जाता है कि पाठ्यक्रम पर अधिक ज़ोर होने के कारण अनेक विद्यार्थी खेलकूद, सांस्कृतिक, सामाजिक और कलात्मक गतिविधियों में दिलचस्पी नहीं लेते। अभिभावक भी बच्चों को इनके प्रति प्रोत्साहित नहीं करते। निजी स्कूलों में सह-शैक्षणिक गतिविधियों पर ज़रूर कुछ ध्यान दिया जाता है, मगर ज़्यादातर सरकारी स्कूल इनके प्रति उदासीन ही दिखाई देते हैं। समग्र मूल्यांकन की पद्धति लागू होने से वे ऐसी गतिविधियाँ आयोजित करने के लिए बाध्य होंगे। चूँकि इस पद्धति में विद्यार्थी की सामाजिक सक्रियता और अनुशासन जैसे गुणों का भी मूल्यांकन आवश्यक होगा इसलिए अध्यापकों की भूमिका अध्यापन तक सीमित नहीं रहेगी। शिक्षणेतर गतिविधियों की बाबत अध्यापकों में जागरूकता और जानकारी की कमी भी विद्यार्थियों की कलात्मक, सांस्कृतिक या सामाजिक कार्य संबंधी क्षमताओं के विकास में रोड़ा साबित होती रही हैं। इसलिए ऐसी गतिविधियों के मद्देनज़र अध्यापकों के प्रशिक्षण पर भी ध्यान देना होगा।

जनसता में प्रकाशित संपादकीय

© NCERT not to be republished

स्तंभ लेखन

इसी तरह स्तंभ लेखन भी विचारपरक लेखन का एक प्रमुख रूप है। कुछ महत्त्वपूर्ण लेखक अपने खास वैचारिक रुझान के लिए जाने जाते हैं। उनकी अपनी एक लेखन-शैली भी विकसित हो जाती है। ऐसे लेखकों की लोकप्रियता को देखकर अखबार उन्हें एक नियमित स्तंभ लिखने का जिम्मा दे देते हैं। स्तंभ का विषय चुनने और उसमें अपने विचार व्यक्त करने की स्तंभ लेखक को पूरी छूट होती है। स्तंभ में लेखक के विचार अभिव्यक्त होते हैं। यही कारण है कि स्तंभ अपने लेखकों

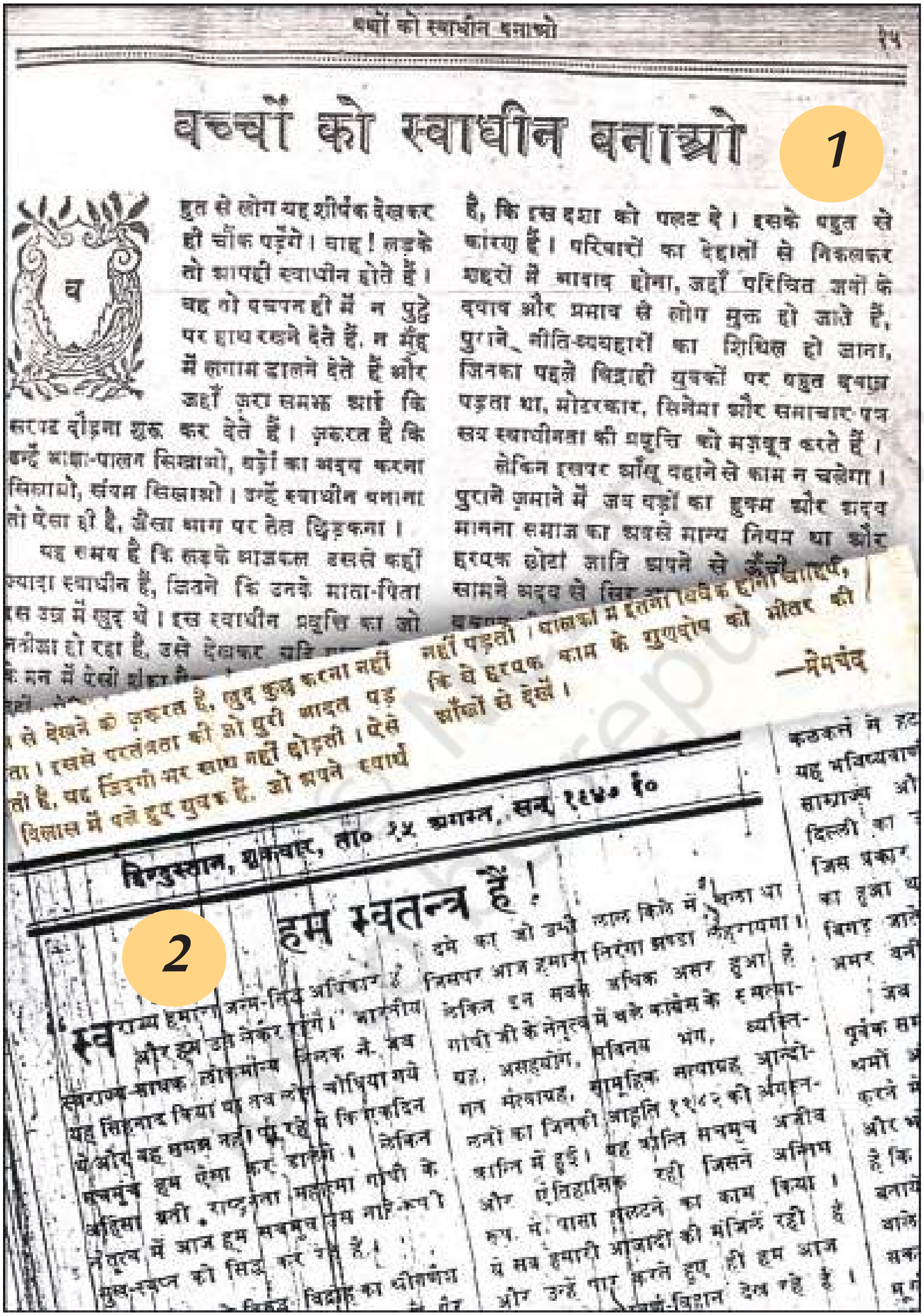

बच्चों को स्वाधीन बनाओ

बहुत से लोग यह शीर्षक देखकर ही चौंक पड़ेंगे। वाह! लड़के तो आपही स्वाधीन होते हैं। वह तो बचपन ही में न पुट्ठे पर हाथ रखने देते हैं, न मुँह में लगाम डालने देते हैं और जहाँ ज़रा समझ आई कि बरग़द दौड़ना शुरू कर देते हैं। ज़रूरत है कि उन्हें आज्ञा-पालन सिखाओ, बड़ों का अदब करना सिखाओ, संयम सिखाओ। उन्हें स्वाधीन बनाना तो ऐसा ही है, जैसा आग पर तेल छिड़कना।

यह सत्य है कि लड़के आजकल उससे कहीं ज़्यादा स्वाधीन हैं, जितने कि उनके माता-पिता इस उम्र में खुद थे। इस स्वाधीन प्रवृत्ति का जो

है, कि इस दशा को पलट दे। इसके बहुत से कारण हैं। परिवारों का देहातों से निकलकर शहरों में आबाद होना, जहाँ परिचित जनों के दबाव और प्रभाव से लोग मुक्त हो जाते हैं, पुराने रीति-व्यवहारों का शिथिल हो जाना, जिनका पहले विद्रोही युवकों पर बहुत दबाव पड़ता था, मोटरकार, सिनेमा और समाचार-पत्र सब स्वाधीनता की प्रवृत्ति को मज़बूत करते हैं।

लेकिन इसपर आँसू बहाने से काम न चलेगा। पुराने ज़माने में जब बड़ों का हुक्म और अदब मानना समाज का सबसे मान्य नियम था और हरएक छोटा जाति अपने से ऊँची

नहीं पड़ती। बालकों में इतना विवेक होना चाहिए, कि वे हरएक काम के गुणदोष को भीतर की आँखों से देखें।

—प्रेमचंद

हिन्दुस्तान, शुक्रवार, ता० १५ अगस्त, सन् १९४७ ई०

हम स्वतन्त्र हैं!

1. प्रेमचंद द्वारा संपादित 'हंस' का संपादकीय 2. आज़ादी के दिन के 'हिन्दुस्तान' का संपादकीय

के नाम पर जाने और पसंद किए जाते हैं। कुछ स्तंभ इतने लोकप्रिय होते हैं कि अखबार उनके कारण भी पहचाने जाते हैं। लेकिन नए लेखकों को स्तंभ लेखन का मौका नहीं मिलता है।

संपादक के नाम पत्र

अखबारों के संपादकीय पृष्ठ पर और पत्रिकाओं की शुरुआत में संपादक के नाम पाठकों के पत्र भी प्रकाशित होते हैं। सभी अखबारों में यह एक स्थायी स्तंभ होता है। यह पाठकों का अपना स्तंभ होता है। इस स्तंभ के ज़रिये अखबार के पाठक न सिर्फ़ विभिन्न मुद्दों पर अपनी राय व्यक्त करते हैं बल्कि जन समस्याओं को भी उठाते हैं। एक तरह से यह स्तंभ जनमत को प्रतिबिंबित करता है। ज़रूरी नहीं कि अखबार पाठकों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से सहमत हो। यह स्तंभ नए लेखकों के लिए लेखन की शुरुआत करने और उन्हें हाथ माँजने का भी अच्छा अवसर देता है।

लेख

सभी अखबार संपादकीय पृष्ठ पर समसामयिक मुद्दों पर वरिष्ठ पत्रकारों और उन विषयों के विशेषज्ञों के लेख प्रकाशित करते हैं। इन लेखों में किसी विषय या मुद्दे पर विस्तार से चर्चा की जाती है। लेख विशेष रिपोर्ट और फ़ीचर से इस मामले में अलग

गतिविधि

अपने स्थानीय अखबार में 'संपादक के नाम पत्र' कॉलम के लिए चार सप्ताहों तक हर सप्ताह अलग-अलग विषयों एक-एक पत्र भेजिए। पत्रों के शब्द संख्या 50 से 75 शब्दों से अधिक नहीं हो। पहले सप्ताह संपादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित किसी संपादकीय या लेख में उठाए गए मुद्दे पर अपनी राय भेजिए। अगले सप्ताह अपने शहर की किसी सार्वजनिक समस्या पर पत्र भेजिए। तीसरे सप्ताह मुहल्ले की किसी समस्या पर पत्र भेजिए और आखिरी पत्र में अपने स्कूल से जुड़ी किसी समस्या का ब्योरा देते हुए चिट्ठी भेजिए। समाचारपत्र में पत्र स्तंभ को ध्यान से पढ़िए। क्या उसमें आपका पत्र प्रकाशित हुआ?

© NCERT not to be republished

है कि उसमें लेखक के विचारों को प्रमुखता दी जाती है। लेकिन ये विचार तथ्यों और सूचनाओं पर आधारित होते हैं और लेखक उन तथ्यों और सूचनाओं के विश्लेषण और अपने तर्कों के ज़रिये अपनी राय प्रस्तुत करता है। लेख लिखने के लिए पर्याप्त तैयारी ज़रूरी है। इसके लिए उस विषय से जुड़े सभी तथ्यों और सूचनाओं के अलावा पृष्ठभूमि सामग्री भी जुटानी पड़ती है। यह भी देखना चाहिए कि उस विषय पर दूसरे लेखकों और पत्रकारों के क्या विचार हैं?

लेख की कोई एक निश्चित लेखन शैली नहीं होती और हर लेखक की अपनी शैली होती है। लेकिन अगर आप अखबारों और पत्रिकाओं के लिए लेख लिखना चाहते हैं तो शुरुआत उन विषयों के साथ करनी चाहिए जिस पर आपकी अच्छी पकड़ और जानकारी हो। लेख का भी एक प्रारंभ, मध्य और अंत होता है। लेख की शुरुआत में अगर उस विषय के सबसे ताज़ा प्रसंग या घटनाक्रम का विवरण दिया जाए और फिर उससे जुड़े अन्य पहलुओं को सामने लाया जाए, तो लेख का प्रारंभ आकर्षक बन सकता है। इसके बाद तथ्यों की मदद से विश्लेषण करते हुए आखिर में आप अपना निष्कर्ष या मत प्रकट कर सकते हैं।

साक्षात्कार/इंटरव्यू

समाचार माध्यमों में साक्षात्कार का बहुत महत्त्व है। पत्रकार एक तरह से साक्षात्कार के ज़रिये ही समाचार, फ़ीचर, विशेष रिपोर्ट और अन्य कई तरह के पत्रकारीय लेखन के लिए कच्चा माल इकट्ठा करते हैं। पत्रकारिय साक्षात्कार और सामान्य बातचीत में यह फ़र्क होता है कि साक्षात्कार में एक पत्रकार किसी अन्य व्यक्ति से तथ्य, उसकी राय और भावनाएँ जानने के लिए सवाल पूछता है। साक्षात्कार का एक स्पष्ट मकसद और ढाँचा होता है। एक सफल साक्षात्कार के लिए आपके पास न सिर्फ़ ज्ञान होना चाहिए बल्कि आपमें संवेदनशीलता, कूटनीति, धैर्य और साहस जैसे गुण भी होने चाहिए।

एक अच्छे और सफल साक्षात्कार के लिए यह ज़रूरी है कि आप जिस विषय पर और जिस व्यक्ति के साथ साक्षात्कार करने जा रहे हैं, उसके बारे में आपके पास पर्याप्त जानकारी हो। दूसरे, आप साक्षात्कार से क्या निकालना चाहते हैं, इसके बारे में स्पष्ट रहना बहुत ज़रूरी है। आपको वे सवाल पूछने चाहिए जो किसी अखबार के एक आम पाठक के मन में हो सकते हैं। साक्षात्कार को अगर रिकार्ड करना संभव हो तो बेहतर है लेकिन अगर ऐसा संभव न हो

© NCERT not to be republished

तो साक्षात्कार के दौरान आप नोट्स लेते रहें। साक्षात्कार को लिखते समय आप दो में से कोई भी एक तरीका अपना सकते हैं। एक आप साक्षात्कार को सवाल और फिर जवाब के रूप में लिख सकते हैं या फिर उसे एक आलेख की तरह से भी लिख सकते हैं।

व्यक्तिचित्र फ़ीचर समाचार का एक उदाहरण

मुंबई, 16 अगस्त। देश को ब्रिटिश शासन से आज़ाद हुए 57 साल हो चुके हैं लेकिन 84 साल के गांधीवादी माधवदास ठाकरसे का मिशन अभी तक अनवरत जारी है। वे होम्योपैथिक दवाओं से रोगियों का इलाज करते हैं और उनके लिए रविवार का दिन भी अन्य दिनों की तरह ही व्यस्त रहता है। वे सुबह तीन बजे उठकर स्नान कर लेते हैं। उसके बाद वे बोरीवली स्कूल का दौरा करते हैं, फिर पाँच घंटे तक चरखे से सूत कातने के बाद रोगियों से मिलते हैं।

ठाकरसे एक सक्रिय स्वतंत्रता सेनानी हैं और उन्होंने महात्मा गांधी से प्रभावित होकर आज़ादी के आंदोलन में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। उस समय वे महज 17 साल के छरहरे और आकर्षक युवक थे। उन्होंने बताया कि बापू का आदर्श और उनकी प्रार्थना सभाएँ काफ़ी प्रभावित करने वाली थीं। स्वतंत्रता आंदोलन में शामिल होने का फ़ैसला उन्होंने अचानक किया। उनके पिता एक संपन्न व्यापारी थे लेकिन उन्होंने उनके काम में हाथ बँटाने के बजाय देश के लिए काम करना बेहतर समझा।

ठाकरसे ने बीते दिनों को याद करते हुए कहा–"मेरे पिता के अपार धन का कोई मतलब नहीं था।" वे ग्रामदेवी स्थित मणिभवन के सामने छह कमरे के अपने मकान में बैठकर बात कर रहे थे। वे फ़िलहाल पिता का घर छोड़कर फ़ोर्ट के एक कमरे के फ़्लैट में रह रहे हैं और अपनी आय का ज़्यादातर हिस्सा मुफ़्त होम्योपैथिक दवाएँ बाँटने में खर्च करते हैं। उनके माता-पिता ने उनकी शादी बुद्धिमान और व्यवहार कुशल मालती से यह सोचकर कराई थी कि वह ठाकरसे की सोच में बदलाव ला सकेंगी। लेकिन ठाकरसे की प्रतिज्ञा अटल थी। सचाई तो यह है कि मालती अकसर उनके पैम्फ्लेट की प्रूफ़ रीडिंग कर उनकी मदद ही किया करती थीं। इस हठयोगी का आज़ादी का जुनून अभी भी उतना ही पक्का है।

ठाकरसे के सात बच्चों में से एक उनकी बेटी जयश्री का कहना है–"उनका आदर्श आज की दुनिया से अलग है लेकिन वे अभी तक नहीं बदल पाए। वे कई दिनों तक पानी के बिना रह सकते हैं और किसी को रिश्वत नहीं देते हैं।" इटली के वाणिज्य दूतावास में काम करने वाली उनकी बेटी कल्पना मुसकराती हुई कहती हैं–"वे अभी भी अपने कपड़े खुद धोते हैं और न ही किसी को उपहार देते हैं और न लेते हैं।"

ठाकरसे अपने काते हुए सूतों से बने कपड़े ही पहनते हैं। वे खादी और ग्रामोद्योग आयोग में मार्केटिंग डायरेक्टर भी रह चुके हैं। वे याद करते हैं कि किस तरह वे 1904 में गांधीवादी विचारधारा की लेखिका उषा मेहता के परचों को लोगों में वितरित करते थे। ब्रिटिश विरोधी परचे बाँटने के जुर्म में उन्हें छह महीने की सज़ा भी हुई थी। लेकिन आज की तारीख में वे सिर्फ़ अपनी कल्पना के अनुरूप जीवन से संघर्ष करते हैं। उन्होंने बताया–"राष्ट्रवाद धीमी मौत की तरह समाप्त हो रहा है। आज के राजनेता सिर्फ़ कुर्सी और सत्ता पाने के लिए ही आतुर रहते हैं।" देश की हालत से वे काफ़ी दुखी हैं लेकिन आठ साल की उनकी पोती यशस्वी जब उनके पास चरखा कातना सीखने के लिए रोज़ाना आधा घंटा बैठती है तो उन्हें थोड़ा सुकून मिलता है। वे हँसते हुए बताते हैं–"मेरी पोती यह सीखने के लिए काफ़ी उत्सुक है।"

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. किसे क्या कहते हैं–
   (क) सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य या सूचना को सबसे ऊपर रखना और उसके बाद घटते हुए महत्त्वक्रम में सूचनाएँ देना...
   (ख) समाचार के अंतर्गत किसी घटना का नवीनतम और महत्त्वपूर्ण पहलू...
   (ग) किसी समाचार के अंतर्गत उसका विस्तार, पृष्ठभूमि, विवरण आदि देना...
   (घ) ऐसा सुव्यवस्थित, सृजनात्मक और आत्मनिष्ठ लेखन; जिसके माध्यम से सूचनाओं के साथ-साथ मनोरंजन पर भी ध्यान दिया जाता है...
   (ङ) किसी घटना, समस्या या मुद्दे की गहन छानबीन और विश्लेषण...
   (च) वह लेख, जिसमें किसी मुद्दे के प्रति समाचारपत्र की अपनी राय प्रकट होती है...

2. नीचे दिए गए समाचार के अंश को ध्यानपूर्वक पढ़िए–

शांति का संदेश लेकर आए फ़जलुर्रहमान

पाकिस्तान में विपक्ष के नेता मौलाना फ़जलुर्रहमान ने अपनी भारत यात्रा के दौरान कहा कि वह शांति व भाईचारे का संदेश लेकर आए हैं। यहाँ दारूलउलूम पहुँचने पर पत्रकार सम्मेलन को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि दोनों देशों के संबंधों में निरंतर सुधार हो रहा है। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह से गत सप्ताह नयी दिल्ली में हुई वार्ता के संदर्भ में एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा कि पाकिस्तानी सरकार ने कश्मीर समस्या के समाधान के लिए 9 प्रस्ताव दिए हैं। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने उन पर विचार करने का आश्वासन दिया है। कश्मीर समस्या के संबंध में मौलाना साहब ने आशावादी रवैया अपनाते हुए कहा कि 50 वर्षों की इतनी बड़ी जटिल समस्या का एक-दो वार्ता में हल होना संभव नहीं है। लेकिन इस समस्या का समाधान अवश्य निकलेगा। प्रधानमंत्री के प्रस्तावित पाकिस्तान दौरे की बाबत उनका कहना था कि निकट भविष्य में यह संभव है और हम लोग उनका ऐतिहासिक स्वागत करेंगे। उन्होंने कहा कि दोनों देशों के रिश्ते बहुत मज़बूत हुए हैं और प्रथम बार सीमाएँ खुली हैं, व्यापार बढ़ा है तथा बसों का आवागमन आरंभ हुआ है।

(हिन्दुस्तान से साभार)

© NCERT not to be republished

(क) दिए गए समाचार में से ककार ढूँढ़कर लिखिए, जो ककार नहीं हैं उन्हें बताइए।
(ख) उपर्युक्त उदाहरण के आधार पर निम्नलिखित बिंदुओं को स्पष्ट कीजिए-
- इंट्रो
- बॉडी
- समापन

(ग) उपर्युक्त उदाहरण का गौर से अवलोकन कीजिए और बताइए कि ये कौन-सी पिरामिड-शैली में है, और क्यों?

3. एक दिन के किन्हीं तीन समाचारपत्रों को पढ़िए और दिए गए बिंदुओं के संदर्भ में उनका तुलनात्मक अध्ययन कीजिए–
(क) सूचनाओं का केंद्र/मुख्य आकर्षण
(ख) समाचार का पृष्ठ एवं स्थान
(ग) समाचार की प्रस्तुति
(घ) समाचार की भाषा-शैली

4. अपने विद्यालय और मुहल्ले के आसपास की समस्याओं पर नज़र डालें। जैसे–पानी की कमी, बिजली की कटौती, खराब सड़कें, सफ़ाई की दुर्व्यवस्था। इनमें से किन्हीं दो विषयों पर रिपोर्ट तैयार करें और अपने शहर के अखबार में भेजें।

5. किसी क्षेत्र विशेष से जुड़े व्यक्ति से साक्षात्कार करने के लिए प्रश्न-सूची तैयार कीजिए, जैसे–
- संगीत / नृत्य
- चित्रकला
- शिक्षा
- अभिनय
- साहित्य
- खेल

6. आप अखबार के मुख पृष्ठ पर कौन-से छह समाचार शीर्षक/सुर्खियाँ (हेडलाइन) देखना चाहेंगे? उन्हें लिखिए।

अभ्यास

© NCERT not to be republished

5

विशेष लेखन–स्वरूप और प्रकार

11071CH05

इस पाठ में...

- क्या है विशेष लेखन
- विशेष लेखन की भाषा और शैली
- विशेष लेखन के क्षेत्र
- कैसे हासिल करें विशेषज्ञता

दस लाख संगीनें मेरे भीतर वह खौफ़ पैदा नहीं करतीं, जो तीन छोटे अखबार।

–नेपोलियन

फ्रांसीसी सेनानायक

एक नज़र में...

पिछले अध्यायों में हमने जनसंचार के तमाम माध्यमों के अलावा लेखन के विभिन्न प्रकारों पर बात की। समाचार और फ़ीचर लेखन के फ़र्क को समझा। लेकिन मीडिया लेखन के कई और पहलू भी हैं। आपने ध्यान दिया होगा कि ज़्यादातर अखबारों में खेल, अर्थ–व्यापार, सिनेमा या मनोरंजन के अलग पृष्ठ होते हैं। इनमें छपने वाली खबरें, फ़ीचर या आलेख कुछ अलग तरह से लिखे जाते हैं। इनकी न सिर्फ़ शैली अलग होती है बल्कि भाषा भी अलग होती है। एक समाचारपत्र या पत्रिका तभी संपूर्ण लगती है जब उसमें विभिन्न विषयों और क्षेत्रों के बारे में घटने वाली घटनाओं, समस्याओं और मुद्दों के बारे में नियमित रूप से जानकारी दी जाए।

इससे समाचारपत्रों में एक विविधता आती है और उनका कलेवर व्यापक होता है। दरअसल, पाठकों की रुचियाँ बहुत व्यापक

© NCERT not to be republished

होती हैं और वे साहित्य से लेकर विज्ञान तक तथा कारोबार से लेकर खेल तक सभी विषयों पर पढ़ना चाहते हैं। इसके अलावा बहुतेरे पाठक ऐसे भी होते हैं जिनकी विज्ञान या खेल या कारोबार या सिनेमा में गहरी दिलचस्पी होती है। वे अपनी दिलचस्पी के इन विषयों के बारे में विस्तार से पढ़ना चाहते हैं। इसलिए समाचारपत्रों और दूसरे जनसंचार माध्यमों को सामान्य समाचारों से अलग हटकर विशेष क्षेत्रों या विषयों के बारे में भी निरंतर और पर्याप्त जानकारी देनी पड़ती है।

क्या है विशेष लेखन

समाचारपत्रों में विशेष लेखन के लिए जगह यहीं से बनती है। विशेष लेखन यानी किसी खास विषय पर सामान्य लेखन से हटकर किया गया लेखन। अधिकतर समाचारपत्रों और पत्रिकाओं के अलावा टी.वी. और रेडियो चैनलों में विशेष लेखन के लिए अलग **डेस्क** होता है और उस विशेष डेस्क पर काम करने वाले पत्रकारों का समूह भी अलग होता है। जैसे समाचारपत्रों और अन्य माध्यमों में बिज़नेस यानी कारोबार और व्यापार का अलग डेस्क होता है, इसी तरह खेल की खबरों और फ़ीचर के लिए खेल डेस्क अलग होता है। इन डेस्कों पर काम करने वाले उपसंपादकों और संवाददाताओं से अपेक्षा की जाती है कि संबंधित विषय या क्षेत्र में उनकी विशेषज्ञता होगी।

असल में, खबरें भी कई तरह की होती हैं–राजनीतिक, आर्थिक, अपराध, खेल, फ़िल्म, कृषि, कानून, विज्ञान या किसी भी और विषय से जुड़ी हुई। संवाददाताओं के बीच काम का विभाजन आमतौर पर उनकी दिलचस्पी और ज्ञान को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। मीडिया की भाषा में इसे **बीट** कहते हैं। एक संवाददाता की बीट अगर अपराध है तो इसका अर्थ यह है कि उसका कार्यक्षेत्र अपने शहर या क्षेत्र में घटनेवाली आपराधिक घटनाओं की रिपोर्टिंग करना है। अखबार की ओर से वह इनकी रिपोर्टिंग के लिए ज़िम्मेदार और जवाबदेह भी है।

इसी तरह अगर आपकी दिलचस्पी और जानकारी का क्षेत्र खेल है तो आपको खेल बीट मिल सकती है और अगर आपकी आर्थिक या कारोबार जगत से जुड़ी खबरों में दिलचस्पी और जानकारी है तो आपके हिस्से आर्थिक रिपोर्टिंग की ज़िम्मेदारी आ सकती है। अगर आपको प्रकृति या पर्यावरण से प्यार है और इसके बारे में कुछ ज़्यादा जानकारी रखते हैं तो आपको पर्यावरण बीट मिल सकती है। लेकिन विशेष लेखन केवल बीट रिपोर्टिंग नहीं है। यह बीट रिपोर्टिंग से आगे एक तरह की विशेषीकृत रिपोर्टिंग है जिसमें न सिर्फ़ उस विषय की गहरी जानकारी होनी चाहिए बल्कि उसकी रिपोर्टिंग से संबंधित भाषा और शैली पर भी आपका पूरा अधिकार होना चाहिए।

सामान्य बीट रिपोर्टिंग के लिए भी एक पत्रकार को काफ़ी तैयारी करनी पड़ती है। उदाहरण के तौर पर जो पत्रकार राजनीति में दिलचस्पी रखते हैं या किसी खास राजनीतिक पार्टी को कवर करते हैं, उन्हें पता होना चाहिए कि उस पार्टी का इतिहास क्या है, उसमें समय-समय पर

क्या हुआ है, आज क्या चल रहा है, पार्टी के सिद्धांत या नीतियाँ क्या हैं, उसके पदाधिकारी कौन–कौन हैं और उनकी पृष्ठभूमि क्या है, बाकी पार्टियों से उस पार्टी के कैसे रिश्ते हैं और उनमें आपस में क्या फ़र्क है, उसके अधिवेशनों में क्या–क्या होता रहा है, उस पार्टी की कमियाँ और खूबियाँ क्या हैं, वगैरह–वगैरह। पत्रकार को उस पार्टी के भीतर गहराई तक अपने संपर्क बनाने चाहिए और खबर हासिल करने के नए–नए स्रोत विकसित करने चाहिए। किसी भी स्रोत या सूत्र पर आँख मूँदकर भरोसा नहीं करना चाहिए और जानकारी की पुष्टि कई और स्रोतों के ज़रिये भी करनी चाहिए। यानी उस पत्रकार को ज़्यादा से ज़्यादा समय अपने क्षेत्र के बारे में हर छोटी बड़ी जानकारी इकट्ठी करने में बिताना पड़ता है तभी वह उस बारे में विशेषज्ञता हासिल कर सकता है और उसकी रिपोर्ट या खबर विश्वसनीय मानी जाती है।

यह तो हुई बीट रिपोर्टिंग। लेकिन बीट रिपोर्टिंग और विशेषीकृत रिपोर्टिंग में फ़र्क है। दोनों के बीच सबसे महत्त्वपूर्ण फ़र्क यह है कि अपनी बीट की रिपोर्टिंग के लिए संवाददाता में उस क्षेत्र के बारे में जानकारी और दिलचस्पी का होना पर्याप्त है। इसके अलावा एक बीट रिपोर्टर को आमतौर पर अपनी बीट से जुड़ी सामान्य खबरें ही लिखनी होती हैं। लेकिन विशेषीकृत रिपोर्टिंग का तात्पर्य यह है कि आप सामान्य खबरों से आगे बढ़कर उस विशेष क्षेत्र या विषय से जुड़ी घटनाओं, मुद्दों और समस्याओं का बारीकी से विश्लेषण करें और पाठकों के लिए उसका अर्थ स्पष्ट करने की कोशिश करें। जैसे अगर शेयर बाज़ार में भारी गिरावट आती है तो उस बीट पर रिपोर्टिंग करनेवाला संवाददाता उसकी एक तथ्यात्मक रिपोर्ट तैयार करेगा, जिसमें सभी ज़रूरी सूचनाएँ और तथ्य शामिल होंगे। लेकिन विशेषीकृत रिपोर्टिंग करनेवाला संवाददाता इसका विश्लेषण करके यह स्पष्ट करने की कोशिश करेगा कि बाज़ार में गिरावट क्यों और किन कारणों से आई है और इसका आम निवेशकों पर क्या असर पड़ेगा।

यही कारण है कि बीट कवर करने वाले रिपोर्टर को संवाददाता और विशेषीकृत रिपोर्टिंग करने वाले रिपोर्टर को विशेष संवाददाता का दर्जा दिया जाता है। लेकिन विशेष लेखन सिर्फ़ विशेषीकृत रिपोर्टिंग भी नहीं है। विशेष लेखन के तहत रिपोर्टिंग के अलावा उस विषय या क्षेत्र विशेष पर फ़ीचर, टिप्पणी, साक्षात्कार, लेख, समीक्षा और स्तंभ लेखन भी आता है। इस तरह का विशेष लेखन समाचारपत्र या पत्रिका में काम करने वाले पत्रकार से लेकर **फ्रीलांस पत्रकार** या लेखक तक सभी कर सकते हैं। शर्त सिर्फ़ यह है कि विशेष लेखन के इच्छुक पत्रकार या स्वतंत्र लेखक को उस विषय में माहिर होना चाहिए। मतलब यह कि किसी भी क्षेत्र पर विशेष लेखन करने के लिए ज़रूरी है कि उस क्षेत्र के बारे में आपको ज़्यादा से ज़्यादा पता हो, उसकी ताज़ा से ताज़ा सूचना आपके पास हो, आप उसके बारे में लगातार पढ़ते हों, जानकारियाँ और तथ्य इकट्ठे करते हों और उस क्षेत्र से जुड़े लोगों से लगातार मिलते रहते हों।

इसी तरह अखबारों और पत्र–पत्रिकाओं में किसी खास विषय पर लेख या स्तंभ लिखने वाले कई बार पेशेवर पत्रकार न होकर उस विषय के जानकार या विशेषज्ञ होते हैं। जैसे रक्षा, विज्ञान, विदेशनीति, कृषि या ऐसे ही किसी क्षेत्र में कई वर्षों से काम कर रहा कोई प्रोफ़ेशनल इसके बारे में बेहतर तरीके से लिख सकता है क्योंकि उसके पास इस क्षेत्र का वर्षों का अनुभव होता है,

वो इसकी बारीकियाँ समझता है और उसके पास विश्लेषण करने की क्षमता होती है। हो सकता है उसके लिखने की शैली सामान्य पत्रकारों की तरह न हो लेकिन जानकारी और अंतर्दृष्टि के मामले में उसका लेखन पाठकों के लिए फ़ायदेमंद होता है। उदाहरण के तौर पर हम खेलों में हर्ष भोगले, जसदेव सिंह या नरोत्तम पुरी का नाम ले सकते हैं। वे पिछले चालीस सालों से हॉकी से लेकर क्रिकेट तक और ओलंपिक से लेकर एशियाई खेलों तक की कमेंट्री करते रहे हैं।

ज़ाहिर है कि खेलों के बारे में उनकी जितनी जानकारी है, उतनी आमतौर पर किसी के पास नहीं होती है। उन्हें खेल विशेषज्ञ माना जाता है। वे खेलों की तकनीकी बारीकियाँ समझते हैं। क्रिकेट का कोई भी रिकार्ड उनकी ज़बान पर होता है। ऐसे में, खेलों पर लिखे उनके लेखों को आम पाठक बहुत रुचि के साथ पढ़ते हैं। इसी तरह रक्षा, विदेशनीति, राष्ट्रीय सुरक्षा, विज्ञान, स्वास्थ्य, शिक्षा और पर्यावरण जैसे विषयों पर लिखने वाले विशेषज्ञों और प्रोफ़ेशनल्स के स्तंभ या लेख/टिप्पणियाँ, समाचारपत्रों में प्रमुखता से प्रकाशित होती हैं।

विशेष लेखन की भाषा और शैली

सामान्य लेखन का यह सर्वमान्य नियम विशेष लेखन पर भी लागू होता है कि वह सरल और समझ में आने वाला हो। दरअसल, विशेष लेखन का संबंध जिन विषयों और क्षेत्रों से है, उनमें से अधिकांश तकनीकी रूप से जटिल क्षेत्र हैं और उनसे जुड़ी घटनाओं और मुद्दों को समझना आम पाठकों के लिए कठिन होता है। इसलिए इन क्षेत्रों में विशेष लेखन की ज़रूरत पड़ती है जिससे पाठकों को समझने में मुश्किल न हो। विशेष लेखन की भाषा और शैली कई मामलों में सामान्य लेखन से अलग है। उनके बीच सबसे बुनियादी फ़र्क यह है कि हर क्षेत्र विशेष की अपनी विशेष तकनीकी शब्दावली होती है जो उस विषय पर लिखते हुए आपके लेखन में आती है। जैसे कारोबार पर विशेष लेखन करते हुए आपको उसमें इस्तेमाल होने वाली शब्दावली से परिचित होना चाहिए। दूसरे, अगर आप उस शब्दावली से परिचित हैं तो आपके सामने चुनौती यह होती है कि आप अपने पाठक को भी उस शब्दावली से इस तरह परिचित कराएँ कि उसे आपकी रिपोर्ट को समझने में कोई दिक्कत न हो।

मिसाल के तौर पर कारोबार और व्यापार से जुड़ी खबरों में आप अकसर तेजड़िए, मंदड़िए, बिकवाली, ब्याज दर, मुद्रास्फीति, व्यापार घाटा, राजकोषीय घाटा, राजस्व घाटा, वार्षिक योजना, विदेशी संस्थागत निवेशक, एफ.डी.आई., आवक, निवेश, आयात, निर्यात जैसे शब्द पढ़ते होंगे। इसी तरह 'सोने में भारी उछाल', 'चाँदी लुढ़की' या 'आवक बढ़ने से लाल मिर्च की कड़वाहट घटी' या 'शेयर बाज़ार ने पिछले सारे रिकॉर्ड तोड़े, सेंसेक्स आसमान पर' आदि शीर्षक भी आपकी निगाहों से गुज़रे होंगे। पर्यावरण और मौसम से जुड़ी खबरों के लिए उससे जुड़े खास शब्द मसलन–पश्चिमी हवाएँ, आर्द्रता, टॉक्सिक कचरा, ग्लोबल वार्मिंग, तूफ़ान का केंद्र या रुख आदि शब्दों की ओर भी आपका ध्यान गया होगा। खेलों में भी 'भारत ने पाकिस्तान को चार विकेट से पीटा', 'चैंपियंस कप में मलेशिया ने जर्मनी के आगे घुटने टेके' आदि शीर्षक सहज ही ध्यान खींचते हैं।

विशेष लेखन की कोई निश्चित शैली नहीं होती। लेकिन अगर आप अपने बीट से जुड़ा कोई समाचार लिख रहे हैं तो उसकी शैली उलटा पिरामिड शैली ही होगी। लेकिन अगर आप समाचार

फ़ीचर लिख रहे हैं तो उसकी शैली कथात्मक हो सकती है। इसी तरह अगर आप लेख या टिप्पणी लिख रहे हों तो इसकी शुरुआत भी फ़ीचर की तरह हो सकती है। जैसे आप किसी केस स्टडी से उसकी शुरुआत कर सकते हैं, उसे किसी खबर से जोड़कर यानी **न्यूज़पेग** के ज़रिये भी शुरू किया जा सकता है। इसमें पुराने संदर्भों को आज के संदर्भ में जोड़कर पेश करने की भी संभावना होती है।

चाहे आप शैली कोई भी अपनाएँ लेकिन मूल बात यह है कि किसी खास विषय पर लिखा गया आपका आलेख सामान्य लेख से अलग होना चाहिए। एक बात और याद रखनी चाहिए कि विशेष लेखन को सभी पाठक नहीं पढ़ते और एक हद तक उनका पाठक वर्ग अलग भी होता है। जैसे समाचारपत्र में कारोबार और व्यापार का पन्ना कम पाठक पढ़ते हैं लेकिन जो पाठक पढ़ते हैं, उनकी अपेक्षा सामान्य पाठकों की तुलना में अधिक होती है। चूँकि वे उस विषय या क्षेत्र से जुड़े होते हैं, इसलिए उनकी अपेक्षा यह होती है कि उन्हें उन विषयों या क्षेत्रों के बारे में ज़्यादा विस्तार और गहराई से बताया जाए।

विशेष लेखन के क्षेत्र

- अर्थ–व्यापार
- खेल
- विज्ञान–प्रौद्योगिकी
- कृषि
- विदेश
- रक्षा
- पर्यावरण
- शिक्षा
- स्वास्थ्य
- फ़िल्म–मनोरंजन
- अपराध
- सामाजिक मुद्दे
- कानून, आदि।

विशेष लेखन के कई क्षेत्र हैं। आमतौर पर रोज़मर्रा की रिपोर्टिंग और बीट को छोड़कर वैसे सभी क्षेत्र, विशेष लेखन के दायरे में आते हैं जिनमें अलग से विशेषज्ञता की ज़रूरत होती है। लेकिन समाचारपत्रों और दूसरे माध्यमों में खेल, कारोबार, सिनेमा, मनोरंजन, फ़ैशन, स्वास्थ्य, विज्ञान, पर्यावरण, शिक्षा, जीवनशैली और रहन-सहन जैसे विषयों को आजकल विशेष लेखन के लिहाज़ से ज़्यादा महत्त्व मिल रहा है। इसके अलावा रक्षा, विदेश नीति, राष्ट्रीय सुरक्षा और विधि जैसे क्षेत्रों में विशेषीकृत रिपोर्टिंग को प्राथमिकता दी जा रही है।

© NCERT not to be republished

विशेष लेखन के लिए हम जब विशेषज्ञता की बात करते हैं तो उसका तात्पर्य यह नहीं है कि आप उसके उस अर्थ में विशेषज्ञ हैं जिस अर्थ में एक प्रोफ़ेशनल अर्थशास्त्री आर्थिक मामलों का विशेषज्ञ होता है या कोई वरिष्ठ सैनिक अधिकारी या सैन्य विज्ञान में डॉक्टरेट रक्षा मामलों का विशेषज्ञ होता है। हालाँकि हाल के वर्षों में मीडिया में ऐसे विशेषज्ञ पत्रकारों की तादाद बढ़ी है जो अर्थशास्त्र या पर्यावरण विज्ञान या एमबीबीएस जैसी प्रोफ़ेशनल और उच्च डिग्री लेकर पत्रकारिता में आए हैं। लेकिन पत्रकारिता में विशेषज्ञता का अर्थ थोड़ा अलग होता है। यहाँ विशेषज्ञता से हमारा तात्पर्य एक तरह की पत्रकारीय विशेषज्ञता से है। पत्रकारीय विशेषज्ञता का अर्थ यह है कि व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित न होने के बावजूद उस विषय में जानकारी और अनुभव के आधार पर अपनी समझ को इस हद तक विकसित करना कि उस विषय या क्षेत्र में घटने वाली घटनाओं और मुद्दों की आप सहजता से व्याख्या कर सकें और पाठकों के लिए उनके मायने स्पष्ट कर सकें।

कैसे हासिल करें विशेषज्ञता

आजकल पत्रकारिता में 'जैक ऑफ़ ऑल ट्रेड्स, बट मास्टर ऑफ़ नन' (सभी विषयों के जानकार लेकिन किसी खास विषय में विशेषज्ञता नहीं) की बजाए 'मास्टर ऑफ़ वन' (यानी किसी एक विषय में विशेषज्ञता ज़रूरी है) की माँग की जा रही है। सवाल यह उठता है कि आप किसी भी विषय में विशेषज्ञता कैसे हासिल कर सकते हैं? इस सिलसिले में सबसे ज़रूरी बात यह है कि आप जिस भी विषय में विशेषज्ञता हासिल करना चाहते हैं, उसमें आपकी वास्तविक रुचि होनी चाहिए। इसके साथ ही अगर आप उस विषय में विशेषज्ञता हासिल करना चाहते हैं तो बेहतर होगा कि आप उच्चतर माध्यमिक (+2) और स्नातक स्तर पर उसी या उससे जुड़े विषय में पढ़ाई करें।

इसके अलावा अपनी रुचि के विषय में पत्रकारीय विशेषज्ञता हासिल करने के लिए आपको उन विषयों से संबंधित पुस्तकें खूब पढ़नी चाहिए। विशेष लेखन के क्षेत्र में सक्रिय लोगों के लिए खुद को अपडेट रखना बेहद ज़रूरी होता है। इसके लिए उस विषय से जुड़ी खबरों और रिपोर्टों की कटिंग करके फ़ाइल बनानी चाहिए। साथ ही उस विषय के प्रोफ़ेशनल विशेषज्ञों के लेख और विश्लेषणों की कटिंग भी सहेजकर रखनी चाहिए। एक तरह से आपको उस विषय में जितनी संभव हो, संदर्भ सामग्री जुटाकर रखनी चाहिए। इसके अलावा उस विषय का शब्दकोश और इनसाइक्लोपीडिया भी आपके पास होनी चाहिए।

यही नहीं, जिस विषय में आप विशेषज्ञता हासिल करना चाहते हैं, उससे जुड़े सरकारी और गैरसरकारी संगठनों और संस्थाओं की सूची, उनकी वेबसाइट का पता, टेलीफ़ोन नंबर और उसमें काम करने वाले विशेषज्ञों के नाम और फ़ोन नंबर अपनी डायरी में ज़रूर रखिए। दरअसल, एक पत्रकार की विशेषज्ञता कुछ हद तक उसके अपने सूत्रों और स्रोतों पर निर्भर करती है। जैसे अगर आप आर्थिक विषयों पर विशेषज्ञता हासिल करना चाहते हैं और आपके पास परिचित अर्थशास्त्रियों और बाज़ार विशेषज्ञों के नाम और फ़ोन नंबर हैं तो आप उनसे बातचीत करके किसी घटना, फ़ैसले या नीति के विभिन्न पहलुओं को समझ सकते हैं या उसका निहितार्थ जानने की कोशिश कर सकते हैं।

इस तरह आप अपनी रुचि के क्षेत्र या विषय में विशेषज्ञता विकसित कर सकते हैं। लेकिन एक बात अवश्य याद रखनी चाहिए कि विशेषज्ञता एक दिन में नहीं आती। विशेषज्ञता एक तरह से अनुभव का पर्याय है। उस विषय में निरंतर दिलचस्पी और सक्रियता ही आपको विशेषज्ञ बना सकती है।

जैसा कि हम पहले चर्चा कर चुके हैं, विशेष लेखन का दायरा बहुत बड़ा है और इसके कई पहलू हैं। हम यहाँ हरेक क्षेत्र के बारे में अलग–अलग चर्चा करने के बजाए कुछ चुनिंदा क्षेत्रों में विशेष लेखन की बारीकियों और उसकी शैली पर चर्चा करेंगे।

कारोबार और व्यापार

अगर आप रोज़ समाचारपत्र पढ़ते हों तो आपने ध्यान दिया होगा कि समाचारपत्र में कारोबार और अर्थ जगत से जुड़ी खबरों के लिए अलग से एक पृष्ठ होता है। कुछ अखबारों में आर्थिक खबरों के दो पृष्ठ प्रकाशित होते हैं। यह कहा जाए तो गलत नहीं होगा कि समाचारपत्र में अगर आर्थिक और खेल का पृष्ठ न हो तो वह संपूर्ण समाचारपत्र नहीं माना जाएगा।

इसकी वजह यह है कि अर्थ यानी धन हर आदमी के जीवन का मूल आधार है। हमारे रोज़मर्रा के जीवन में इसका खास महत्त्व है। हम बाज़ार से कुछ खरीदते हैं, बैंक में पैसे जमा करते हैं, बचत करते हैं, किसी कारोबार के बारे में योजना बनाते हैं या कुछ भी ऐसा सोचते या करते हैं जिसमें आर्थिक फ़ायदे, नफ़ा–नुकसान आदि की बात होती है तो इन सबका कारोबार और

गतिविधि

- *दो अखबारों में कारोबार और अर्थ जगत के पृष्ठ को ध्यान से पढ़िए। उनमें प्रकाशित खबरों की एक सूची बनाइए। उन खबरों की भाषा में इस्तेमाल शब्दों की भी एक सूची बनाइए। आर्थिक विषयों पर प्रकाशित टिप्पणियों और विश्लेषणों को ध्यान से पढ़िए। इन सबके आधार पर 200 शब्दों की एक रिपोर्ट तैयार कीजिए और बताइए कि आर्थिक विषयों पर लेखन अन्य प्रकार के पत्रकारीय लेखन से किस प्रकार अलग है?*
- *किसी एक समाचारपत्र में प्रकाशित होने वाली मंडी के भाव पर आधारित एक सप्ताह की खबरें और उनका विश्लेषण इकट्ठा कीजिए। उसे ध्यान से पढ़िए और बताइए कि क्या वह एक सामान्य पाठक की समझ में आ सकती है?*

© NCERT not to be republished

अर्थ जगत से संबंध जुड़ता है। यही कारण है कि कारोबार, व्यापार और अर्थ जगत से जुड़ी खबरों में काफ़ी पाठकों की रुचि होती है।

आप अकसर सुनते होंगे कि शेयर बाज़ार का सेंसेक्स इतना चढ़ा या नीचे गिर गया। इसी तरह सोने–चाँदी के भाव, विदेशी मुद्रा (जैसे–डॉलर, पौंड आदि) की कीमत, ज़रूरी उपभोक्ता चीज़ों की कीमत या खेती–बाड़ी से जुड़ी चीज़ों की कीमत घटती–बढ़ती रहती है। इसके पीछे कौन–कौन से कारण हैं। आम लोगों को इससे क्या फ़ायदा या नुकसान होगा या इसका उनके जीवन पर क्या असर पड़ेगा और उन्हें बचाव के लिए क्या करना चाहिए, आदि जानकारियों में आम पाठकों की भी दिलचस्पी होती है।

कारोबार, व्यापार और अर्थ जगत का क्षेत्र काफ़ी व्यापक है। इसमें कृषि से लेकर उद्योग तक और व्यापार से लेकर शेयर बाज़ार तक अर्थव्यवस्था से जुड़े सभी क्षेत्र शामिल हैं। इन सभी क्षेत्रों में एक साथ विशेषज्ञता हासिल करना कठिन है। यही कारण है कि कारोबार और अर्थजगत में भी आपको कोई खास क्षेत्र चुनना पड़ता है। जैसे कोई शेयर बाज़ार का विशेषज्ञ है तो कोई निवेश के मामलों का, कोई बैंकिंग का विशेषज्ञ है तो कोई प्रापर्टी के क्षेत्र में ज़्यादा जानता है, कोई बजट का जानकार है तो कोई मंडी का।

पिछले कुछ वर्षों में आर्थिक पत्रकारिता का महत्त्व काफ़ी बढ़ा है। ऐसा इसलिए क्योंकि देश की राजनीति और अर्थव्यवस्था के बीच रिश्ता गहरा हुआ है। खासकर आर्थिक उदारीकरण और देश में खुली अर्थव्यवस्था लागू होने के बाद से अर्थव्यवस्था में व्यापक बदलाव आया है। राजनीति भी इससे अछूती नहीं है। वैसे भी अर्थनीति और राजनीति के बीच गहरा रिश्ता होता है। इसलिए एक आर्थिक पत्रकार को देश की राजनीति और उसमें हो रहे बदलाव की भी जानकारी होनी चाहिए।

आर्थिक मामलों की पत्रकारिता सामान्य पत्रकारिता की तुलना में काफ़ी जटिल होती है। ऐसा इसलिए क्योंकि आम लोगों को इसकी शब्दावलियों के बारे में या उनके मतलब के बारे में ठीक से पता नहीं होता। उसे आम लोगों की समझ में आने लायक कैसे बनाया जाए, यह आर्थिक मामलों के पत्रकार के सामने सबसे बड़ी चुनौती होती है। लेकिन इसके साथ ही आर्थिक खबरों का एक ऐसा पाठकवर्ग भी है जो उस क्षेत्र से जुड़ा होने के कारण उसके बारे में काफ़ी जानता है। एक आर्थिक पत्रकार को इन दोनों तरह के पाठकों की ज़रूरत को पूरा करना पड़ता है। इसलिए आर्थिक मामलों पर विशेष लेखन करते हुए इस बात का हमेशा ध्यान रखा जाना चाहिए कि वह किस वर्ग के पाठक के लिए लिखा जा रहा है?

कारोबार और अर्थ जगत से जुड़ी रोज़मर्रा की खबरें उलटा पिरामिड–शैली में लिखी जाती हैं। शेयर बाज़ार के एक समाचार के उदाहरण पर गौर कीजिए–

स्टॉकिस्टों की चौतरफ़ा बिकवाली से उड़द टूटी

नयी दिल्ली–स्थानीय मंडी में स्टाकिस्टों की चौतरफ़ा बिकवाली से उड़द दो दिनों में 150 रुपये टूट जाने से गिरकर 3280/3290 रुपये रह गई। मुंबई में भी 100 रुपये लुढ़ककर 3100 रुपये बोली गई। मोठ भी 100 रुपये गिरकर 2650/2700 रुपये के निम्न स्तर पर आ गई। मसूर भी ललितपुर एवं सिहोरा लाइन से प्रचुर मात्रा में आने एवं ग्राहक के कमज़ोर होने से 25/50 रुपये टूटकर मोटी 1900 रुपये एवं टोटी 2450

रुपये रह गई। अरहर में भी 25 रुपये की मंदी आ गई, जिससे यहाँ भी मिलों की माँग ठंडी पड़ने एवं स्टॉकिस्टों की बिकवाली से 45/50 रुपये गिरकर 2325/2375 रुपये भाव रह गए। इसकी दाल में भी 50 रुपये की मंदी आ गई।

इन रोज़मर्रा की खबरों के अलावा सोने की बढ़ती कीमतों का विश्लेषण करता एक फ़ीचर प्रस्तुत है। जो विशेष लेखन का अच्छा उदाहरण है।

नित नया शिखर, नया निखार

सन् 2005 और 2006 में शेयर बाज़ार की स्थिर गति से मझोले निवेशक भले ही इस दुविधा में रहे हों कि कौन-सा शेयर या म्युचुअल फ़ंड खरीदें लेकिन अब उन्हें ज़्यादा चिंता करने की ज़रूरत नहीं है क्योंकि सबसे ज़्यादा मुनाफ़ा तो उनके बैंक लॉकरों या बेडरूम की अलमारियों में बंद चमकदार पीली धातु ही दे रही है, आखिर, सोने की कीमत 2005 में 18 फ़ीसदी बढ़ी, तो इस साल जनवरी से मई तक में ही उसमें 31 फ़ीसदी का और इज़ाफ़ा हो गया, कुल मिलाकर पिछले साढ़े पाँच साल में इसकी कीमत में 150 फ़ीसदी इज़ाफ़ा हुआ है खास बात यह है कि इस धातु की चमक फीकी पड़ती ही नज़र नहीं आ रही।

आभूषणों के मालिकों को यह एहसास हो या न हो, आभूषण खरीददारों को यह इल्म निश्चित रूप से है। पिछले दिनों शादियों का सीज़न जब ज़ोरों पर था तो देश भर के आभूषण निर्माता अपने कलेक्शन को नए सिरे से डिज़ाइन करने में लगे थे। वे हलके वज़न के गहने बना रहे थे ताकि खरीदार की जेब पर अधिक भार न पड़े। इससे इस नतीजे पर न पहुँच जाइए कि बढ़ती कीमतों से खरीदारों की कतारें छोटी हो गईं। पिछले साल भारत को सोने की बढ़ती माँग पूरी करने के लिए 750 टन सोना आयात करना पड़ा, यह माँग 2004 के मुकाबले 100 टन अधिक बढ़ गई थी, विश्व स्वर्ण परिषद् को इसमें इस साल कोई नाटकीय बदलाव आने की उम्मीद नहीं है।

इसकी वजह भी है, शुरू से ही सोने में निवेश करते आए भारतीयों की इसके महत्त्व में पूरी आस्था है, लिहाज़ा वे इसमें निवेश करते रहेंगे। उन्हें पूरी उम्मीद है कि साल के अंत तक सोने की कीमतें 12,000 प्रति 10 ग्राम को छूने लगेंगी अन्य संपत्तियों के विपरीत सोने को निवेशक और उपभोक्ता दोनों ही खरीदते हैं। पहली श्रेणी के लोग इसे मुनाफ़ा कमाने के लिए खरीदते हैं तो दूसरे अपने शौक पूरे करने के लिए, आज भारत और विदेश में दोनों ही तरह के खरीदार सक्रिय हैं। हालाँकि सोने की कीमतें शेयर बाज़ार, सरकारी बांड या अचल संपत्ति की कीमतों से अधिक प्रभावित नहीं होती, इस बार इस कीमती धातु की कीमत इनसे टक्कर ले रही है। भारत और चीन में औद्योगिक माँग बढ़ने से ताँबा, जिंक और इस्पात की कीमतें भी पिछले दो साल से बढ़ती जा रही हैं। इस तरह पिछले 12 महीनों में सोने की कीमतों में 45 फीसदी उछाल आया है इसके बावजूद यह वृद्धि तीसरे नंबर पर है, क्योंकि ताँबे ने 116 फ़ीसदी और चाँदी ने 78 फ़ीसदी बढ़ोतरी दर्ज की है।

ईंधन की कीमतें भी मानो आग में घी का काम कर रही हैं। पिछले हफ़्ते तेल की कीमत 75 डॉलर प्रति बैरल हो गई और यह 100 डॉलर प्रति बैरल का भयावह आँकड़ा भी छू सकती है। खासकर भारत और चीन

© NCERT not to be republished

में तेल की कीमतों में गिरावट नहीं आई जैसा कि आनंद राठी सिक्युरिटीज़ के सह उपाध्यक्ष किशोर नारने कहते हैं, "तेल की ऊँची कीमतों से आमतौर पर अर्थव्यवस्था में मुद्रास्फीति आती है। इससे मुद्राओं की कीमत घटने लगती है।"

बेशक ऐसा होता है, पिछले साल डॉलर की कीमत में 3 फ़ीसदी अवमूल्यन हुआ है, हालाँकि अमेरिका के फेडरल रिज़र्व ने ब्याज दर बढ़ाकर मुद्रास्फीति के प्रभाव पर नियंत्रण कर लिया है लेकिन चूँकि पिछले कई दशकों से तेल के नए स्रोत की खोज नहीं हो पाई है और तेल की मात्रा बढ़ाना लंबी और व्ययसाध्य प्रक्रिया है, तेल की कीमतों में जल्दी गिरावट के आसार नहीं है और केंद्रीय बैंक मुद्रा की आपूर्ति से छेड़छाड़ करके इससे होने वाली मुद्रास्फीति का मुकाबला नहीं कर सकते, यानी डॉलर और यूरो जैसी मुद्रा के मूल्य में अभी और गिरावट अवश्यंभावी है इससे दुनियाभर के समझदार निवेशक डॉलर प्रभावित निवेश मसलन–सरकारी बॉण्ड और प्रतिभूति–से पैसा निकालकर कहीं और (जी हाँ, आपका अनुमान सही है) सोने में निवेश करेंगे। उनका तर्क है कि मुद्रास्फीति से बचने के लिए इससे बढ़िया ढाल और क्या होगी।

जब सोने की कीमतें कुलाँचे भर रही हैं तो नए निवेशक भी इस ओर मुड़ रहे हैं, पिछले साल विश्व स्वर्ण परिषद् ने एक निवेश योजना शुरू की थी, जिसे गोल्ड एक्सचेंज ट्रेडेड फ़ंड नाम दिया गया। यह एक तरह का म्युचुअल फ़ंड है जहाँ प्रत्येक इकाई का मूल्य एक आउंस सोने का दसवाँ हिस्सा है। विश्व स्वर्ण परिषद् की भारत शाखा के प्रबंध निदेशक संजीव अग्रवाल कहते हैं, "जब से यह फ़ंड लंदन और न्यूयॉर्क में उतारा गया है, गोल्ड म्युचुअल फ़ंड्स ने 500 टन सोना उगाह लिया है," इसके अलावा सोने में निवेश करने वाले निवेशक गहनों, सोने की छड़ों और गिन्नियों में ही निवेश नहीं कर रहे, वे एमसीएक्स और एनसीडीएक्स जैसे कमोडिटी एक्सचेंज के ज़रिये सोने के डीमैट स्वरूप में भी निवेश कर रहे हैं। निवेशक गोल्ड फ़्यूचर्स (भविष्य में सोने की कीमत बढ़ने की शर्त) में भी निवेश कर सकते हैं। इसके लिए उन्हें सिर्फ़ 4 फीसदी मार्जिन का ही भुगतान करना होता है इससे न सिर्फ़ भारी मात्रा में खरीद हो रही है–इसी वजह से कीमतें भी बढ़ रही हैं–बल्कि यह सुरक्षित भी है। इससे लूटपाट और बैंक डकैती में सोना गँवाने से भी बचा जा सकता है। एक तरह से यह कर की दृष्टि से भी एक बेहतर विकल्प है, जैसा कि बताते हैं। इस पर अल्प अवधि पूँजी लाभ कर ही लगता है, जबकि आभूषण या डीमैट गोल्ड पर अतिरिक्त संपत्ति कर लगता है।

ज़ाहिर है, माँग कम ही नहीं हो पा रही है। बाज़ार का नियम है कि माँग की तुलना में आपूर्ति कम हो तो निष्कर्ष की सहज ही कल्पना की जा सकती है–यानी भारी मूल्य वृद्धि। विश्व में सर्वाधिक सोना उत्पादन करने वाला देश दक्षिण अफ्रीका भी अब कम उत्पादन कर रहा है। सन् 2005 में इसका सोना उत्पादन गिरकर 300 टन हो गया, जबकि उससे पिछले साल यह आँकड़ा 346 टन था। कोटक कमोडिटी सर्विसेस में कमोडिटी विश्लेषक राघवन सुंदरराजन इसकी व्याख्या करते हैं, "इस साल कीमतें बढ़ने की वजह एंग्लोगोल्ड असांति की 2006 की यह घोषणा थी कि सन् 2006 में सोने का उत्पादन घट जाएगा और 2007 में ही स्थिर हो पाएगा।" इसलिए थोड़े-बहुत उतार-चढ़ाव के अलावा सोने की कीमतों में जल्द ही गिरावट आने वाली नहीं है। गीतांजलि ग्रुप के प्रबंध निदेशक मेहुल चोकसी भी मानते हैं, "अर्थशास्त्री अब यह तथ्य मानने को बाध्य होने लगे हैं कि हर तरह की संपत्ति की कीमत साथ-साथ बढ़ने लगी है।"

अगर सीधे शब्दों में कहें तो वैसे तो शेयर बाज़ार और सोने की कीमतों में कोई सीधा संबंध नहीं माना जाता है, लेकिन आज यह एक सचाई है कि दोनों साथ-साथ नयी ऊँचाइयाँ छू रहे हैं। यह सोने के निवेशकों के लिए चिंता का विषय कतई नहीं होना चाहिए। कई खरीदार तो शर्त लगा रहे हैं कि दोनों का बढ़ना जारी रहेगा। यानी सोना चमक के साथ मुनाफ़े की सुगंध भी बिखेरता रहेगा।

खेल

खेल का क्षेत्र ऐसा है जिसमें अधिकांश लोगों की रुचि होती है। खेल हर आदमी के जीवन में नयी ऊर्जा का संचार करता है। बचपन से ही हमारी विभिन्न खेलों में रुचि होती है और हममें से अधिकांश के भीतर एक खिलाड़ी ज़रूर होता है। जीवन की भागदौड़ और दूसरी ज़िम्मेदारियों की वजह से ये खिलाड़ी बेशक कहीं दब जाता हो। लेकिन खेलों में दिलचस्पी बनी रहती है। इसलिए आप देखेंगे कि क्रिकेट हो या हॉकी, टेनिस हो या फ़ुटबॉल, ओलंपिक हो या एशियाई खेल–ये सब एक उत्सव बन जाते हैं। कई खेल तो देश की संस्कृति में रच-बस जाते हैं और इसलिए उन खेलों के बारे में पढ़ने वालों और उसे देखने वालों की संख्या काफ़ी ज़्यादा होती है।

इसलिए हैरत की बात नहीं है कि अखबारों और दूसरे माध्यमों में खेलों को बहुत अधिक महत्त्व मिलता है। सभी समाचारपत्रों में खेल के एक या दो पृष्ठ होते हैं और कोई भी टी.वी. और रेडियो बुलेटिन खेलों की खबर के बिना पूरा नहीं होता है। यही नहीं, समाचार माध्यमों में खेलों का महत्त्व लगातार बढ़ता जा रहा है। समाचारपत्र और पत्रिकाओं में खेलों पर विशेष लेखन, खेल विशेषांक और खेल परिशिष्ट प्रकाशित हो रहे हैं। इसी तरह टी.वी. और रेडियो पर खेलों के विशेष कार्यक्रम प्रसारित किए जा रहे हैं।

पत्र-पत्रिकाओं में खेलों के बारे में लिखने वालों के लिए ज़रूरी है कि वे खेल की तकनीक, उसके नियमों, उसकी बारीकियों और उससे जुड़ी तमाम बातों से भलीभाँति परिचित हों। लेकिन आर्थिक मामलों की तरह ही किसी एक खेल लेखक के लिए हर खेल के बारे में उतने ही अधिकार के साथ लिखना या जानना मुश्किल होता है। इसलिए कोई क्रिकेट का जानकार होता है तो कोई हॉकी की बारीकियाँ बेहतर समझता है। किसी का एथलेटिक्स पर अधिकार होता है तो कोई फ़ुटबॉल का जानकार होता है।

गतिविधि

- *क्रिकेट में स्पिन, एलबीडब्ल्यू और गुगली के बारे में 100 शब्दों में एक आलेख लिखें।*
- *आपको किस समाचारपत्र या पत्रिका में खेलों पर प्रकाशित होनेवाली खबरें, रिपोर्ट और विश्लेषण सबसे अधिक रुचिकर और आकर्षक लगते हैं। उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।*

लेकिन आप जिस भी खेल में विशेषज्ञता हासिल करें, उसके बारे में आपकी जानकारी और समझदारी का स्तर ऊँचा होना चाहिए। आपको उस खेल में बनने वाले रिकॉर्ड्स या कीर्तिमानों के बारे में पता होना चाहिए। तथ्यों और पुराने रिकॉर्ड्स को तो अब इंटरनेट पर भी ढूँढ़ा जा सकता है, लेकिन खेल के नियम या उसकी बारीकियाँ या किसी खिलाड़ी की तकनीक के बारे में जानने-समझने वाले ही इस बारे में अच्छा लिख या बोल सकते हैं।

लेकिन एक खेल पत्रकार को अपनी इन जानकारियों को दिलचस्प तरीके से पेश करना चाहिए। वह जब किसी मैच का, किसी खिलाड़ी विशेष के प्रदर्शन का, खेल की तकनीक का और इससे जुड़े तमाम पहलुओं का विश्लेषण करता है तो यह विश्लेषण खेल की तरह ही रोमांचक होना चाहिए। खेलों की रिपोर्टिंग और विशेष लेखन की भाषा और शैली में एक ऊर्जा, जोश, रोमांच और उत्साह दिखना चाहिए। इसके अलावा एक और बात ध्यान में रखनेवाली है कि खेल की खबर या रिपोर्ट उलटा पिरामिड शैली में शुरू होती है लेकिन दूसरे पैराग्राफ़ से वह कथात्मक यानी घटनानुक्रम शैली में चली जाती है। क्रिकेट की एक सामान्य खबर का उदाहरण देखिए–

"कोलंबो, 15 अगस्त (एपी)। बाएँ हाथ के सीमर चामिंडा वास ने आज घातक गेंदबाजी करते हुए छह विकेट लिए और श्रीलंका ने उनके इस प्रदर्शन की बदौलत दक्षिण अफ्रीका को दूसरे टेस्ट में 313 रनों से रौंद डाला। इस जीत के साथ ही श्रीलंका ने दक्षिण अफ्रीका के खिलाफ़ सीरीज़ 1-0 से जीत ली। दक्षिण अफ्रीका के खिलाफ़ श्रीलंका की यह पहली सीरीज़ जीत है।

जीत के लिए 493 रनों का विशाल लक्ष्य लेकर खेल रही दक्षिण अफ्रीकी टीम मैच के अंतिम दिन दूसरी पारी में सिर्फ़ 179 रनों पर ढेर हो गई।"

इस मुखड़े के बाद खबर का विस्तार एक कथात्मक रूप ले लेता है, जिसमें उलटा पिरामिड शैली के बजाए कथात्मक शैली का उपयोग किया गया है–

"एसएससी ग्राउंड पर दक्षिण अफ्रीका ने आज दो विकेट पर 21 रनों से आगे खेलना शुरू किया लेकिन श्रीलंका के तेज़ गेंदबाजों ने उसके शीर्ष क्रम के बल्लेबाजों को ध्वस्त कर दिया। लंच के समय तक दक्षिण अफ्रीका 5 विकेट पर 125 रन ही बना पाया था। वास ने पहले कल नॉट आउट रहे जैक्स केलिस को आउट कर मेहमान टीम को करारा झटका दिया। केलिस ने तेज़ी से उठती हुई गेंद पर दूसरी स्लिप में खड़े तिलकरत्ने दिलशान को कैच दे दिया। कप्तान ग्रीन स्मिथ (17) भी दो ओवर बाद तेज़ गेंदबाज ललित मलिंगा का शिकार बने। उन्होंने तिलान समरवीरा को शार्ट स्क्वेयर लेग पर कैच दे दिया और श्रीलंका का स्कोर चार विकेट पर 26 रन हो गया। दक्षिण अफ्रीका का पाँचवाँ विकेट भी इस स्कोर पर गिर गया जब जैक्स रुडोल्फ़, वास की गेंद को पुल करने की कोशिश में गेंद को ठीक से टाइम नहीं कर पाए और डीप में खड़े मलिंगा को कैच दे बैठे। उन्होंने एक रन बनाया।

बोएटा डिपनार और मार्क बाउचर ने छठे विकेट के लिए 252 गेंदों में 101 रनों की साझेदारी कर पारी को कुछ हद तक संभाला लेकिन वास ने लंच के बाद सातवें ओवर में इस साझेदारी को भी तोड़ दिया। उन्होंने बाउचर को बल्ले का किनारा देने के लिए विवश किया और विकेटकीपर रोमेश कालुवितर्ना ने कैच पकड़ने में कोई गलती नहीं की। बाउचर

ने 51 रन बनाए। बाउचर 135 मिनट क्रीज़ पर रहे जिसमें उन्होंने 132 गेंदें खेलीं और आठ चौके जमाए। शाउन पोलक सस्ते में आउट हुए। उन्होंने ऑफ़ स्पिनर दिलशान की गेंद पर मरवन अटापट्टू को शार्ट मिड विकेट पर कैच दे दिया। डिपनार आठ चौकों की मदद से 59 रन बनाकर नॉट आउट रहे। दक्षिण अफ्रीकी टीम श्रीलंका के खिलाफ़ इससे पहले खेली गई पाँच टेस्ट सीरीज़ों में चार में जीती थी जबकि एक ड्रा रही थी। गाले में दोनों के बीच मौजूदा सीरीज़ का पहला टैस्ट ड्रा रहा था।"

क्रिकेट के इस सामान्य समाचार के बाद क्रिकेट पर ही एक विशेष रिपोर्ट प्रस्तुत है—

घर में प्रयोग भारी पड़ा

पुरानी कहावत है, लोग जल्दी बूढ़े क्यों होते हैं? क्योंकि वे काम करते हैं, लेकिन मुंबई में भारत के साथ जो कुछ हुआ उसके पीछे कुछ दूसरी वजहें रहीं, नए प्रयोग और सितारों से लकदक टीम अपने ही मैदान में ढेर हो गई, पाँच बल्लेबाजों के साथ खेलने का फ़ैसला कुछ तो दबाव में और कुछ यह सोच कर किया गया था कि इस अनुभव का फ़ायदा विदेशी दौरों के समय काम आ सकता है, तो पाँच गेंदबाजों के साथ मैदान में उतरने के फ़ैसले के पीछे कहीं-न-कहीं यह बात थी कि घरेलू धीमी पिचों पर 20 विकेट लेना हमेशा मुश्किल रहा है, यह फ़ैसला यह सोच कर लिया गया था कि वानखेड़े की नम पिच का शुरुआती फ़ायदा उठाया जाए, लेकिन किसे पता था कि यह फ़ैसला गलत साबित होगा और इंग्लैंड के खिलाफ़ इसी विकेट पर उतरे ये पाँच बल्लेबाज सस्ते में लौट आएँगे, वास्तव में हमें टेस्ट सीरीज़ जीतने की कोशिश करनी चाहिए थी, इसका मतलब है किसी एक गेंदबाज को बाहर कर वीवीएस लक्ष्मण को टीम में जगह दी जाती और टॉस जीतने पर पहले बल्लेबाजी की जाती।

लेकिन, भारतीय टीम ने एक के बाद एक कई गलतियाँ कर डालीं, यह सब इंग्लैंड की उस टीम के खिलाफ़ हुआ जिसमें न तो माइकल वॉन और ट्रेस्कोथिक जैसे बल्लेबाज थे और न साइमन जोंस, स्टीव हरमिशन और नंबर वन स्पिनर गाइल्स जैसे गेंदबाज। हैरत नहीं इंग्लैंड की स्थिति वैसी ही थी जैसे राहुल द्रविड़, सचिन तेंदुलकर, वीरेंद्र सहवाग, अनिल कुंबले, इरफ़ान पठान और मौजूदा फ़ॉर्म में चल रहे मुनाफ़ पटेल या हरभजन सिंह के बगैर भारतीय टीम विदेश में कोई टेस्ट जीत ले।

भारतीयों को भविष्य की रणनीति पर काम करने के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता, लेकिन घरेलू टेस्ट सीरीज़ का इस्तेमाल विदेश में किस्मत आज़माने के लिए करना न तो अच्छी रणनीति है और न ही क्षम्य। भारतीय उपमहाद्वीप में दौरे से पहले जहाँ विदेशी टीमें बहुत सावधानी बरतती हैं और खासी योजना बनाती हैं, वहीं घर में भारत के टेस्ट रिकॉर्ड का बचाव करना मुश्किल होता जा रहा है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि टीम बचाव करने लायक है ही नहीं।

घरेलू मैदानों पर भारत अपनी बल्लेबाजी और स्पिन गेंदबाजी की वजह से टेस्ट जीतता रहा है, जबकि विदेश में मिले सबक से उसने महसूस किया कि उसे तेज़ गेंदबाजी की ओर ध्यान देना चाहिए, आप चाहे जितने गेंदबाज रख लें, आपको पाँच बल्लेबाज और कुछ प्रार्थना की ज़रूरत होगी, अब तो चेपक या

इडेन गार्डेन या फ़िरोज़शाह में हमें वह करना चाहिए जो हम कर सकते हैं, किसी भी देश की क्रिकेट टीम की ताकत इस बात से आँकी जाती है कि उसकी टेस्ट टीम कितनी मज़बूत है, इंग्लैंड के साथ होने वाले सात एकदिवसीय मैचों के नतीजे चाहे जो हों लेकिन यह दिख रहा है कि भारत की टेस्ट टीम बिखर चुकी है। फ़ील्डिंग के मामले में टीमों का प्रदर्शन अलग-अलग सत्रों में खराब रहा है लेकिन भारतीय टेस्ट टीम फ़ील्डिंग के मामले में पूरी तरह बेदम दिख रही है, जब स्लिप पर फ़ील्डिंग करने वाले दुनिया के चुनिंदा क्रिकेटरों में शुमार राहुल द्रविड़ सीरीज़ के हर मैच में कैच छोड़ रहे हों तो आप समझ सकते हैं कि कहीं कुछ चुक गया है, आप उस स्थिति का अंदाज़ा लगा सकते हैं जब युवराज सिंह मैदान में पस्त दिख रहे हों, विशेषज्ञ खिलाड़ी ड्रेसिंग रूम में बैठे हों और गलत आदमी को गलत जगह पर खड़ा किया जाए, यानी सब कुछ ठीक नहीं है।

यह जगज़ाहिर है कि चैपल गैरपारंपरिक और नए तरीके से ट्रेनिंग दे रहे हैं, वे बल्लेबाजी में पैनापन लाने के लिए उत्तेजना जगाने जैसी ड्रिल करवाते हैं, तो फ़ील्डिंग में चुस्ती लाने के लिए मानसिक एकाग्रता पर ध्यान देते हैं, वे नए प्रयोग कर रहे हैं और उनका ज़ोर मानसिक प्रशिक्षण पर भी है। उनका यह तरीका अनूठा है, ड्रिल में भी उत्साह नज़र आ रहा है। दरअसल, चैपल सिंपसन के तरीके से आगे का प्रयोग कर रहे हैं, आस्ट्रेलिया के पूर्व कोच बॉब सिंपसन आस्ट्रेलिया की 'स्लिप ब्रिगेड' को घंटों बैट के किनारे से निकली गेंद को लपकने की प्रैक्टिस करवाते थे। भारत में अज़हरूद्दीन ने हैदराबाद में पिच रोलर से निकली गेंदों के सैंकड़ों कैच लपके तब जाकर उनकी हथेलियाँ किसी भी कोण से आने वाली गेंद को लपकने की अभ्यस्त हो पाई थीं। विविधता भरी ट्रेनिंग के उलट उसकी पुनरावृत्ति–जो चैपल का तरीका है–इस नज़रिये के दो छोरों को दिखाती है, पसंद-नापसंद और विश्वास के मामले में चैपल बहुत दृढ़ हैं और जैसा कि सौरव गांगुली प्रकरण ने साबित कर दिया कि वे हमलावर होने से भी नहीं चूकते। अब यदि खासतौर से टेस्ट टीम की फ़ील्डिंग का स्तर सुधारने की बात है तो इस बारे में चैपल को नहीं, द्रविड़ को सोचना होगा। आखिर यह उनकी टीम है और खराब फ़ील्डिंग का असर उनके गेंदबाजों के प्रदर्शन पर पड़ता है।

मुंबई में मिली हार भारत के लिए यह पिछले चार टेस्ट मैचों में दूसरी है, जिसमें सात बल्लेबाजों ने कुल 25 रन बनाए–साबित करती है कि जो मिथक फैलाया जा रहा था वह गलत था। कराची में मिली हार के बाद भारतीय खेमे में फुसफुसाहट हो रही थी कि कैसे एक पूर्व कप्तान के लिए कमरा बदलना खेल से ज़्यादा अहम हो गया था। हर बात के लिए गांगुली को दोष नहीं दिया जा सकता। इस हार के लिए तो कतई नहीं।

विशेष लेखन के इस अध्याय में हमने कुछ प्रचलित क्षेत्रों की बात की। हालाँकि विषय बहुत से हैं, उनके आयाम कई हैं और विशेषज्ञता हासिल करने के उनके पैमाने अलग-अलग हैं। मूल बात यह है कि जब भी हम किसी खास विषय को उठाते हैं, उसके बारे में लिखते या बात करते हैं तो इस बात का ध्यान रखना सबसे ज़्यादा ज़रूरी है कि हमारा पाठक, दर्शक या श्रोता कौन है, हमारी बात उसे समझ में आ रही है या नहीं, हम अपनी बातों की अभिव्यक्ति ठीक से कर पा रहे हैं या नहीं, हमारे तथ्य और तर्क में तालमेल है या नहीं। ये तमाम बातें ऐसी हैं जो किसी भी लेखन को विशिष्टता प्रदान करती हैं।

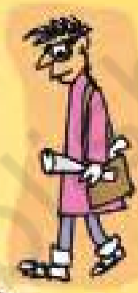

सूचनाओं के स्रोत

- मंत्रालय के सूत्र
- प्रेस कांफ्रेंस और विज्ञप्तियाँ
- साक्षात्कार
- सर्वे और जाँच समितियों की रिपोर्ट्स
- उस क्षेत्र में सक्रिय संस्थाएँ और व्यक्ति
- संबंधित विभागों और संगठनों से जुड़े व्यक्ति
- इंटरनेट और दूसरे संचार माध्यम
- स्थायी अध्ययन प्रक्रिया

© NCERT not to be republished

पाठ से संवाद

1. विज्ञान के क्षेत्र में काम कर रही भारत की पाँच संस्थाओं के नाम लिखें।

2. पर्यावरण पर छपने वाली किन्हीं तीन पत्रिकाओं के नाम लिखें।

3. व्यावसायिक शिक्षा के दस विभिन्न पाठ्यक्रमों के नाम लिखें और इनका ब्योरा एकत्र करें।

4. निम्न में से किसी एक विषय पर अपने शब्दों में आलेख लिखें–

(क) सानिया मिर्ज़ा के खेल के तकनीकी पहलू
(ख) शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाए जाने के परिणाम
(ग) सर्राफ़े में आई तेज़ी
(घ) फ़िल्मों में हिंसा
(ङ) पल्स पोलियो अभियान–सफलता या असफलता
(च) कटते जंगल
(छ) ग्रहों पर जीवन की खोज

© NCERT not to be republished

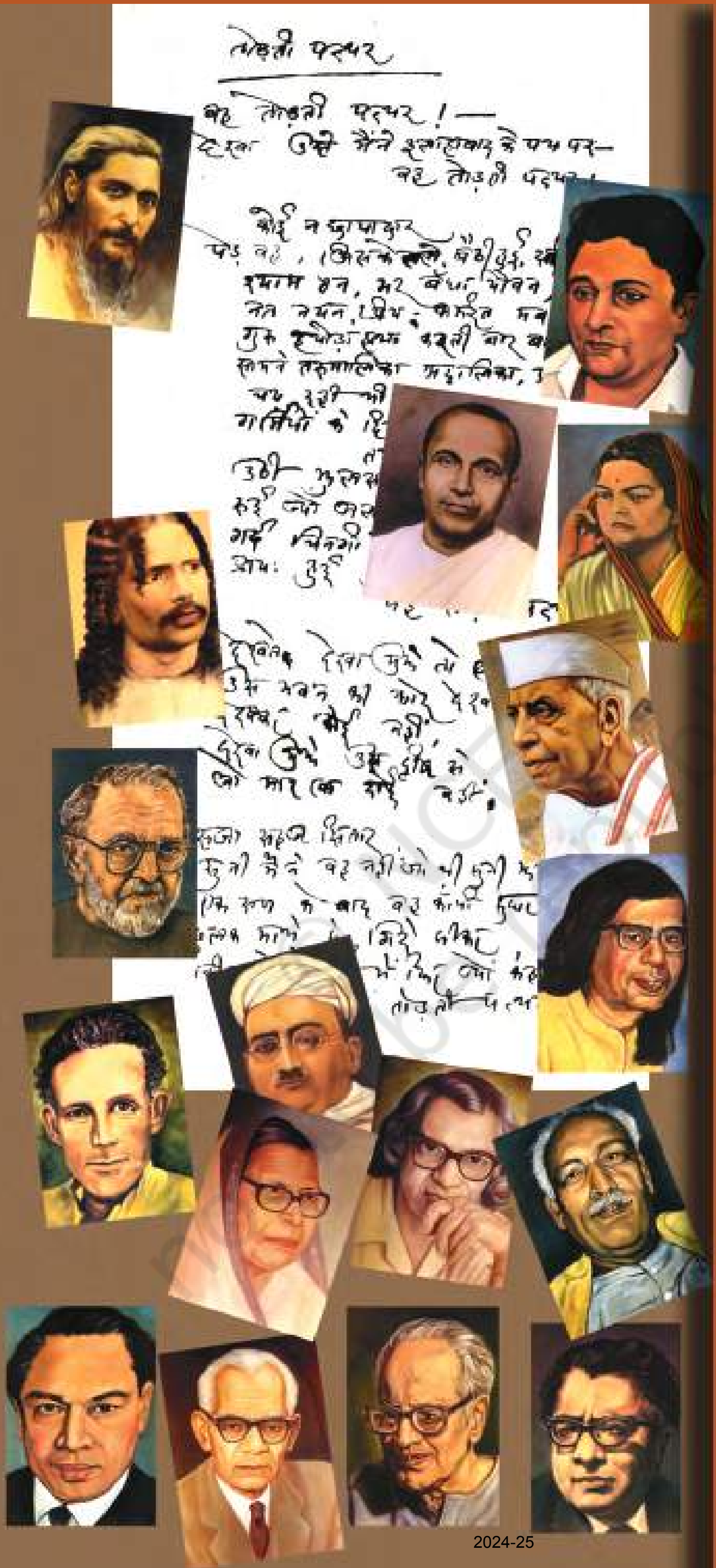

सृजनात्मक लेखन

इकाई दो

सृजनात्मक लेखन

इकाई दो

© NCERT not to be republished

6
कैसे बनती है कविता

इस पाठ में...

- कविता क्या है?
- कविता कैसे बनती है?
- कविता में शब्दों का चयन
- कविता में बिंब और छंद
- कविता की संरचना
- कविता के घटक

कविता कोने में घात लगाए बैठी है, यह हमारे जीवन में किसी भी क्षण बसंत की तरह आ सकती है।

–जॉर्ज लुइस बोर्खेस

अर्जेन्टीना के स्पेनिश लेखक

कविता के बनने की कहानी। माँ, दादी और नानी की ज़बानी। लोरी के बोल। खेतों के ढोल। बच्चों के खेलगीत। स्कूल में उनका पहला कदम। तोतली ज़बान से गीत दोहराता बच्चा। उनमें कुछ नए शब्द जोड़ता बच्चा–कविता की यह जानी-पहचानी दुनिया है जिसे हम सब जानते हैं। आप जैसे ही इन स्मृतियों से जुड़ेंगे कुछ बुनियादी सवालों पर सोचने को विवश होंगे। क्या कारण है कि दुनिया के हर बच्चे की पढ़ाई नर्सरी गानों से शुरू होती है? वह कौन-सी चीज़ है कविता के बोल में, जो दुनिया के बोल से ताल मिलाने के लिए ज़रूरी है? जैसे ही इन सवालों की ओर मुखातिब होते हैं, कविता की जानी-पहचानी दुनिया अनजानी लगने लगती है। कविता के खेत, खलिहान, बाग, बगीचे, चिड़िया, शेर, मोची, पानी-सूखा, गाँव, नगर सब अपरिचित-से लगने लगते हैं। इस अपरिचित दुनिया में गोते लगाने वाले आलोचक और कवियों को कविता कभी जादू लगती है तो कभी पहेली।

© NCERT not to be republished

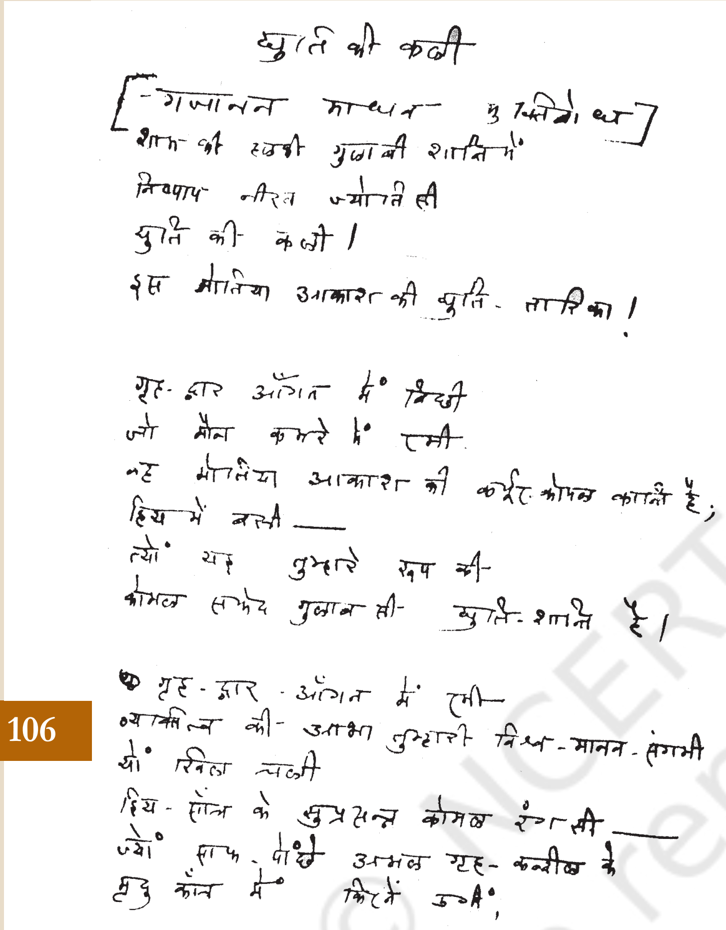
द्युति की कली
[– गजानन माधव मुक्तिबोध]
शाम की स्वच्छ गुलाबी शान्ति में
निष्पाप नीरव ज्योति सी
द्युति की कली!
इस मोतिया आकाश की द्युति-तारिका!

गृह-द्वार आँगन में खिली
जो मौन कमरे में रमी
वह मोतिया आकाश की कर्पूर-कोमल कान्ति है;
हिय में बसी —
त्यों यह तुम्हारे रूप की
कोमल सफेद गुलाब सी द्युति-शान्ति है।

गृह-द्वार-आँगन में रमी
व्यक्तित्व की आभा तुम्हारी विश्व-मानव-संगमी
यों खिल चली
हिय-सौध के सुप्रसन्न कोमल रंग सी —
ज्यों साफ-धोये अमल गृह-कन्दील के
मृदु कांच में किरनें उगें;

मुक्तिबोध की हस्तलिपि में एक कविता

वाचिक परंपरा के रूप में जन्मी कविता आज लिखित रूप में मौजूद है। उसके साथ ही मौजूद है यह सवाल कि कविता क्या है? यद्यपि कविता की इस पहेली को बूझना जटिल प्रक्रिया है। सारी जटिलता के बावजूद कविता हमारी संवेदना के निकट होती है। वह हमारे मन को छू लेती है। कभी-कभी झकझोर देती है। कविता के मूल में संवेदना है, राग तत्त्व है। यह संवेदना, संपूर्ण सृष्टि से जुड़ने और उसे अपना बना लेने का बोध है। यह वही संवेदना है जिसने रत्नाकर डाकू को वाल्मीकि बना दिया और वे कह उठे–

मा निषाद! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वती समाः।
यत्क्रौञ्च मिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।

इसी को सुमित्रानंदन पंत ने कहा है–

वियोगी होगा पहला कवि
आह से उपजा होगा गान।
उमड़ कर आँखों से चुपचाप
बही होगी कविता अनजान।।

सवाल यह उठता है कि जो वस्तु हमारे इतने निकट है उसे हम उसी तरह क्यों नहीं कह पाते, जैसे कवि कहता है। जहाँ तक **कविता लेखन** का सवाल है इस संबंध में दो मत मिलते हैं। एक तो यह कि कविता रचने की कोई प्रणाली सिखाई या बताई नहीं जा सकती है। लेकिन यह भी सचाई है कि पश्चिम के कुछ विश्वविद्यालयों में और अब अपने यहाँ भी कहीं-कहीं काव्य लेखन के बारे में विद्यार्थियों को बाकायदा प्रशिक्षण दिया जाता है। सवाल यह भी है कि चित्रकला, संगीतकला, नृत्यकला आदि सिखाई जा सकती है तो कविता क्यों नहीं? जैसे ही आप इन सवालों का सामना करेंगे, कविता का जादू खुलने लगेगा। यह वह संसार है जो आपको संभवतः एक कवि न बना पाए लेकिन अच्छा भावुक या सहृदय पाठक ज़रूर बना देगा। कविता की बारीकियों से गुज़रना उसे दोबारा रचे जाने के सुख से कम नहीं होगा। दरअसल एक अच्छी कविता आमंत्रित करती है बार-बार पढ़े जाने के लिए, कुछ-कुछ शास्त्रीय संगीत की तरह। जब तक आप उससे दूर हैं, रहस्यमयी लगेगी,

© NCERT not to be republished

करीब जाते ही उसे बार-बार और देर तक सुनने को जी चाहेगा। अच्छी कविता आप से सवाल करती है। सुने और पढ़े जाने के बाद भी वह बची रह जाती है आपकी स्मृति में, बार-बार सोचने के लिए।

वापस चलते हैं पहले सवाल पर कि कविता अन्य कलाओं की तरह सिखाई क्यों नहीं जा सकती। आप जानते हैं कि चित्रकला में रंग, कूची, कैनवास तो संगीत में स्वर, ताल, वाद्य आदि की ज़रूरत पड़ती है लेकिन कविता ऐसी कला है जिसमें किसी बाह्य उपकरण की मदद नहीं ली जा सकती। कवि की एक कठिनाई यह भी होती है कि उसे भाषा के उन्हीं उपकरणों से काम लेकर कुछ विशेष रचना होता है जो विभिन्न विषयों (भूगोल, अर्थशास्त्र आदि) एवं हमारे दैनिक जीवन का माध्यम है। वह अपनी इच्छानुसार शब्दों को जुटाता है और उसे लय से गठित करता है।

कविता की अनजानी दुनिया का सबसे पहला उपकरण है—**शब्द**। शब्दों से मेलजोल कविता की पहली शर्त है। इस सबंध में अंग्रेज़ी कवि *डब्ल्यू. एच. ऑर्डेन* ने भी कहीं कहा है कि *प्ले विद द वर्ड्स।* यानी आरंभ में शब्दों से खेलना सीखें। इसी को एक उदाहरण से स्पष्ट किया गया है—कल्पना करें कि आप स्कूल के विद्यार्थी हैं। कक्षा में बैठे सभी सहपाठी आपसे अपरिचित हैं, अनजान हैं। जैसे ही आप खेल के मैदान में पहुँचते हैं तो वे सारे अपरिचित विद्यार्थी आपके मित्र बन जाते हैं। शब्दों के साथ भी ऐसा ही होता है। शब्दों से खेलना, उनसे मेल-जोल बढ़ाना शब्दों के भीतर सदियों से छिपे अर्थ की परतों को खोलना है। एक शब्द अपने भीतर कई अर्थ छिपाए रहता है। कुछ-कुछ इंटरनेट की तरह। इंटरनेट से जुड़ना ज्ञान-विज्ञान की नयी दुनिया से जुड़ना है। शब्दों से जुड़ना कविता की दुनिया में प्रवेश करना है। आपने देखा होगा कि बच्चे खेल-खेल में गीत रच डालते हैं। दरअसल रचनात्मकता सबके अंदर होती है। उसे तराशने की ज़रूरत होती है। तुकबंदी के प्रयास में धीरे-धीरे उनकी रचनात्मकता आकार लेने लगती है—

घो-घो रानी कितना पानी
अथवा
अक्कड़-बक्कड़ बम्बे बो
अस्सी नब्बे पूरे सौ
सौ में लागा धागा
चोर निकलकर भागा

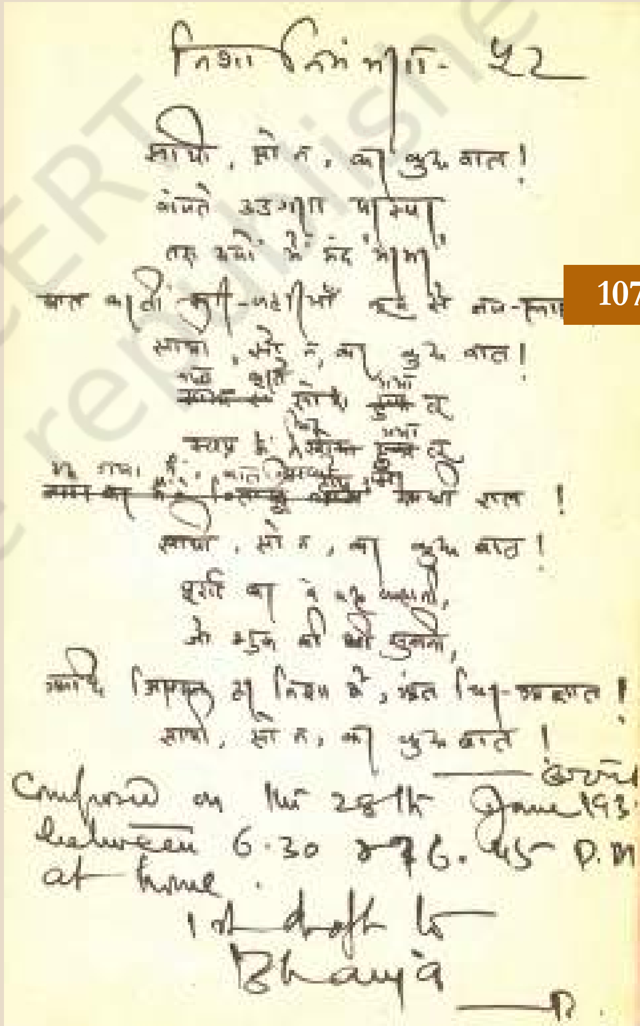

हरिवंश राय बच्चन का गीत, उनकी लिखावट में

© NCERT not to be republished

कई बार हमारे बड़े कवियों ने भी शब्दों से खेलने का सार्थक प्रयास किया है।

अगर कहीं मैं तोता होता
तोता होता तो क्या होता?
तोता होता।

–रघुवीर सहाय

वाह जी वाह!
हमको बुद्धू ही निरा समझा है!
हम समझते ही नहीं जैसे कि
आपको बीमारी है–
आप घटते हैं तो घटते ही चले जाते हैं,
और बढ़ते हैं तो बस यानी कि
बढ़ते ही चले जाते हैं–
दम नहीं लेते हैं जब तक बि ल कु ल ही
गोल न हो जाएँ,
बिलकुल गोल।
यह मरज़ आपका अच्छा ही नहीं होने में...

–शमशेर बहादुर सिंह

ऊपर दिए गए काव्यांशों में कवि ने शब्दों और ध्वनियों से खेलने का प्रयास किया है। खेल-खेल में किए गए इस प्रयास द्वारा अर्थ के नए आयाम खुलते हैं। शब्दों का यह खेल धीरे-धीरे एक ऐसी दुनिया में ले जाता है जहाँ रिद्म है, लय है और एक व्यवस्था है। यही प्रवृत्ति आगे चलकर शब्दों को ठीक-ठीक रखकर अर्थ के खेल खेलना सिखा देती है। यानी शब्दों के खेल से शुरू हुई कविता के रचने की कहानी शब्दों की व्यवस्था तक जाती है। उदाहरण के लिए धूमिल की कविता *मोचीराम* की कुछ पंक्तियाँ लेते हैं।

चोट जब पेशे पर पड़ती है
तो कहीं न कहीं एक चोरकील
दबी रह जाती है
जो मौका पाकर उभरती है
और अँगुली में गड़ती है

इन पंक्तियों में पेशे पर चोट यानी उचित मेहनताना न मिलना और उपेक्षा के भाव पर बल है। इन्हीं पंक्तियों की संरचना को बदल देने पर अर्थ भी बदल जाएगा।

© NCERT not to be republished

पड़ती है पेशे पर चोट जब
तो चोर कील कहीं न कहीं एक
रह जाती है दबी
उभरती है जो मौका पाकर
और गड़ती है
अँगुली में

इन पंक्तियों की संरचना बदल देने से 'चोट' पर अधिक बल हो गया है। पेशे की चोट पर कम। जबकि ऊपर की पंक्तियों में पेशे की चोट पर अधिक बल है। इसी तरह दोनों कविताओं के रेखांकित शब्दों पर ध्यान दें और सोचें कि वाक्य-संरचना का कविता में क्या महत्त्व होता है।

कविता में शब्दों के पर्याय नहीं होते। उपर्युक्त पंक्तियों पर ध्यान दें–यदि पहली पंक्ति में 'चोट' की जगह 'मार' शब्द रख दें तो कविता का भाव बदल जाएगा। चोट शब्द मोची के संदर्भ में भी एक अलग (हथौड़े की चोट) अर्थ रखता है।

बिंब और छंद (आंतरिक लय) कविता को इंद्रियों से पकड़ने में सहायक होते हैं। हमारे पास दुनिया को जानने का एकमात्र सुलभ साधन इंद्रियाँ ही है। बाह्य संवेदनाएँ मन के स्तर पर बिंब के रूप में बदल जाती हैं। कुछ विशेष शब्दों को सुनकर अनायास मन के भीतर कुछ चित्र कौंध जाते हैं। ये स्मृति चित्र ही शब्दों के सहारे कविता का बिंब निर्मित करते हैं। उदाहरण के लिए सुमित्रानंदन पंत की कविता *संध्या के बाद* की पंक्तियों को देखें–

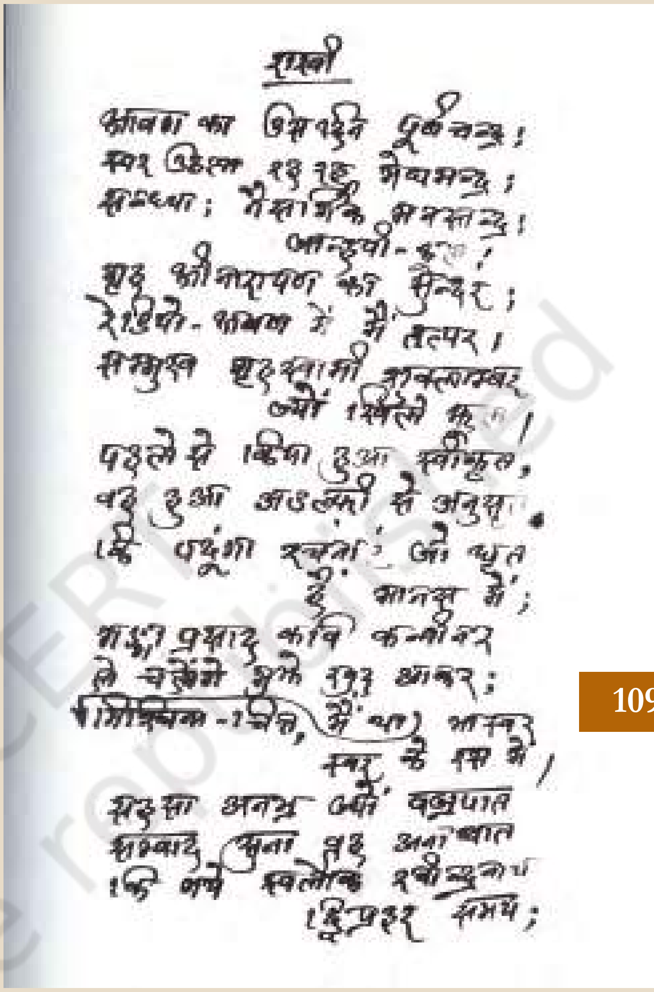

निराला की हस्तलिपि में उनकी एक असंकलित कविता
'बहुवचन' से साभार,

तट पर बगुलों-सी वृद्धाएँ
विधवाएँ जप-ध्यान में मगन,
मंथर धारा में बहता
जिनका अदृश्य गति अंतर-रोदन!

ऊपर की पंक्तियों को ध्यान से पढ़ें। 'बगुलों-सी वृद्धाएँ विधवाएँ' पढ़कर आपकी स्मृति में बगुले का आकार, उसकी सफ़ेदी और वृद्ध विधवाओं के घुटे हुए सिर के कारण गर्दन का आकार तथा उनके सफ़ेद वस्त्र एकाकार हो जाते हैं।

© NCERT not to be republished

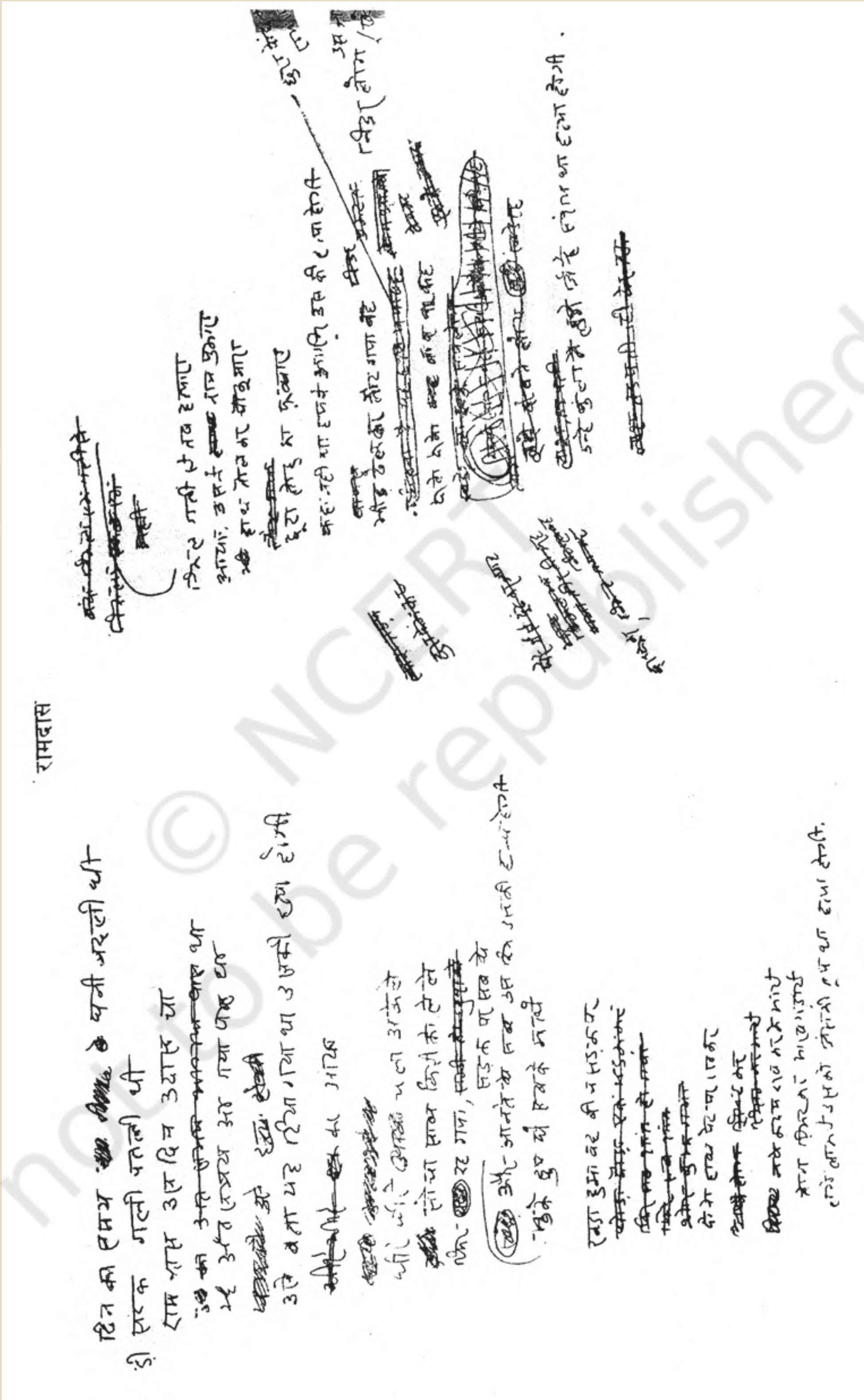

'रामदास' कविता का यह प्रथम प्रारूप है। कविता के दौरान शब्दों और वाक्यों में दिखनेवाले परिवर्तन यह दिखाते हैं कि सृजन प्रक्रिया के दौरान शिल्प भी भाव और परिवेश से निर्धारित होता है।

सुमित्रानंदन पंत ने कविता के लिए **चित्र-भाषा** की आवश्यकता पर बल दिया है, क्योंकि चित्रों या बिंबों का प्रभाव मन पर अधिक पड़ता है। दृश्य बिंब अधिक बोधगम्य होते हैं, क्योंकि देखी हुई हर चीज़ हमें प्रभावित करती है। कविता की रचना करते समय शुरुआत में धीरे-धीरे दृश्य और श्रव्य बिंबों की संभावना तलाश करनी चाहिए। ये बिंब सभी को आकृष्ट करते हैं। इसीलिए किसी विचारक ने यह कहा था कि कविता ऐसी चीज़ है जिसे पाँच ज्ञानेंद्रियों (स्पर्श, स्वाद, दृश्य, घ्राण, श्रवण) रूपी पाँच उँगलियों से पकड़ा जाता है। जिस कवि में जितनी बड़ी ऐंद्रिक पकड़ होती है वह उतनी ही प्रभावशाली कविता रचने में समर्थ हो पाता है।

गतिविधि

कविता में बिंबों का विशिष्ट महत्त्व है। प्राकृतिक दृश्यों को सजीव एवं चेतन बिंब के रूप में प्रस्तुत करने की शैली को मानवीकरण कहते हैं। जैसे–

बीती विभावरी जाग री
अंबर पनघट में डुबो रही,
ताराघट उषा नागरी।।

मानवीकरण के ऐसे ही पाँच उदाहरण देते हुए उनका कविता पोस्टर तैयार करें।

छंद (आंतरिक लय) कविता का अनिवार्य तत्त्व है। मुक्त छंद की कविता लिखने के लिए भी अर्थ की लय का निर्वाह ज़रूरी है। कवि को भाषा के संगीत की पहचान होनी चाहिए। नागार्जुन की *बादल को घिरते देखा है* नामक कविता को देखें। यहाँ मात्रा की गणना के अनुसार कोई विशेष छंद न होकर भी संगीतात्मक लयात्मकता है। इसी तरह धूमिल की कविता *मोचीराम* में ऊपर-ऊपर से देखने पर छंद नहीं है लेकिन अर्थ का अपना भीतरी छंद निरंतर मौजूद है–

बाबू जी! सच कहूँ–मेरी निगाह में
न कोई छोटा है
न कोई बड़ा है
मेरे लिए हर आदमी एक जोड़ी जूता है
जो मेरे सामने
मरम्मत के लिए खड़ा है

कविता के उपर्युक्त सारे **घटक** परिवेश और संदर्भ से परिचालित होते हैं। नागार्जुन की एक छोटी-सी कविता है–*अकाल और उसके बाद।* परिवेश गाँव का है। इस कविता में संदर्भ, अकाल और उसके बाद का परिवर्तन है। कविता की भाषा, संरचना, बिंब, छंद, सब उसी के इर्द-गिर्द घूमते हैं।

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।

दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद
धुआँ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठी घर भर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पाँखे कई दिनों के बाद।

अकाल और उसके बाद होने वाले परिवर्तन को कवि ने सांगीतिक व्यवस्था के भीतर केवल कुछ संकेतों के द्वारा प्रकट करके अपनी बात कह दी है। जैसे–घर में दाने का आना, आँगन से ऊपर उठता हुआ धुआँ, घरवालों की आँखों में आई चमक और कौओं के द्वारा पंखों का खुजलाया जाना।

गाँव के परिवेश के लिए चूल्हा, चक्की, दाने, पाँख आदि तद्भव शब्दों का प्रयोग हुआ है। यहाँ किसी भी शब्द को हटाकर उसका पर्याय रख दें तो कविता का अर्थ बदल जाएगा। जैसे 'कई' के स्थान पर 'बहुत' शब्द रख दें। 'कई' शब्द एक-एक दिन की अकाल की भीषणता और अकाल के बाद के उल्लास का हिसाब देने में समर्थ है जो 'बहुत' के द्वारा संभव नहीं था। आप देखेंगे कि इस कविता में एक साथ ठेठ गँवई शब्दों के साथ 'शिकस्त', 'गश्त' जैसे उर्दू शब्दों का प्रयोग इसे सहज परिवेश देता है।

ध्यान देने की बात है कि यही कवि जब *बादल को घिरते देखा है* नामक कविता में विराट-प्रकृति, भव्य हिमालय का सौंदर्य वर्णन करता है तो उसे कालिदास याद आते हैं और भाषा खुद-ब-खुद तत्सम पदावली से युक्त हो जाती है।

परिवेश के साथ-साथ कविता के सभी घटक भाव तत्त्व से परिचालित होते हैं। कवि की वैयक्तिक सोच, दृष्टि और दुनिया को देखने का नज़रिया कविता की भाव संपदा बनती है। कवि की इस वैयक्तिकता में सामाजिकता मिली होती है हवा में सुगंध की तरह। कुछ-कुछ निराला की *सरोज-स्मृति* की तरह घनघोर निजी और उतनी ही सामाजिक। इसे वह भाषा में बरतता है। भाषा के साथ कवि का यह बरताव ही कविता कहलाती है। प्रतिभा इन्हीं तत्त्वों को उजागर करने वाली आंतरिक क्षमता है, जिसे हम दुनिया के महान कवियों में पाते हैं।

कविता के कुछ प्रमुख घटक हैं–

- *कविता भाषा में होती है, इसलिए भाषा का सम्यक ज्ञान ज़रूरी है।*
- *भाषा शब्दों से बनती है। शब्दों का एक विन्यास होता है जिसे वाक्य कहा जाता है। भाषा प्रचलित एवं सहज हो पर संरचना ऐसी कि पाठक को नयी लगे। कविता में संकेतों का बड़ा महत्त्व होता है। इसलिए चिह्नों (, !-।) यहाँ तक कि दो पंक्तियों के बीच का खाली स्थान भी कुछ कह रहा होता है। वाक्य गठन की जो विशिष्ट प्रणालियाँ होती हैं, उन्हें शैली कहा जाता है। इसलिए विभिन्न काव्य शैलियों का ज्ञान भी ज़रूरी है।*
- *छंद के अनुशासन की जानकारी से होकर गुज़रना एक कवि के लिए ज़रूरी है। तभी आंतरिक लय का निर्वाह संभव है। कविता छंद और मुक्त छंद दोनों में होती है। छंदोबद्ध कविता के लिए छंद के बारे में बुनियादी जानकारी आवश्यक है ही, मुक्त छंद में लिखने के लिए भी इसका ज्ञान ज़रूरी है।*
- *कविता समय विशेष की उपज होती है उसका स्वरूप समय के साथ-साथ बदलता रहता है। अत: किसी समय विशेष की प्रचलित प्रवृत्तियों की ठीक-ठीक जानकारी भी कविता की दुनिया में प्रवेश के लिए आवश्यक है।*
- *कम से कम शब्दों में अपनी बात कह देना और कभी-कभी तो शब्दों या दो वाक्यों के बीच कुछ अनकही छोड़ देना कवि की ताकत बन जाती है।*

मोटे तौर पर यह बुनियादी जानकारी कविता की दुनिया में प्रवेश के लिए ज़रूरी है। पर 'सौ बात की एक बात' कि सारी तैयारी हो और कविता रचने के लिए चीज़ों को देखने की नवीन दृष्टि या नए को पहचानने और प्रस्तुत करने की कला न हो तो काव्य लेखन संभव नहीं। भारतीय विचारकों ने इसी को प्रतिभा कहा है। यह प्रतिभा प्रकृति प्रदत्त होती है और हर आदमी में किसी न किसी रूप में मौजूद होती है। किसी नियम या सिद्धांत के अनुसार इसे पैदा नहीं किया जा सकता। निरंतर अभ्यास और परिश्रम के द्वारा विकसित अवश्य किया जा सकता है। जहाँ तक कविता का सवाल है–शब्दों का चयन, उसका गठन और भावानुसार लयात्मक अनुशासन वे तत्त्व हैं जो जीवन के अनुशासन के लिए ज़रूरी हैं, भाषा सीखने में तो मददगार हैं ही। कविता की ये कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं, जो कविता रचना भले न सिखाएँ लेकिन इन्हें जानना कविता को रचने का मज़ा दे सकता है और कविता को सराहने का सुख भी। साथ ही शब्दों की दुनिया में प्रवेश उनसे खेलना विद्यार्थी की रचनात्मक शक्ति और ऊर्जा को बाहर लाने में अद्भुत भूमिका निभा सकते हैं।

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. आपने अनेक कविताएँ पढ़ी होंगी। उनमें से आपको कौन-सी कविता सबसे अच्छी लगी? लिखिए। यह भी बताइए कि आपको वह कविता क्यों अच्छी लगी।

2. आपके जीवन में अनेक ऐसी घटनाएँ घटी होंगी जिन्होंने आपके मन को छुआ होगा। उस अनुभूति को कविता के रूप में लिखने का प्रयास कीजिए।

3. शब्दों का खेल, परिवेश के अनुसार शब्द-चयन, लय, तुक, वाक्य संरचना, यति-गति बिंब, संक्षिप्तता के साथ-साथ विभिन्न अर्थ स्तर आदि से कविता बनती है। दी गई कविता में इनकी पहचान कर अपने शब्दों में लिखें-

एक- जनता का
दुख एक।
हवा में उड़ती पताकाएँ
अनेक।

दैन्य दानव। क्रूर स्थिति।
कंगाल बुद्धि ; मजूर घर भर।
एक जनता का - अमरवर;
एकता का स्वर।
-अन्यथा स्वातंत्र्य इति।

–शमशेर बहादुर सिंह

© NCERT not to be republished

7

नाटक लिखने का व्याकरण

इस पाठ में...

- नाटक और अन्य विधाएँ
- नाटक में समय का बंधन
- नाटक के तत्त्व
- नाटक के विषय
- नाटक में स्वीकार एवं अस्वीकार की अवधारणा
- नाटक की शिल्प संरचना

नाटक का तंत्र लेखक को खुद निश्चित करना पड़ता है। नाट्य-तंत्र के नियमों से मार्गदर्शन होगा, लेकिन ऐसा नहीं कि उनके पालन से ही अच्छा नाटक लिखा जा सकता है। विश्व के बहुत से अच्छे नाटक तो इन नियमों के अपवाद ही साबित होंगे। नाटक का माध्यम खून में उतर जाना चाहिए, संज्ञा पर उसकी छाप उठनी चाहिए—तभी कोई लेखक अच्छा नाटक लिख सकता है।

—**विजय तेंदुलकर**
मराठी नाटककार

लगातार यह प्रश्न सामने आता रहा है कि कविता, कहानी, उपन्यास की तरह **नाटक** भी साहित्य के अंतर्गत ही आता है फिर इसकी रचना में क्या अंतर ज़रूरी हो जाता है। जब हम इस पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि नाटक अपनी कुछ निजी विशिष्टताओं के कारण बाकी दूसरी विधाओं से बिलकुल अलग हो जाता है। स्वयं हमारी भारतीय परंपरा में नाटक को **दृश्य काव्य** की संज्ञा दी गई है। जहाँ से नाटक अपनी निजी एवं विशेष प्रकृति ग्रहण करता है वह है उसका लिखित रूप से दृश्यता की ओर अग्रसर

होना। जहाँ साहित्य की अन्य विधाएँ अपने लिखित रूप में ही एक निश्चित और अंतिम रूप को प्राप्त कर लेती हैं, वहीं एक नाटक अपने लिखित रूप में सिर्फ़ एकआयामी ही होता है। जब उस नाटक का मंचन हमारे सामने आता है तब जाकर उसमें संपूर्णता आती है। निष्कर्ष यह है कि साहित्य की दूसरी विधाएँ पढ़ने या फिर सुनने तक की यात्रा तय करती हैं पर नाटक पढ़ने, सुनने के साथ-साथ देखने के तत्त्व को भी अपने भीतर समेटे हुए है।

'मिडनाइट चिल्ड्रेन' की रंगमंच सज्जा, इसमें फ़िल्म और रंगमंच शैलियों की संयुक्त प्रस्तुति दर्शाई गई है

नाटक लिखते समय नाटककार को नाटक की एक मूल विशेषता को हमेशा याद रखना होता है। वह है–**समय का बंधन।** समय का यह बंधन नाटक की रचना पर अपना पूरा असर डालता है, इसीलिए एक नाटक को शुरू से लेकर अंत तक एक निश्चित समय-सीमा के भीतर पूरा होना होता है। नाटककार अगर अपनी रचना को भूतकाल से अथवा किसी और लेखक की रचना को भविष्यकाल से उठाए, इन दोनों ही स्थितियों में उसे नाटक को वर्तमान काल में ही संयोजित करना होता है। यही कारण है कि नाटक के मंच-निर्देश हमेशा वर्तमान काल में लिखे जाते हैं। चाहे काल कोई भी हो उसे एक विशेष समय में, एक विशेष स्थान पर, वर्तमान काल में ही घटित होना होता है। जैसे-किसी ऐतिहासिक या पौराणिक घटना को कहानी, उपन्यास या कविता में उसके मूल संदर्भ में उसी काल में रखकर भी उसका पाठ किया जा सकता है पर नाटक में उसे हमारी आँखों के सामने ही एक बार फिर घटित होना होता है। समय को लेकर एक और तथ्य यह है कि साहित्य की दूसरी विधाओं, यानी कहानी, उपन्यास या फिर कविता को हम कभी भी पढ़ते या सुनते हुए बीच में रोक सकते हैं और कुछ समय बाद फिर वहीं से शुरू कर सकते हैं पर नाटक के साथ ऐसा संभव नहीं है।

एक नाटककार को यह भी सोचना ज़रूरी है कि दर्शक कितनी देर तक किसी कहानी को अपने सामने घटित होते देख सकता है। नाटक में किसी भी चरित्र का पूरा विकास होना भी ज़रूरी है। इसलिए समय का ध्यान रखना भी ज़रूरी हो जाता है। नाटक में **तीन अंक** होते हैं इसलिए उसे भी समय को ध्यान में रखकर बाँटने की ज़रूरत होती है। यदि हम भरत लिखित *नाट्यशास्त्र* को भी देखें तो उसमें भी नाटककारों से यह अपेक्षा की गई थी कि नाटक के हरेक अंक की अवधि कम-से-कम 48 मिनट की हो।

अब दूसरा महत्त्वपूर्ण अंग है–**शब्द!** वैसे यह साहित्य की सभी विधाओं के लिए आवश्यक होता है। पर, साहित्य की ही दो विधाओं, कविता और नाटक के लिए शब्द का विशेष महत्त्व है। नाटक की दुनिया में शब्द अपनी एक नयी, निजी और अलग अस्मिता ग्रहण करता है। हमारे नाट्यशास्त्र में भी वाचिक अर्थात बोले जाने वाले शब्द को नाटक का शरीर कहा गया है। कहानी तथा उपन्यास शब्दों के माध्यम से किसी स्थिति, वातावरण या कथानक का वर्णन करते हैं या अधिक से अधिक उसका चित्रण कर पाते हैं। यही कारण है कि इसे वर्णित या फिर नैरेटिव विधा

पारसी थिएटर शैली में खेले गए नाटक का दृश्य

कह दिया जाता है। कविता इससे आगे है। इसके शब्द, बिंब और प्रतीक में बदलने की क्षमता भी रखते हैं। इसी कारण सहित्य की सभी विधाओं में कविता ही नाटक के सबसे ज़्यादा निकट जान पड़ती है। वैसे कहानी या उपन्यास में भी वर्णन घटित होता है लेकिन अंतर यह है कि नाटक में वह कहानी सचमुच हमारी आँखों के सामने घटित होती है। इसी आधार पर कहा जाता है कि एक कवि सफल नाटककार भी हो सकता है। ऊपर के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए निष्कर्ष यह निकला कि नाटककार के लिए ज़रूरी है कि वह अधिक से अधिक संक्षिप्त और सांकेतिक भाषा का प्रयोग करे जो अपने आप में वर्णित न होकर क्रियात्मक अधिक हो, उन शब्दों में दृश्य बनाने की क्षमता भरपूर हो और वह अपने शाब्दिक अर्थ से ज़्यादा व्यंजना की ओर ले जाए। यह कहा भी गया है कि अच्छा नाटक वही होता है जो लिखे अथवा बोले गए शब्दों से भी ज़्यादा वह ध्वनित करे, जो लिखा या बोला नहीं जा रहा। नाटक का मात्र एक मौन, अंधकार या ध्वनि–प्रभाव कहानी या उपन्यास के बीस–पच्चीस पृष्ठों की बराबरी कर सकता है।

एक नाटक के लिए ज़रूरी होता है–उसका **कथ्य।** पहले कहानी के रूप को किसी शिल्प, फ़ॉर्म अथवा संरचना के भीतर उसे पिरोना होता है। इसके लिए नाटककार को शिल्प या संरचना की पूरी समझ, जानकारी या अनुभव होना चाहिए। यह बात हमेशा ध्यान में होनी चाहिए कि नाटक को मंच पर मंचित होना है। यही कारण है कि एक नाटककार को रचनाकार के साथ-साथ एक कुशल संपादक भी होना चाहिए। पहले तो घटनाओं, स्थितियों अथवा दृश्यों का चुनाव, फिर उन्हें किस क्रम में रखा जाए कि वे शून्य से शिखर की तरफ़ विकास की दिशा में आगे बढ़ें, यह कला उसे अवश्य आनी चाहिए।

गतिविधि

रंगमंच प्रतिरोध का सबसे सशक्त माध्यम है। क्या आप लेखक के इस विचार से सहमत है? पक्ष और विपक्ष का समूह बनाकर इस विषय पर चर्चा करें।

नाटक का सबसे ज़रूरी और सशक्त माध्यम है—**संवाद।** दूसरी किसी विधा के लिए यह कतई ज़रूरी नहीं कि वह संवादों का सहारा ले, लेकिन नाटक का तो उसके बिना काम ही नहीं चल सकता। नाटक के लिए तनाव, उत्सुकता, रहस्य, रोमांच और अंत में उपसंहार जैसे तत्त्व अनिवार्य हैं। इसके लिए आपस में विरोधी विचारधाराओं का संवाद ज़रूरी होता है। यही कारण है कि नायक-प्रतिनायक, सूत्रधार की परिकल्पना भारतीय या पश्चात्य नाट्यशास्त्र में आरंभ से ही की गई थी।

वह कौन-सी चीज़ है जो एक सशक्त नाटक को एक कमज़ोर नाटक से अलग करती है। वह है—संवादों का अपनेआप में वर्णित या चित्रित न होकर क्रियात्मक होना, दृश्यात्मक होना और लिखे तथा बोले जाने वाले संवादों से भी ज़्यादा उन संवादों के पीछे निहित अनलिखे एवं अनकहे संवादों की ओर ले जाना, जिन्हें अंग्रेज़ी भाषा में **सबटैक्स्ट** कहा गया है। जिस नाटक में इस तत्त्व की जितनी ज़्यादा संभावनाएँ होंगी, वह नाटक उतना ही सफल होगा। उदाहरण के लिए हैमलेट का यह प्रसिद्ध संवाद—**टूबी और नॉट टू बी,** या स्कन्दगुप्त का **अधिकार सुख कितना मादक और सारहीन है,** संवाद अनगिनत संभावनाओं को उजागर कर देता है।

नाटक स्वयं में एक जीवंत माध्यम है। कोई भी दो चरित्र जब भी आपस में मिलते हैं तो विचारों के आदान-प्रदान में टकराहट पैदा होना स्वाभाविक है। यही कारण है कि रंगमंच प्रतिरोध का सबसे सशक्त माध्यम है। वह कभी भी यथास्थिति को स्वीकार कर ही नहीं सकता। इस कारण उसमें **अस्वीकार** की स्थिति भी बराबर बनी रहती है। क्योंकि कोई भी जीता-जागता संवेदनशील प्राणी वर्तमान परिस्थितियों को लेकर असंतुष्ट हुए बिना नहीं रह सकता। मज़े की बात यह है कि जिस नाटक में इस तरह की असंतुष्टि, छटपटाहट, प्रतिरोध और अस्वीकार जैसे नकारात्मक तत्त्वों की जितनी ज़्यादा उपस्थिति होगी वह उतना ही गहरा और सशक्त नाटक साबित होगा। उदाहरण के लिए हम *अंधायुग, तुगलक* आदि नाटकों को देख सकते हैं। यही कारण है कि जब-जब किसी भी विचार, व्यवस्था अथवा तात्कालिक समस्याओं के समर्थन में नाटक लिखे गए। वे कभी भी बहुत दिनों तक चर्चा में नहीं रहे। यही वजह है कि हमारे आधुनिक नाटककारों को राम की अपेक्षा रावण, प्रह्लाद की अपेक्षा हिरण्यकश्यप और कृष्ण की अपेक्षा कंस अधिक आकर्षित करता है।

शास्त्रीय शैली में खेले गए नाटक का एक दृश्य

नाटक लिखते समय यह भी अत्यंत ज़रूरी है कि नाटक में जो चरित्र प्रस्तुत किए जाएँ वे सपाट, सतही और टाइप्ड न हो। जिस प्रकार हम अपनी

आधुनिक नाटक की एक रंगमंच सज्जा

रोज़मर्रा की ज़िंदगी में किसी भी व्यक्ति को सिर्फ़ अच्छा या बुरा नहीं कह सकते उसी तरह नाटक की कहानी में भी चरित्रों के विकास में इस बात का ध्यान रखा जाए कि वे स्थितियों के अनुसार अपनी क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं को व्यक्त करते चलें। नाटककार नाटक के कथानक के माध्यम से जो कुछ भी कहना चाहता है उसे अपने चरित्रों और उनके बीच होने वाले परस्पर संवादों से ही अभिव्यक्त करता है। लेकिन ऐसा कभी भी न लगे कि वह पहले से निश्चित विचारों को मात्र शब्दों के माध्यम से व्यक्त कर रहा है। ऐसी स्थिति में नाटक 'नाटक' न रहकर सिर्फ़ शब्दों के रूप में विचारों का एक पुंज-सा होकर रह जाता है। हमें याद रखना चाहिए कि इन शब्दों को बोलनेवाले पात्र मंच पर सचमुच के हाड़-माँस से युक्त जीवंत प्राणी होते हैं न कि कविता, कहानी और उपन्यास में उपस्थित रहने वाले शाब्दिक चरित्र। अत: संवाद जितने ज़्यादा सहज और स्वाभाविक होंगे उतना ही दर्शक के मर्म को छुएँगे। यहाँ सहज स्वाभाविक होने से आशय भाषा की सरलता से कदापि नहीं है। संवाद चाहे कितने भी तत्सम और क्लिष्ट भाषा में क्यों न लिखे गए हों, स्थिति तथा परिवेश की माँग के अनुसार यदि वे स्वाभाविक जान पड़ते हैं तब उनके दर्शकों तक संप्रेषित होने में कोई मुश्किल नहीं होगी। इस दृष्टि से हम जयशंकर प्रसाद, मोहन राकेश, जगदीश चंद्र माथुर, धर्मवीर भारती और सुरेन्द्र वर्मा जैसे नाटककारों की भाषा में यह विशेषता देख सकते हैं। इसी के साथ जुड़ा दूसरा सवाल उस शिल्प और संरचना का भी है जिसके भीतर से नाटककार अपने कथ्य को व्यंजित करता है।

आज हिंदी के नाटककारों के पास शिल्प की दृष्टि से कई तरह के विकल्प मौजूद हैं। सबसे पहले तो *स्वप्नवासवदत्ता, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, मृच्छकटिकम्* और *उत्तर रामचरित* जैसे संस्कृत नाटकों का ढाँचा है जिसे हम पारिभाषिक शब्दावली में शास्त्रीय कहते हैं, एक लोकनाटकों का फ़ॉर्म है जिसमें कोई लिखित आलेख नहीं है और सब कुछ

- *नाटक ही एक ऐसी विधा है, जो हमेशा वर्तमान काल में घटित होती है। यहाँ तक कि नाटक की कहानी बेशक भूतकाल या भविष्यकाल से संबद्ध हो, तब भी उसे वर्तमान काल में ही घटित होना पड़ता है।*
- *नाटककार को पहले घटनाओं का चुनाव करना पड़ता है, फिर उन्हें एक निश्चित क्रम में रखना होता है।*
- *एक अच्छा नाटक वही है जो कथा को आपसी बहस-मुबाहिसों से आगे बढ़ाए।*
- *नाटक और रंगमंच जैसी विधा का सृजन मूलत: अस्वीकार के भीतर से ही होता है।*

not to be republished

मौखिक रचना प्रक्रिया के माध्यम से घटित होता है। पारसी नाटकों का अपना एक अलग शिल्प है जो शेरो-शायरी, गीत-संगीत और अतिरंजित संवादों पर आधारित होता है। इब्सन की तर्ज़ पर यथार्थवादी नाटकों का अपना एक मुहावरा है, जो मुख्यतः गद्य पर आश्रित है। इनके अतिरिक्त नुक्कड़ नाटक की अपनी अलग अहमियत है। यह नाटककार को तय करना है कि वह इनमें से किसी एक तरह के शिल्प का चुनाव करे, अलग-अलग विकल्पों के मिश्रण से अपनी एक नयी शैली तैयार करे अथवा इन सबको छोड़कर बिलकुल एक नया शिल्प लेकर प्रस्तुत हो। प्रायः कहा जाता है कि कथ्य अपना शिल्प स्वयं निर्धारित कर लेता है और यही सही स्थिति है। लेकिन जब-जब नाटककार ने पहले शिल्प या संरचना को निश्चित कर लिया और फिर उसमें किसी कथ्य कहानी को फिट करना चाहा तो ऐसी कोशिशें बहुत दूर तक कामयाब नहीं हुईं।

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. "नाटक की कहानी बेशक भूतकाल या भविष्यकाल से संबद्ध हो, तब भी उसे वर्तमान काल में ही घटित होना पड़ता है"– इस धारणा के पीछे क्या कारण हो सकते हैं?

2. "संवाद चाहे कितने भी तत्सम और क्लिष्ट भाषा में क्यों न लिखे गए हों। स्थिति और परिवेश की माँग के अनुसार यदि वे स्वाभाविक जान पड़ते हैं तो उनके दर्शक तक संप्रेषित होने में कोई मुश्किल नहीं है" क्या आप इससे सहमत हैं? पक्ष या विपक्ष में तर्क दें।

3. समाचार पत्र के किसी कहानीनुमा समाचार से नाटक की रचना करें।

4. (क) अध्यापक और शिक्षक के बीच गृह-कार्य को लेकर पाँच-पाँच संवाद लिखिए।

   (ख) एक घरेलू महिला एवं रिक्शा चालक को ध्यान में रखते हुए पाँच-पाँच संवाद लिखिए।

© NCERT not to be republished

8

कैसे लिखें कहानी

कहानी किसी एक की नहीं, वह कहने वालों की है, सुनने वालों की भी। इसकी, उसकी, सबकी; सृष्टि समूचे परिवार की। नानी की मुहर इस पर है। इस लोक की प्रजा होने के कारण हर किसी की कहानी लिखी और सुनी जा सकती है।

–कृष्णा सोबती
हिंदी कथाकार

इस पाठ में...

- कहानी क्या है?
- कहानी कितनी पुरानी?
- कहानी के तत्त्व

कहानी लेखन पर विचार करने से पहले कहानी के स्वरूप और उसके इतिहास पर कुछ बातचीत करना ज़रूरी है। कहानी क्या है? अलग-अलग लेखकों और विद्वानों ने कहानी की विभिन्न परिभाषाएँ दी हैं और एक परिभाषा सबको मान्य नहीं है। लेकिन आगे बढ़ने के लिए हम कह सकते हैं कि किसी घटना, पात्र या समस्या का क्रमबद्ध ब्योरा जिसमें परिवेश हो, द्वंद्वात्मकता हो, कथा का क्रमिक विकास हो, चरम उत्कर्ष का बिंदु हो, उसे कहानी कहा जाता है।

वास्तव में कहानी हमारे जीवन से इतनी निकट या उसका इतना अविभाज्य हिस्सा है कि हर आदमी किसी न किसी रूप में कहानी सुनता और सुनाता है। क्या आप जानते हैं कि यदि कोई आदमी किसी बात को बहुत घुमाफिरा कर कह रहा हो तो

© NCERT not to be republished

सुनने वाला कहता है–कहानी न सुनाओ! जल्दी से बताओ कि हुआ क्या? प्रत्येक मनुष्य में अपने अनुभव बाँटने और दूसरों के अनुभवों को जानने की प्राकृतिक इच्छा है अर्थात हम सब अपनी बातें किसी को सुनाना और दूसरों की सुनना चाहते हैं। इसलिए यह कहा जा सकता है हर आदमी में कहानी लिखने का मूल भाव निहित है। यह बात दूसरी है कि कुछ लोगों में इस भाव का विकास हो जाता है और कुछ इसे विकसित नहीं करते।

जहाँ तक कहानी के इतिहास का सवाल है, वह उतना ही पुराना है जितना मानव इतिहास, क्योंकि कहानी, मानव स्वभाव और प्रकृति का हिस्सा है। धीरे-धीरे कहानी कहने की आदिम कला का विकास होने लगा। कथावाचक कहानियाँ सुनाते थे। किसी घटना–युद्ध, प्रेम, प्रतिशोध के किस्से सुनाए जाते थे। मानव स्वभाव का एक गुण कल्पना भी है। सच्ची घटनाओं पर आधारित कथा-कहानी सुनाते-सुनाते उसमें कल्पना का सम्मिश्रण भी होने लगा, क्योंकि प्राय: मनुष्य वह सुनना चाहता है जो उसे प्रिय है। मान लीजिए हमारा नायक कहीं युद्ध में हार ही क्यों न जाए लेकिन यदि वह नायक है तो हम यह सुनना चाहेंगे कि वह कितनी वीरता से लड़ा और कितनी बहादुरी से उसने एक अच्छे उद्देश्य के लिए अपने प्राण न्योछावर कर दिए। नायक की वीरता का अच्छा बखान करने वाले कथावाचक की सब प्रशंसा करेंगे और उसे इनाम देंगे। कथावाचक सुनने वालों की आवश्यकतानुसार अपनी कल्पना के माध्यम से नायक के गुणों का बखान करेगा। मौखिक कहानी की परंपरा हमारे देश में बहुत पुरानी है और देश के कई भागों, विशेष रूप से राजस्थान में प्रचलित है।

प्राचीन काल में मौखिक कहानियों की लोकप्रियता इसलिए भी थी कि इससे बड़ा संचार का कोई और माध्यम नहीं था। इस कारण धर्म प्रचारकों ने भी अपने सिद्धांत और विचार लोगों तक पहुँचाने के लिए कहानी का सहारा लिया था। यही नहीं बल्कि शिक्षा देने के लिए भी कहानी की विधा का प्रयोग किया गया, जैसे पंचतंत्र की कहानियाँ लिखी गईं जो बहुत शिक्षाप्रद हैं। इस तरह आदिकाल में ही कहानी के साथ 'उद्देश्य' का सम्मिश्रण हो गया था जो आगे चल कर और विकसित हुआ।

कहानी का केंद्रीय बिंदु कथानक होता है। कथानक है क्या? कहानी का वह संक्षिप्त रूप जिसमें प्रारंभ से अंत तक कहानी की सभी घटनाओं और पात्रों का उल्लेख किया गया हो। उदाहरण के लिए प्रेमचंद की कहानी *कफ़न* दस-बारह पृष्ठों की कहानी है लेकिन इसका कथानक दस-बारह पंक्तियों में भी लिखा जा सकता है। घीसू और माधव गाँव के दो गरीब और आलसी किसान हैं। बुधिया माधव की पत्नी है। वह प्रसव पीड़ा से कोठरी के अंदर तड़प रही है। कोठरी के बाहर घीसू और माधव अलाव में आलू भून कर खाने की तैयारी कर रहे हैं। बुधिया प्रसव पीड़ा से मर जाती है। दोनों के पास उसका कफ़न खरीदने के पैसे नहीं हैं। वे गाँव के ज़मींदार के पास पैसे माँगने जाते हैं। ज़मींदार पैसे दे देता है। गाँव के दूसरे संपन्न लोग भी पैसे देते हैं। घीसू और माधव कफ़न खरीदने बाज़ार जाते है पर, कफ़न खरीदने के बजाय उन पैसों की शराब पीते हैं और नशे में मदहोश होकर गाना गाते मदिरालय में गिर पड़ते हैं।

यह कहा जा सकता है कि कथानक कहानी का एक प्रारंभिक नक्शा होता है। उसी तरह जैसे मकान बनाने से पहले एक बहुत प्रारंभिक नक्शा कागज़ पर बनाया जाता है। कहानी का कथानक

आमतौर पर कहानीकार के मन में किसी घटना, जानकारी, अनुभव या कल्पना के कारण आता है। कभी कहानीकार की जानकारी में पूरा कथानक आता है और कभी कथानक का एक सूत्र आता है, केवल एक छोटा-सा प्रसंग या कोई एक पात्र कथाकार को आकर्षित करता है। इसके बाद कथाकार उसे विस्तार देने में जुट जाता है। विस्तार देने का काम कल्पना के आधार पर किया जाता है पर यह समझना बहुत ज़रूरी है कि कहानीकार की कल्पना 'कोरी कल्पना' नहीं होती। ऐसी कल्पना नहीं होती जो असंभव हो। बल्कि ऐसी कल्पना होती है जो संभव हो। कल्पना के विस्तार के लिए लेखक के पास जो सूत्र होता है उसी के माध्यम से कल्पना आगे बढ़ती है। यह सूत्र लेखक को एक परिवेश देता है, पात्र देता है, समस्या देता है। इनके आधार पर लेखक संभावनाओं पर विचार करता है और एक ऐसा काल्पनिक ढाँचा तैयार करता है जो संभावित हो और लेखक के उद्देश्यों से भी मेल खाता हो। उदाहरण के लिए लेखक ने अस्पताल के बाहर एक मरीज़ को देखा। जानकारी मिली कि यह मरीज़ पिछले एक सप्ताह से लगातार आ रहा है पर अभी तक उसे यह मौका नहीं मिल सका है कि डॉक्टर को दिखा सके। इस जानकारी के बाद लेखक की कल्पना अस्पताल, वहाँ की व्यवस्था, पात्रों आदि की गतिविधियों पर केंद्रित हो जाएगी। इसके साथ ही वह अपना उद्देश्य भी तय करेगा। क्या वह अस्पताल केंद्रित कहानी लिखना चाहता है या वह केवल आप की पीड़ा तक अपने को सीमित रखेगा या क्या वह इस मानवीय त्रासदी को वर्तमान सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों से जोड़कर कथानक तैयार करेगा।

आमतौर पर कथानक में **प्रारंभ, मध्य और अंत**–अर्थात कथानक का पूरा स्वरूप होता है। कथानक न केवल आगे बढ़ता है बल्कि उसमें द्वंद्व के तत्त्व भी होते हैं जो कहानी को रोचक बनाए रखते हैं। द्वंद्व के तत्त्वों से अभिप्राय यह है कि परिस्थितियों में इस काम के रास्ते में यह बाधा है। यह बाधा समाप्त हो गई तो आगे कौन-सी बाधा आ सकती है? या हो सकता है एक बाधा के समाप्त हो जाने या किसी निष्कर्ष पर पहुँच जाने के कारण कथानक पूरा हो जाए। कथानक की पूर्णता की शर्त यही होती है कि कहानी नाटकीय ढंग से अपने उद्देश्य को पूरा करने के बाद समाप्त हो। अंत तक कहानी में रोचकता बनी रहनी चाहिए। यह रोचकता द्वंद्व के कारण ही बनी रह पाएगी।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, हर घटना, पात्र, समस्या का अपना देशकाल और स्थान होता है। कथानक का स्वरूप बन जाने के बाद कहानीकार कथानक के देशकाल तथा स्थान को पूरी तरह समझ लेता है, क्योंकि यह कहानी को प्रामाणिक और रोचक बनाने के लिए बहुत आवश्यक है। उदाहरण के लिए यदि अस्पताल का कथानक है तो अस्पताल का पूरा परिवेश, ध्वनियाँ, लोग, कार्य-व्यापार और लोगों के पारस्परिक संबंध, नित्य घटने वाली घटनाएँ आदि का जानना आवश्यक है। लेखक जब अपने कथानक के आधार पर कहानी को विस्तार देता है तो उसमें इन सब जानकारियों की बहुत आवश्यकता होती है।

देशकाल, स्थान और परिवेश के बाद कथानक के पात्रों पर विचार करना चाहिए। हर पात्र का अपना स्वरूप, स्वभाव और उद्देश्य होता है। कहानी में वह विकसित भी होता है या अपना स्वरूप भी बदलता है। कहानीकार के सामने पात्रों का स्वरूप जितना स्पष्ट होगा उतनी ही आसानी उसे पात्रों का चरित्र-चित्रण करने और उसके संवाद लिखने में होगी। इस कारण पात्रों का अध्ययन कहानी की एक बहुत महत्त्वपूर्ण और बुनियादी शर्त है। इसके अंतर्गत पात्रों के अंतर्संबंध पर भी विचार किया जाना चाहिए। कौन-से पात्र की किस-किस परिस्थिति में क्या प्रतिक्रिया होगी, यह भी कहानीकार को पता होना चाहिए। दरअसल कहानीकार और उसके पात्रों के साथ निकटतम संबंध स्थापित होना चाहिए।

पात्रों का चरित्र-चित्रण करने अर्थात उन्हें कहानी में कथानक की आवश्यकतानुसार अधिक से अधिक प्रभावशाली ढंग से लाने के कई तरीके हैं। चरित्र-चित्रण का सबसे सरल तरीका पात्रों के गुणों का कहानीकार द्वारा बखान है। जैसे–**मुरलीधर बड़ा दानी है, वह दूसरों का ध्यान रखता है, दूसरों के लिए उसकी जान हाज़िर रहती है** आदि-आदि। पर यह तरीका प्रभावहीन और बहुत 'आउटडेटेड' है। पात्रों का चरित्र-चित्रण उनके क्रिया-कलापों, संवादों तथा दूसरे लोगों द्वारा बोले गए संवादों के माध्यम से ही प्रभावशाली होता है। उदाहरण के लिए–**मुरलीधर ने एक गरीब आदमी को सरदी से ठिठुरते हुए देखा तो अपनी शाल उसे दे दी। या मुरलीधर का दोस्त स्कूल में फ़ीस जमा कराने के लिए लाइन से बाहर निकल आया क्योंकि उसके पास पूरे पैसे नहीं थे। मुरलीधर ने दोस्त को बताए बिना फ़ीस जमा करा दी।** मतलब यह कि पात्र जो काम करते हैं उनसे उनका सशक्त चित्रण होता है। दूसरे पात्र किसी का चरित्र-चित्रण अपने संवादों के माध्यम से कर सकते हैं जैसे, राजीव अपने और मुरलीधर के मित्र प्रयाग से कह रहा है–**यार इतनी बड़ी प्रॉब्लम तो मुरलीधर ही 'सॉल्व' कर सकता है। चलो उसी के पास चलें।**

पात्रों का चरित्र-चित्रण, पात्रों की अभिरुचियों के माध्यम से भी होता है। समाज में अलग-अलग प्रकार के लोगों की अपने स्वभाव के अनुसार अलग-अलग अभिरुचियाँ होती हैं। मान लीजिए एक आदमी जंगल में जाकर खतरनाक जानवरों की तसवीरें खींचता है। निश्चित रूप से यह साहसी आदमी होगा। एक आदमी वेश्यावृत्ति कराता है, झूठ बोलता है, दलाली करता है, कर्ज़ वापस नहीं करता। ऐसे आदमी का अपना अलग स्वरूप बनेगा।

कहानी में **पात्रों के संवाद** बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं। संवाद के बिना पात्र की कल्पना मुश्किल है। संवाद ही कहानी को, पात्र को स्थापित, विकसित करते हैं और कहानी को गति देते हैं, आगे बढ़ाते हैं। जो घटना या प्रतिक्रिया कहानीकार होती हुई नहीं दिखा सकता, उसे संवादों के माध्यम से सामने लाता है। इसलिए संवादों का महत्त्व बराबर बना रहता है। पात्रों के संवाद लिखते समय

- *कहानी का केंद्रीय बिंदु कथानक होता है।*
- *कहानी को प्रामाणिक और रोचक बनाने के लिए देशकाल, वातावरण तथा स्थान का ध्यान रखना आवश्यक है।*
- *लेखक पात्रों के बारे में खुद न बोलकर उनके क्रियाकलापों और संवादों के माध्यम से चरित्र को सशक्त बनाता है।*
- *द्वंद्व कथानक को आगे बढ़ाता है।*
- *कहानी लेखन सीखने का सबसे कारगर तरीका होगा कि अच्छी कहानियाँ पढ़ी जाएँ।*

यह अवश्य ध्यान में रहना चाहिए कि संवाद पात्रों के स्वभाव और पूरी पृष्ठभूमि के अनुकूल हों। वह उसके विश्वासों, आदर्शों तथा स्थितियों के भी अनुकूल होने चाहिए। संवाद लिखते समय लेखक गायब हो जाता है और पात्र स्वयं संवाद बोलने लगते हैं। उदाहरण के लिए किसी मज़दूर के संवाद ऐसे होने चाहिए कि केवल संवाद सुनकर ही श्रोता को पता चल जाए कि कौन बोल रहा है, यह आदमी क्या करता है, इसकी पृष्ठभूमि क्या है आदि-आदि। संवाद छोटे, स्वाभाविक और उद्देश्य के प्रति सीधे लक्षित होने चाहिए। संवादों का अनावश्यक विस्तार बहुत-सी जटिलताएँ पैदा कर देता है और कहानी में झोल आ जाता है।

कथानक के अनुसार कहानी चरम उत्कर्ष अर्थात **क्लाइमेक्स** की ओर बढ़ती है। चरम उत्कर्ष का चित्रण बहुत ध्यानपूर्वक करना चाहिए क्योंकि भावों या पात्रों के अतिरिक्त अभिव्यक्ति चरम उत्कर्ष के प्रभाव को कम कर सकती है। कहानीकार की प्रतिबद्धता या उद्देश्य की पूर्ति के प्रति अतिरिक्त आग्रह कहानी को भाषण में बदल सकते हैं। सर्वोत्तम यह होता है कि चरम उत्कर्ष पाठक को स्वयं सोचने और लेखकीय पक्षधर की ओर आने के लिए प्रेरित करें लेकिन पाठक को यह भी लगे कि उसे स्वतंत्रता दी गई है और उसने जो निर्णय निकाले हैं, वे उसके अपने हैं।

पहले भी संकेत दिया गया है कि कथानक के बुनियादी तत्त्वों में द्वंद्व का महत्त्व बहुत अधिक है। द्वंद्व ही कथानक को आगे बढ़ाता है। उदाहरण के लिए अगर दो आदमी किसी बात पर सहमत हैं तो उनके बीच कोई द्वंद्व नहीं है और बातचीत आमतौर से आगे नहीं बढ़ सकती है। लेकिन असहमति है तो बातचीत सरलता से आगे बढ़ेगी। कहानी में द्वंद्व दो विरोधी तत्त्वों का टकराव या किसी की खोज में आने वाली बाधाओं, अंतर्द्वंद्व आदि के कारण पैदा होता है। कहानीकार अपने कथानक में द्वंद्व के बिंदुओं को जितना स्पष्ट रखेगा कहानी भी उतनी ही सफलता से आगे बढ़ेगी।

कहानी लिखने की कला सीखने का सबसे अच्छा और सीधा रास्ता यह है कि अच्छी कहानियाँ पढ़ी जाएँ और उनका विश्लेषण किया जाए। कहानी लेखन सिखाने की प्रक्रिया में यही सबसे अधिक कारगर माध्यम होगा।

जब मैंने पहली कहानी लिखी

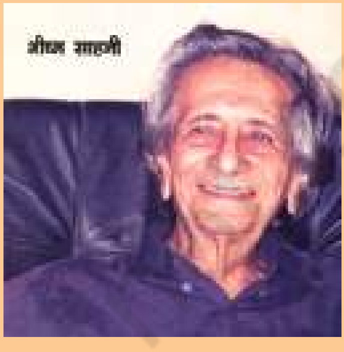

चाहिए तो यह था कि मेरी पहली कहानी प्रेम-कहानी होती। उम्र के एतबार से भी यही मुनासिब था और अदब के एतबार से भी। पर प्रेम के लिए (और प्रेम कहानी के लिए भी) अनुकूल परिस्थितियाँ हों तब काम बने।

मैंने वही लिखा जो मेरे जैसे माहौल में पलने वाले सभी भारतीय युवक लिखते हैं—अबला नारी की कहानी। हिंदी के अधिकांश लेखकों का तो साहित्य में पदार्पण अबला नारी की कहानी से ही होता है और यह दुखांत होनी चाहिए। मैंने भी वैसा ही किया। बड़ी बेमतलब, बेतुकी कहानी थी, न सिर, न पैर और शुरू से आखिर तक मनगढ़ंत, पर चूँकि अबला नारी के बारे में थी और दुखांत थी, इसलिए वानप्रस्थी जी को भी कोई एतराज़ नहीं हो सकता था, और पिताजी को भी नहीं, इसलिए कहानी, कालिज पत्रिका में स्थान पा गई।

पर इसके कुछ ही देर बाद एक प्रेमकहानी सचमुच कलम पर आ ही गई। नख-शिख से प्रेम-कहानी ही थी, पर किसी दूसरी दुनिया की कहानी, जिससे मैं परिचित नहीं था। तब मैं कालिज छोड़ चुका था, और पिताजी के व्यापार में हाथ बँटाने लगा था। कालिज के दिन पीछे छूटते जा रहे थे, और आगे की दुनिया बड़ी ऊटपटाँग और बेतुकी-सी नज़र आ रही थी।

हर दूसरे दिन कोई-न-कोई अनूठा अनुभव होता। कभी अपने घुटने छिल जाते, कभी किसी दूसरे को तिरस्कृत होते देखता। मन उचट-उचट जाता। तभी एक दिन बाज़ार में...मुझे दो प्रेमी नज़र आए।

शाम के वक्त, नमूनों का पुलिंदा बगल में दबाए मैं सदर बाज़ार से शहर की ओर लौट रहा था, जब सरकारी अस्पताल के सामने, बड़े-से नीम के पेड़ के पास मुझे भीड़ खड़ी नज़र आई। भीड़ देखकर मैं यों भी उतावला हो जाया करता था, कदम बढ़ाता पास जा पहुँचा। अंदर झाँककर देखा तो वहाँ दो प्रेमियों का तमाशा चल रहा था। टिप्पणियाँ और ठिठोली भी चल रही थी। घेरे के अंदर एक युवती खड़ी रो रही थी और कुछ दूरी पर एक युवक ज़मीन पर बैठा, दोनों हाथों में अपना सिर थामे, बार-बार लड़की से कह रहा था, "राजो, दो दिन और माँग खा। मैं दो दिन में तंदुरुस्त हो जाऊँगा। फिर मैं मजूरी करने लायक हो जाऊँगा।"

और लड़की बराबर रोए जा रही थी। उसकी नीली-नीली आँखें रो-रोकर सूज रही थीं।

"मैं कहाँ से माँगूँ? मुझे अकेले में डर लगता है।"

दोनों प्रेमी, आस-पास खड़ी भीड़ को अपना साक्षी बना रहे थे।

"देखो बाबूजी, मैं बीमार हूँ। इधर अस्पताल में पड़ा हूँ। मैं कहता हूँ दो दिन और माँग खा, फिर मैं चंगा हो जाऊँगा।"

लड़की लोगों को अपना साक्षी बनाकर कहती, "यहाँ आकर बीमार पड़ गया, बाबूजी मैं क्या करूँ? इधर पुल पर मजूरी करती रही हूँ, पर यहाँ मुझे डर लगता है।"

इस पर लड़का तड़पकर कहता, "देख राजो, मुझे छोड़कर नहीं जा। इसे समझाओ बाबूजी, यह मुझे छोड़कर चली जाएगी तो इसे मैं कहाँ ढूँढूँगा।"

"यहाँ मुझे डर लगता है। मैं रात को अकेली सड़क पर कैसे रहूँ?"

पता चला कि दोनों प्रेमी गाँव से भागकर शहर में आए हैं, किसी फकीर ने उनका निकाह भी करा दिया है, फटेहाल गरीबी के स्तर पर घिसटने वाले प्रेमी! शहर पहुँचकर कुछ दिन तक तो लड़के को मज़दूरी मिलती रही। पास ही में एक पुल था। वह पुल के एक छोर से सामान उठाता और दूसरे छोर तक ले जाता, जिस काम के लिए उसे इकन्नी मिलती। कभी किसी की साइकल तो कभी किसी का गट्ठर। हनीमून पूरे पाँच दिन तक चला। दोनों ने न केवल खाया-पिया, बल्कि लड़के ने अपनी कमाई में से जापानी छींट का एक जोड़ा भी लड़की को बनवा कर दिया, जो उन दिनों अढ़ाई आने गज़ में बिका करती थी।

दोनों रो रहे थे और तमाशबीन खड़े हँस रहे थे। कोई लड़की की नीली आँखों पर टिप्पणी करता, कोई उनके 'ऐसे-वैसे' प्रेम पर, और सड़क की भीड़ में खड़े लोग केवल आवाज़ें ही नहीं कसते, वे इरादे भी रखते हैं। और एक मौलवीजी लड़की की पीठ सहलाने लगे थे और उसे आश्रय देने का आश्वासन देने लगे थे। और प्रेमी बिलख-बिलख कर प्रेमिका से अपने प्रेम के वास्ते डाल रहा था।

तभी, पटाक्षेप की भाँति अँधेरा उतरने लगा था और पीछे अस्पताल की घंटी बज उठी थी जिसमें प्रेमी युवक भरती हुआ था, और वह गिड़गिड़ाता, चिल्लाता, हाथ बाँधता, लड़की से दो दिन और माँग खाने का प्रेमालाप करता अस्पताल की ओर सरकने लगा और मौलवीजी सरकते हुए लड़की के पास आने लगे, और घबराई, किंकर्त्तव्यविमूढ़ लड़की, मृग-शावक की भाँति सिर से पैर तक काँप रही थी...

नायक भी था, नायिका भी थी, खलनायक भी था, भाव भी था, विरह भी और कहानी का अंत अनिश्चय के धुँधलके में खोया हुआ भी था।

मैं यह प्रेम-कहानी लिखने का लोभ संवरण नहीं कर सका। लुक-छिपकर लिख ही डाली, जो कुछ मुद्दत बाद 'नीली आँखें' शीर्षक से, अमृतरायजी के संपादकत्व में 'हंस' में छपी, इसका मैंने आठ रुपये मुआवज़ा भी वसूल किया जो आज के आठ सौ रुपये से भी अधिक था।

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. चरित्र-चित्रण के कई तरीके होते हैं। 'ईदगाह' कहानी में किन-किन तरीकों का इस्तेमाल किया गया है? इस कहानी में आपको सबसे प्रभावी चरित्र किसका लगा और कहानीकार ने उसके चरित्र-चित्रण में किन तरीकों का उपयोग किया है?

2. संवाद कहानी में कई महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाता है। महत्त्व के हिसाब से क्रमवार संवाद की भूमिका का उल्लेख कीजिए–

3. नीचे दिए गए चित्रों के आधार पर चार छोटी-छोटी कहानियाँ लिखें–

अभ्यास

4. एक कहानी में कई कहानियाँ छिपी होती है। किसी कहानी को किसी खास मोड़ पर रोककर नयी स्थिति में कहानी को नया मोड़ दिया जा सकता है। नीचे दी गई परिस्थिति पर कहानी लिखने का प्रयास करें–

   सिद्धेश्वरी ने देखा कि उसका बड़ा बेटा रामचंद्र धीरे-धीरे घर की तरफ़ आ रहा है। रामचंद्र माँ को बताता है कि उसे अच्छी नौकरी मिल गई।

   आगे की कहानी आप लिखिए।

11071CH09

9
डायरी लिखने की कला

इस पाठ में...

- क्या है डायरी?
- इतिहास के आईने में डायरी
- डायरी लेखन और हम
- डायरी लेखन और स्मृतियाँ
- कुछ विचार बिंदु

किताब के दो आवरण पृष्ठों के बीच जो लेखक डालता है–वह लोक की संपदा है। जो कुछ वह खुद नहीं डालता–निजी संपदा वह है!

–गेल हैमिल्टन
अमरीकी पत्रकार

मोटे गत्ते की जिल्द वाली उस नोटबुक से आप सभी परिचित होंगे, जिसके पन्नों पर साल के 365 दिनों की तिथियाँ क्रम से सजी होती हैं और हर तिथि के साथ एक या आधे पृष्ठ की खाली जगह छोड़ी जाती है। यह खाली जगह उस तिथि विशेष के साथ संबद्ध सूचनाओं या निजी बातों को दर्ज करने के लिए होती है। मसलन, आनेवाले किसी खास दिन के लिए तयशुदा दायित्व और कार्य-योजनाएँ उसमें लिख कर छोड़ी जा सकती हैं, ताकि डायरी उस तिथि के आने पर हमें हमारे संकल्प की याद दिला दे। इसी तरह हमने कभी कोई ऐसा काम किया या किसी ऐसे अनुभव से गुज़रे, जिसे हम याद रखना चाहते हैं, तो उसे डायरी में उस तिथि विशेष के पन्ने पर दर्ज किया जा सकता है। ऐसा करके हम अपने काम या अनुभव को लिखित शब्दों के सुरक्षित ठिकाने पर पहुँचा देते हैं और सुनिश्चित करते हैं कि वह विस्मृति का शिकार न हो।

© NCERT not to be republished

सामान्यत: डायरी–लेखन की जब चर्चा होती है, तो उसका आशय डायरी के इसी दूसरे उपयोग से होता है। दिनभर आप जिन घटनाओं, गतिविधियों और विचारों से गुज़रते रहे, उन्हें डायरी के पृष्ठों पर शब्दबद्ध करना ही डायरी–लेखन है। यह लेखन मूलत: आपके अपने उपयोग एवं उपभोग के लिए होता है। हालाँकि यह भी सच है कि पिछले कुछ दशकों में ऐसा लेखन एक विधा के रूप में पाठक–समाज के बीच खासा लोकप्रिय हो चला है। पिछली सदी की सर्वाधिक पढ़ी गई पुस्तकों में से एक है ऐनी फ्रैंक नामक एक किशोरी की पुस्तकाकार छपी हुई डायरी, जो उसने 1942–44 के दरम्यान नाजी अत्याचार के बीच एम्स्टर्डम में छुप कर रहते हुए लिखी थी। यह डायरी जब प्रकाशित हुई, तो उसे एक ऐतिहासिक दस्तावेज़ के साथ–साथ एक साहित्यिक कृति के रूप में भी महत्त्वपूर्ण माना गया। यह तो महज़ एक उदाहरण है। इस तरह चर्चा में आनेवाली कई समानधर्मा कृतियाँ रही हैं। हिंदी में भी पिछले कुछ दशकों में कई बड़े रचनाकारों की डायरियाँ जैसे—मोहन राकेश की डायरी, रमेशचंद्र शाह की डायरी आदि भी किताब की शक्ल में छप चुकी हैं जिन्हें उनकी निजी ज़िंदगी तथा उनके दौर में झाँकने के एक नायाब निमंत्रण के तौर पर बड़े चाव से पढ़ा गया है। यात्रा–वृत्तांत तो काफ़ी पहले से डायरी के रूप में लिखे जाते रहे हैं। रामवृक्ष बेनीपुरी की *पैरों में पंख बाँध कर*, राहुल सांकृत्यायन की *रूस में पच्चीस मास*, सेठ गोविंददास की *सुदूर दक्षिण पूर्व*, कर्नल सज्जन सिंह की *लद्दाख यात्रा की डायरी*, डॉ. रघुवंश की *हरी घाटी* इत्यादि पुस्तकें यात्रा–डायरी ही हैं। उन्नीसवीं सदी के पाँचवे दशक में हिंदी के महान कवि और विचारक गजानन माधव मुक्तिबोध ने *एक साहित्यिक की डायरी* लिख कर साहित्यिक समस्याओं से संबंधित अपनी उधेड़बुन को उपयोगी पाठ बनाने का एक अद्भुत प्रयोग किया था। समकालीन पत्र–पत्रिकाओं में भी रचनाकारों की डायरी के अंश छपते रहते हैं, जिनमें पाठकों को अकसर उधेड़–बुन की शैली में प्रकट होनेवाले कुछ उत्तेजक विचारबिंदु, किसी यात्रा का वृत्तांत या फिर साहित्य–जगत की चटपटी खबरें पढ़ने को मिल जाती हैं।

लेकिन इन सब बातों का मतलब यह नहीं कि डायरी सचमुच कहानी, उपन्यास, कविता या नाटक की तरह पाठकों के लिए लिखी जानेवाली कुछ खास तरह की रचनाओं का विधागत नाम है। डायरी उस अर्थ में साहित्यिक विधा नहीं है, भले ही वह किसी और साहित्यिक विधा की कृति को अपना रूप उधार दे दे। मसलन, निबंध, कहानी या उपन्यास डायरी की शक्ल में लिखे जा सकते हैं, लेकिन वहाँ डायरी का सिर्फ़ 'रूप' होगा। अंतरवस्तु के लिहाज़ से उसे डायरी नहीं कहा जा सकता।

तो फिर डायरी सचमुच में क्या है? हम कह सकते हैं कि वह नितांत निजी स्तर पर घटित घटनाओं और तत्संबंधी बौद्धिक–भावनात्मक प्रतिक्रियाओं का लेखा–जोखा है। इन्हें हम किसी और के लिए नहीं, स्वयं अपने लिए शब्दबद्ध करते हैं। ऐसा अवश्य हो सकता है कि किसी समय उनकी सामाजिक–सांस्कृतिक उपयोगिता का कोई पहलू हमारे ऊपर उन्हें

ऐनी फ्रैंक (1929-1945) जर्मनी में पैदा हुई एक यहूदी लड़की थी। जर्मनी में जब नाज़ियों की सत्ता कायम हुई और यहूदियों पर अत्याचार शुरू हुए, तो वह परिवार समेत एम्स्टर्डम चली गई। फिर नीदरलैंड्स पर भी नाज़ियों का कब्ज़ा हुआ और यहूदियों पर अत्याचार का दौर वहाँ भी शुरू हो गया। ऐसी स्थिति में जुलाई, 1942 में उसका परिवार एक दफ़्तर के गुप्त कमरे में छुप कर रहने लगा, जहाँ दो साल बिताने के बाद वे नाज़ियों की पकड़ में आ गए और उन्हें यातना-कैंप में पहुँचा दिया गया। यहाँ फरवरी या मार्च 1945 में ऐनी की मृत्यु हो गई। यही नहीं, उसके पिता को छोड़ कर परिवार का कोई प्राणी जीवित नहीं बचा। द्वितीय महायुद्ध समाप्त होने पर उसके पिता वापस एम्स्टर्डम पहुँचे। वहाँ उन्होंने ऐनी की डायरी की तलाश की और संयोग से सफल रहे। ये डायरी ऐनी को उसके तेरहवें जन्मदिन पर मिली थी और जून, 1942 से अगस्त, 1944 तक वह उसमें अपनी खास-खास बातें और नाज़ी आतंक के अनुभवों को लिखती रही थी। उसके पिता ने महसूस किया कि ऐनी की डायरी इतिहास के उस भयावह दौर का एक अप्रतिम दस्तावेज़ है। उन्होंने उसे प्रकाशित करवाने की दौड़-धूप शुरू की। 1947 में मूलतः डच में लिखी गई यह डायरी अंग्रेज़ी में 'द डायरी ऑफ अ यंग गर्ल' के नाम से प्रकाशित हुई।

यह बीसवीं सदी की सर्वाधिक पढ़ी गई पुस्तकों में से है। कई जगह इसे पाठ्यक्रम में भी रखा गया है। इल्या इहरनबुर्ग ने एक वाक्य में इस पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता को रेखांकित किया है–"यह साठ लाख लोगों की तरफ़ से बोलने वाली एक आवाज़ है–एक ऐसी आवाज़, जो किसी संत या कवि की नहीं, बल्कि एक साधारण लड़की की है।"

सार्वजनिक कर देने का दबाव बनाए। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि वह सार्वजनिक किए जाने के लिए ही लिखी जाती है। शुद्ध लेखन के स्तर पर देखें, तो वह अपना ही अंतरंग साक्षात्कार है अपने ही साथ स्थापित होनेवाला संवाद है–एक ऐसा साक्षात्कार और संवाद, जिसमें हम सभी तरह की वर्जनाओं से मुक्त होते हैं। जिन बातों को हम दुनिया में किसी और व्यक्ति के सामने नहीं कह सकते, उन्हें भी डायरी के पन्नों पर शब्दबद्ध करके खुद को सुना डालते हैं। ऐसा करके हम पहले खुद को बेहतर तरीके से समझ पाते हैं, दूसरे अपने अंदर अनजाने इकट्ठा होते भार से मुक्त होते हैं और विस्मृति के अंधेरे में खोते अपने ही व्यक्तित्त्व के पहलुओं को इस तरह रिकॉर्ड कर लेते हैं कि उन्हें पलट कर कभी भी छुआ जा सकता है।

लेकिन ऐसा नहीं है कि डायरी सिर्फ़ ऐसे ही निजी सत्यों को शब्द देने का ज़रिया हो, जिनकी किसी और रूप में अभिव्यक्ति वर्जित है। वह एक तरह का व्यक्तिगत दस्तावेज़ भी है, जिसमें अपने जीवन के खास क्षणों, किसी समय विशेष में मन के अंदर कौंध जानेवाले विचारों, यादगार मुलाकातों और बहस–मुबाहिसों को हम दर्ज कर लेते हैं। अपनी कई तरह की स्मृतियों को हम कैमरे की मदद से भी रिकॉर्ड करते हैं, पर खुद अपना पाठ तैयार करना और जो कुछ घटित हुआ, उसकी कहानी कहना एक ऐसा तरीका है, जो हमें आनेवाले दिनों में उन लम्हों को दुबारा जीने का मौका देता है। आज की तेज़ रफ़्तार ज़िंदगी में यह तरीका सचमुच नायाब है। ज़िंदगी की तेज़ रफ़्तार में इस बात की आशंका हमेशा बनी रहती है कि सतही और फ़ौरी किस्म की चिंताओं के अनवरत हमलों के बीच गहरे आशय वाली घटनाओं और वैचारिक उत्तेजनाओं को हम भूल जाएँ। डायरी हमें भूलने से बचाती है। यात्राओं के दौरान डायरी लिखना तो बहुत ही उपयोगी साबित होता है। एक लंबे सफ़र का वृत्तांत अगर आप सफ़र से लौट कर लिखना चाहें, तो शायद पूरे अनुभव का दो–तिहाई हिस्सा ही बच–बचा कर शब्दों में उतर पाएगा, लेकिन अगर आपने सफ़र के दरम्यान प्रतिदिन अपनी डायरी लिखी है, तो अपने तजुर्बे को लगभग मुकम्मल तौर पर दुहरा पाना आपके लिए संभव होगा।

डायरी लिखना अपने साथ एक अच्छी दोस्ती कायम करने का बेहतरीन ज़रिया है। अगर आप भी खुद अपने साथ अच्छी दोस्ती गाँठना चाहते हैं, तो इन खास–खास बातों को ध्यान में रखें–

- डायरी या तो किसी नोटबुक में या पुराने साल की डायरी में लिखी जानी चाहिए। पुराने साल की डायरी में पहले की पड़ी हुई तिथियों की जगह अपने हाथ से तिथि डालें। यह सुझाव इसलिए दिया जा रहा है कि आप कहीं मौजूदा साल की डायरी में तिथियों के अनुसार बने हुए सीमित स्थान से अपने को बंधा हुआ न महसूस करें। ऐसा भी हो सकता है कि हम किसी दिन दो–तीन पंक्तियाँ ही लिखना चाहें और किसी दिन हमारी बात पाँच पन्नों में पूरी हो। कहा भी गया है, सभी दिन एक समान नहीं होते। ऐसे में डायरी का किसी निश्चित तिथि के साथ दिया गया सीमित स्थान हमारे लिए बंधन बन जाएगा। इसीलिए नोटबुक या पुराने साल की डायरी अधिक उपयोगी साबित हो सकती है। उसमें अपनी सुविधा के अनुसार तिथियाँ डाली जा सकती हैं और स्थान का उपयोग किया जा सकता है।
- लेखन करते हुए आप स्वयं तय करें कि आप क्या सोचते हैं और खुद को क्या कहना चाहते हैं। यह तय करते हुए आपको यथासंभव सभी तरह के बाहरी दबावों से मुक्त होना चाहिए। अपनी दिनभर की घटनाओं, मुलाकातों, खयालातों इत्यादि में से कौन–कौन सी आपको दर्ज

करने लायक लगती हैं, किन्हें आप किन-किन वजहों से भविष्य में भी याद करना चाहेंगे– यह विचार कर लेने के बाद ही उन्हें शब्दबद्ध करने की ओर बढ़ें।

- डायरी बिलकुल निजी वस्तु है और यह मान कर ही उसे लिखा जाना चाहिए कि वह किसी और के द्वारा पढ़ी नहीं जाएगी। अगर आप किसी और को पढ़वाने की बात सोच कर डायरी लिखते हैं, तो उसका आपकी लेखन-शैली, विषय-वस्तु के चयन और बातों के बेबाकपन पर पूरा असर पड़ेगा। इसलिए यह मानते हुए डायरी लिखें कि उसका पाठक आपके अलावा कोई और नहीं है।
- यह कतई ज़रूरी नहीं कि डायरी परिष्कृत और मानक भाषा-शैली में लिखी जाए। परिष्कार और मानकता का दबाव कथ्य के स्तर पर कई तरह के समझौतों के लिए आपको बाध्य कर सकता है। डायरी-लेखन में इस समझौता परस्ती के लिए कोई जगह नहीं है। डायरी का डायरीपन इसी में है कि आप जो कुछ दर्ज करना चाहते हैं और जिस तरीके से दर्ज करना चाहते हैं, करें। इस सिलसिले में भाषाई शुद्धता कितनी बरकरार रहती है और शैली-सौंदर्य कितना सध पाता है, इसकी चिंता न करें। आपके अंदर के स्वाभाविक वेग से शैली जो रूप ग्रहण करती है, वही डायरी की उचित शैली है।
- आखिरी, पर बहुत अहम बात ये कि डायरी नितांत निजी स्तर की घटनाओं और भावनाओं का लेखा-जोखा होने के साथ-साथ, आपके मन के आईने में आपके दौर का अक्स भी है। आप अपने जिन अनुभवों को वहाँ दर्ज करते हैं, उनमें आपकी नज़र से देखा-परखा गया समकालीन इतिहास किसी-न-किसी मात्रा में मौजूद रहता है। डायरी लिखते हुए अगर यह बात हमारे ज़ेहन में रहे, तो अपने काम के महत्त्व को लेकर हम अधिक आश्वस्त हो सकते हैं।

तो आइए, इन बातों को मद्देनज़र रखते हुए हम अपने रोज़ के कामों के बीच थोड़ा-सा समय डायरी लिखने के लिए, यानी खुद को अपना हालचाल बताने के लिए सुरक्षित करें!

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. निम्नलिखित में से तीन अवसरों की डायरी लिखिए–
   (क) आज आपने पहली बार नाटक में भाग लिया।
   (ख) प्रिय मित्र से झगड़ा हो गया।
   (ग) परीक्षा में आपको सर्वोत्तम अंक मिले हैं।
   (घ) परीक्षा में आप अनुत्तीर्ण हो गए हैं।
   (ङ) सड़क पर रोता हुआ 10 वर्षीय बच्चा मिला।
   (च) कोई ऐसा दिन जिसकी आप डायरी लिखना चाहते हैं।

© NCERT not to be republished

अभ्यास

2. नीचे दिए गए कथनों के सामने '✓' या '×' गलत का चिह्न लगाते हुए कारण भी दें–

(क) डायरी नितांत वैयक्तिक रचना है। ☐

(ख) डायरी स्वलेखन है इसलिए उसमें किसी घटना का एक ही पक्ष उजागर होता है। ☐

(ग) डायरी निजी अनुभूतियों के साथ-साथ समाजिक आर्थिक परिप्रेक्ष्य का भी ब्योरा प्रस्तुत करता है। ☐

(घ) डायरी अंतरंग साक्षात्कार है। ☐

(ङ) डायरी हमारी सबसे अच्छी दोस्त है। ☐

© NCERT not to be republished

10

कथा-पटकथा

पटकथा कुछ और नहीं कैमरे से फ़िल्म के परदे पर दिखाए जाने के लिए लिखी हुई कथा है।

–मनोहर श्याम जोशी

पटकथा लेखक, पत्रकार एवं साहित्यकार

इस पाठ में...

- पटकथा– स्रोत, स्वरूप और संरचना
- नाटक व फ़िल्म की पटकथा में अंतर
- पटकथा लेखन का प्रारूप
- पटकथा और कंप्यूटर

मशहूर साहित्यकार और कई कामयाब टेलीविज़न धारावाहिकों के लेखक स्वर्गीय मनोहर श्याम जोशी ने कई उपन्यासों आदि के साथ-साथ एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक लिखी जिसका शीर्षक है–*पटकथा लेखन–एक परिचय।* इसी पुस्तक के दूसरे अध्याय का शीर्षक है– 'पटकथा क्या बला है?' संभव है, शायद कुछ इसी प्रकार का विचार आपके मन में भी उठ रहा हो। तो, सबसे पहले शब्द पटकथा! ये दो शब्दों के मेल से बना है–'पट' और 'कथा'। कथा का मतलब आप सभी जानते हैं–कहानी। और पट का अर्थ होता है–परदा! अर्थात ऐसी कथा जो परदे पर दिखाई जाए। चाहे वो परदा बड़ा हो या छोटा। यानी कि सिनेमा और टेलीविज़न दोनों ही माध्यमों के लिए बनने वाली फ़िल्मों, धारावाहिकों आदि का मूल आधार पटकथा ही होती है। इसी के अनुसार निर्देशक अपनी शूटिंग की योजना बनाता है, अभिनेताओं को अपनी भूमिका की बारीकियाँ और संवादों की जानकारी मिलती है तथा

© NCERT not to be republished

कैमरे के पीछे काम करने वाले तकनीशियनों और सहायकों को अपने-अपने विभागों के लिए महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। कथानक तो इसका एक अभिन्न हिस्सा होता ही है।

किसी भी फ़िल्म यूनिट या धारावाहिक बनाने वाली कंपनी को 'पटकथा' तैयार करने के लिए, सबसे पहले जो चीज़ चाहिए होती है, वो है 'कथा'। कथा ही नहीं होगी तो पटकथा कैसे बनेगी? अब सवाल यह उठता है कि यह कथा या कहानी हमें कहाँ से मिलेगी? तो इसके कई स्रोत हो सकते हैं–हमारे स्वयं के साथ या आसपास की ज़िंदगी में घटी कोई घटना, अखबार में छपा कोई समाचार, हमारी कल्पनाशक्ति से उपजी कोई कहानी, इतिहास के पन्नों से झाँकता कोई व्यक्तित्व या सच्चा किस्सा अथवा साहित्य की किसी अन्य विधा की कोई रचना। मशहूर उपन्यासों-कहानियों पर फ़िल्म या सीरियल बनाने की परंपरा काफ़ी पुरानी है। अभी कुछ वर्ष पूर्व ही शरत्‌चंद्र चट्टोपाध्याय के प्रसिद्ध उपन्यास *देवदास* को हिंदी में तीसरी बार फ़िल्माया गया। इसके अलावा भी हिंदी के कई जाने-माने लेखकों–मुंशी प्रेमचंद, फणीश्वरनाथ रेणु, धर्मवीर भारती, मन्नू भंडारी आदि की तमाम रचनाओं को समय-समय पर रुपहले परदे पर उतारा गया है। दूरदर्शन तो अकसर ही साहित्यिक-रचनाओं को आधार बना कर धारावाहिक, टेलीफ़िल्मों आदि का निर्माण करवाता रहता है। अमेरिका-यूरोप में तो ज़्यादातर कामयाब उपन्यास और नाटक फ़िल्म का विषय बन जाते हैं।

इस तरीके से आपके विषय की समस्या तो हल हुई, अब मसला उठता है पटकथा लिखने का। इसमें हम सबसे पहले देखेंगे कि पटकथा की संरचना या ढाँचा किस तरह तैयार होता है? फ़िल्म या टी.वी. की पटकथा की संरचना नाटक की संरचना से बहुत मिलती है। अंग्रेज़ी में तो इसे कहते ही 'स्क्रीनप्ले' हैं। नाटक की तरह ही यहाँ भी पात्र-चरित्र होते हैं, नायक-प्रतिनायक होते हैं, अलग-अलग घटनास्थल होते हैं, दृश्य होते हैं, कहानी का क्रमिक विकास होता है, द्वंद्व-टकराहट और फिर समाधान। ये सब कुछ पटकथा के भी आवश्यक अंग होते हैं। मंच के नाटक और फ़िल्म की पटकथा में कुछ मूलभूत अंतर भी होते हैं। पहली चीज़ है दृश्य की लंबाई, नाटक के दृश्य अकसर अधिक लंबे होते हैं और फ़िल्मों में छोटे-छोटे। इसी प्रकार नाटक में आमतौर पर सीमित घटनास्थल होते हैं, जबकि फ़िल्म में इसकी कोई सीमा नहीं, हर दृश्य किसी नए स्थान पर घटित हो सकता है। इसकी वजह है दोनों माध्यमों में मूलभूत अंतर–नाटक एक सजीव कला माध्यम है, जहाँ अभिनेता अपने ही जैसे जीवंत दर्शकों के सामने, अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। सब कुछ वहीं, उसी वक्त घट रहा होता है। जबकि सिनेमा या टेलीविज़न में पूर्व रिकॉर्डेड छवियाँ एवं ध्वनियाँ होती हैं। नाटक का पूरा कार्य-व्यापार एक ही मंच पर घटित होता है एक निश्चित अवधि के दौरान। जबकि फ़िल्म या टेलीविज़न की शूटिंग अलग-अलग सेटों या लोकेशनों पर दो दिन से लेकर दो साल तक की अवधि में की जा सकती है इसीलिए नाटक का कार्य-व्यापार, दृश्यों की संरचना और चरित्रों की संख्या आदि को सीमित रखना पड़ता है, लेकिन सिनेमा या टेलीविज़न में ऐसा कोई बंधन नहीं होता। सबसे बड़ी बात नाटक की कथा का विकास 'लीनियर' मतलब एक-रेखीय होता है, जो एक ही दिशा में आगे बढ़ता है। जबकि सिनेमा में फ़्लैशबैक या फ़्लैश फ़ॉरवर्ड तकनीकों का इस्तेमाल करके आप घटनाक्रम को किसी भी रूप

में प्रस्तुत कर सकते हैं। फ़्लैशबैक वो तकनीक होती है, जिसमें आप अतीत में घटी किसी घटना को दिखाते हैं और फ़्लैश फ़ॉरवर्ड में आप भविष्य में होने वाले किसी हादसे को पहले दिखा देते हैं। इन दोनों तकनीकों को हम एक-एक उदाहरण से समझने की कोशिश करते हैं। मान लीजिए हम रांगेय-राघव की कहानी गूँगे पर फ़िल्म बना रहे हैं, और हमारी फ़िल्म शुरू होती है सड़क के दृश्य से (जहाँ कुछ किशोर लड़के मिलकर एक दुबले-पतले लड़के को पीट रहे हैं। मार खा रहा लड़का भाग कर एक घर के दरवाज़े पर पहुँचता है। घर के भीतर से भाग कर चमेली आती है, उसके साथ उसके छोटे-छोटे बच्चे शकुंतला और बसंता भी हैं। चमेली घर की दहलीज़ पर सर रखे, खून से लथपथ गूँगे को देखती है, जो अपनी व्यथा को व्यक्त करने में असमर्थ है। और चमेली को वो दिन याद आता है, जिस दिन अनाथालय में पहली बार उसकी मुलाकात गूँगे से हुई थी। अब हम पागलखाने का वो दृश्य दिखाते हैं, जहाँ कुछ दिन पहले चमेली अपनी सहेलियों के साथ गई थी और जहाँ पहली बार उसकी गूँगे से मुलाकात हुई थी।) यही, वर्तमान से अतीत में जाना, फ़्लैशबैक की तकनीक कहलाता है। फ़्लैश फ़ॉरवर्ड समझने के लिए हम मोहन राकेश के नाटक *अंडे के छिलके* का वो दृश्य लेते हैं जहाँ श्याम के बाज़ार जाने के बाद वीना घर ठीक-ठाक कर रही है और उसे वो मोज़ा मिलता है जिसमें अंडे के छिलके भरे हुए हैं। वैसे मूल नाटक में यह दृश्य इस प्रकार नहीं है लेकिन अगर इसकी पटकथा लिखी जाए और हम इस दृश्य में फ़्लैश फ़ॉरवर्ड तकनीक का प्रयोग करें तो दृश्य कुछ इस तरह से बनाया जा सकता है कि अचानक वीना के मन में यह विचार कौंधता है कि ये मोज़े उसकी सास जमुना देवी के हाथों लग गए हैं (वो पूरे परिवार तथा पड़ोसियों के सामने मोज़ों में से अंडे के छिलके ज़मीन पर गिरा कर उसे बुरा-भला कह रही हैं। हम वापस वर्तमान में आते हैं और वीना अपना संवाद पूरा करती है–"कितनी बार कहा छिलके मोज़े में मत रखा करो, कहीं किसी के हाथ लग गए, तो लेने के देने पड़ जाएँगे।" और चाय का पानी हीटर पर रखने के लिए चली जाती है।)

यहाँ एक तथ्य गौर करने लायक है, वो यह कि फ़्लैशबैक और फ़्लैश फ़ॉरवर्ड दोनों ही युक्तियों का इस्तेमाल करने के पश्चात हमें वापस वर्तमान में आना ज़रूरी है। ताकि दर्शकों के मन में किसी किस्म का असमंजस न रहे। फ़िल्म या टेलीविज़न माध्यम में एक सुविधा यह भी है कि एक ही समय-खंड में अलग-अलग स्थानों पर क्या घटित हो रहा है, दिखाया जा सकता है। मसलन, हम दिखाते हैं हमारा कम पढ़ा-लिखा नायक, गाँव में नदी में डूबते एक बच्चे की जान बचाता है, ठीक उसी समय हज़ारों मील दूर किसी महानगर में रहने वाला हमारा नायक अपनी बेशकीमती विदेशी कार से एक बूढ़े फेरीवाले को टक्कर मार देता है। कालांतर में दोनों नायकों की मुलाकात देश की राजधानी में होती है, नायक न. 1 अब बहुत बड़ा मज़दूर नेता बन गया है और नायक न. 2 एक कामयाब उद्योगपति। मतलब ये कि इन दोनों व्यक्तियों का यहाँ तक का सफ़र हम एक साथ दिखा सकते हैं या अगर हम अंडे के छिलके का ही उदाहरण लें, (तो जिस समय वीना अंडा फ्राइंगपैन में डाल कर हलुआ बनाना शुरू करती है, उसी समय हम दिखा सकते हैं, घर के बाहर जमुना देवी रिक्शे से उतर कर उसे पैसे दे रही हैं। हम फिर दिखाते हैं, वीना का हलुआ लगभग बन गया है। उधर जमुना देवी घर के अंदर

घुस रही हैं, फिर हलुआ, फिर जमुना देवी, वगैरह–वगैरह।) इसी तरह की युक्ति कई बार पटकथा में नाटकीय तनाव बढ़ाने में काफ़ी मददगार होती है।

पटकथा की मूल इकाई होती है दृश्य। एक स्थान पर, एक ही समय में लगातार चल रहे कार्य व्यापार के आधार पर एक दृश्य निर्मित होता है। इन तीनों में से किसी भी एक के बदलने से दृश्य भी बदल जाता है। हम आपके पाठ्यक्रम में से रजनी का ही उदाहरण लेते हैं दृश्य–एक लीला बेन नामक महिला के फ़्लैट में शुरू होता है, समय शायद दोपहर का, क्योंकि उनका बेटा अमित स्कूल से वापस आने वाला है। दृश्य–दो अगले दिन, अमित के स्कूल के हैडमास्टर के कमरे में और वक्त फिर दिन का ही है। दृश्य–तीन उसी दिन, रजनी का फ़्लैट और वक्त है शाम का। ये सारे अलग–अलग लोकेशंस पर अलग–अलग दृश्य हैं।

मान लीजिए। पहले दृश्य में हम यह दिखाते कि रजनी और लीला बेन बातें करते–करते रसोईघर में चले जाते तो बावजूद इसके कि समय, कार्य–व्यापार, चरित्र सब एक ही हैं फिर भी दृश्य संख्या बदल जाती है क्यों? क्योंकि घटनास्थल बदल गया है। चलिए अब हम उस दृश्य को देखते हैं जहाँ रजनी अगर डायरेक्टर ऑफ़ एजुकेशन के कमरे के बाहर बैठी अपनी बारी आने की प्रतीक्षा कर रही है। अब मान लीजिए रजनी को 15–20 मिनट इंतज़ार करना पड़ता है इतनी देर का दृश्य सिर्फ़ रजनी के बैठे रहने का दिखाएँगे तो दर्शक बोर हो जाएँगे। अतः इस दृश्य की पटकथा कुछ इस प्रकार लिखी जाएगी–

दृश्य–चार

शिक्षा अधिकारी का दफ़्तर (बाहरी कक्ष)/दिन/अंदर

(शिक्षा अधिकारी के कमरे के बाहर उसके नाम और पद की तख्ती लगी है, उसी के साथ मुलाकात का समय भी लिखा है। एक स्टूल पर चपरासी बैठा है। सामने की बेंच पर रजनी और तीन–चार लोग और बैठे हैं–प्रतीक्षारत। रजनी के चेहरे से बेचैनी टपक रही है। बार–बार अपनी कलाई में बँधी घड़ी देखती है, मिलने का समय समाप्त होता जा रहा है।)

रजनी : *(चपरासी से) कितनी देर और बैठना होगा?*

चपरासी : *हम क्या बोलेगा ...जब साहब घंटी मारेगा, ...बुलाएगा तभी तो ले जाएगा। बहुत बिज़ी रहता न साहब।*

रजनी : *(अपने में ही भुनभुनाते हुए) यह तो लोगों से मिलने का समय है, न जाने किसमें बिज़ी बनकर बैठ जाते हैं।*

(चपरासी दूसरी तरफ़ देखने लगता है।)

कट टू

दृश्य–पाँच

शिक्षा अधिकारी का दफ़्तर (बाहरी कक्ष)/दिन/अंदर

(कैमरा ऑफ़िस के अंदर चला जाता है। साहब मेज़ पर पेपरवेट घुमा रहा है। फिर घड़ी देखता है, फिर घुमाने लगता है।)

कट टू

© NCERT not to be republished

दृश्य–छह

शिक्षा अधिकारी का दफ़्तर (बाहरी कक्ष)/दिन/अंदर

(वही बाहर वाली जगह, एक आदमी आता है। अपने नाम की स्लिप के नीचे पाँच रुपये का एक नोट रखकर देता है और चपरासी का कंधा थपथपाता है। चपरासी हँसकर भीतर जाता है। लौटकर उस आदमी को अंदर जाने का इशारा करता है। रजनी के चेहरे पर तनाव।)

(डिज़ॉल्व टू)

दृश्य–छह क

वही जगह/कुछ देर बाद

(रजनी अभी भी चपरासी को घूर कर देख रही है, जो मज़े से अपने स्टूल पर बैठा है। पिछले दृश्य में जो व्यक्ति घूस देकर भीतर गया था। वह अधिकारी के कमरे से बाहर निकलता है, मुसकराता हुआ जाता है। रजनी उठकर दनदनाती भीतर जाने लगती है।)

चपरासी! अरे-अरे... अरे! किधर कू जाता? अभी घंटी बजी क्या?

रजनी: *घंटी तो मिलने का समय खत्म होने तक बजेगी भी नहीं। (दरवाज़ा धकेल कर भीतर चली जाती है।)*

चपरासी: *अरे! कैसी औरत है... सुनतीच नई!*

(वहाँ बैठे दो-तीन लोग हँसने लगते हैं।)

कट टू

दृश्य–सात

शिक्षा अधिकारी का दफ़्तर (बाहरी कक्ष)/दिन/अंदर

(दृश्य–पाँच वाला कमरा, निदेशक कुर्सी की पीठ से टिककर सिगरेट पी रहे हैं। रजनी को देखकर आश्चर्य से!)

इसी तरह कथानक को दृश्यों में बदलने का क्रम आगे बढ़ता जाएगा। यहाँ पर गौर करने लायक दो तरह की बातें हैं। पहली तो ये कि हमने किन आधारों पर दृश्य का बँटवारा किया। दृश्य संख्या–चार, पाँच, छह के कार्य व्यापार में निरंतरता है, लेकिन घटनास्थल में दो अलग–अलग दृश्य। इसी प्रकार दृश्य–छह और छह क का घटनास्थल एक ही है, लेकिन दोनों दृश्यों के बीच लगभग पाँच–दस मिनट का फ़ासला है, इसीलिए दो भिन्न दृश्य संख्या।

दूसरी गौर करने लायक बात है, पटकथा लिखने का विशिष्ट ढंग। हमेशा दृश्य संख्या के साथ दृश्य की लोकेशन या घटनास्थल लिखा जाता है–वो कमरा है, पार्क है, रेलवेस्टेशन है या शेर की माँद। उसके बाद लिखा जाता है घटना का समय–दिन/रात/सुबह/शाम। तीसरी जानकारी जो दृश्य के शुरू में दी जानी ज़रूरी होती है वो ये कि घटना खुले में घट रही है या किसी बंद जगह में, अंदर या बाहर? आमतौर पर ये सूचनाएँ अंग्रेज़ी में लिखी जाती हैं और अंदर या बाहर के लिए अंग्रेज़ी शब्दों इंटीरियर या एक्सटीरियर के तीन शुरुआती अक्षरों का इस्तेमाल किया जाता है, मतलब INT. या EXT.

ये पटकथा लिखने का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत प्रारूप है। सिनेमा या टेलीविज़न के कार्यक्रमों के निर्माण में कई टेक्निकल चीज़ों का सहारा लेना पड़ता है। पटकथा के शुरू में दिए गए संकेत फ़िल्म या टी.वी. के कार्यक्रम के निर्देशक, कैमरामैन, साउंडरिकॉर्डिस्ट, आर्ट डायरेक्टर, प्रोडक्शन मैनेजर तथा उनके सहायकों की अपने-अपने काम में काफ़ी मदद करते हैं। इसी प्रकार दृश्य के अंत में कट टू, डिज़ॉल्व टू, फ़ेड आउट आदि जैसी जानकारी निर्देशक व एडीटर को उनके काम में सहायता पहुँचाती है।

अब तो खैर! कंप्यूटर पर ऐसे सॉफ़्टवेयर आ गए हैं, जिनमें पटकथा लेखन का प्रारूप बना बनाया होता है, साथ ही साथ वो आपको ये बताने में भी सक्षम होते हैं कि आपकी पटकथा में कहाँ-कहाँ पर गड़बड़ रही है। अकसर उसे सुधारने के सुझाव भी आपको ये सॉफ़्टवेयर दे सकते हैं, उसे स्वीकार करना न करना आपकी सूझबूझ और इच्छा पर निर्भर करता है।

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. फ़्लैशबैक तकनीक और फ़्लैश फ़ॉरवर्ड तकनीक के दो-दो उदाहारण दीजिए। आपने कई फ़िल्में देखी होंगी। अपनी देखी किसी एक फ़िल्म को ध्यान में रखते हुए बताइए कि उनमें दृश्यों का बँटवारा किन आधारों पर किया गया।

2. पटकथा लिखते समय किन-किन बातों का ध्यान रखना ज़रूरी है और क्यों?

© NCERT not to be republished

11

कैसे करें कहानी का नाट्य रूपांतरण

इस पाठ में...

- कहानी और नाटक का संबंध
- कैसे बनाएँ कहानी को नाटक
- नाट्य रूपांतरण की चुनौतियाँ

न ठेठ हिंदी, न खालिस उर्दू
ज़बान गोया मिली-जुली हो
अलग रहे दूध से न मिश्री
डली-डली दूध में घुली हो।

-नारायण प्रसाद बेताब

पारसी थिएटर के मशहूर नाटककार

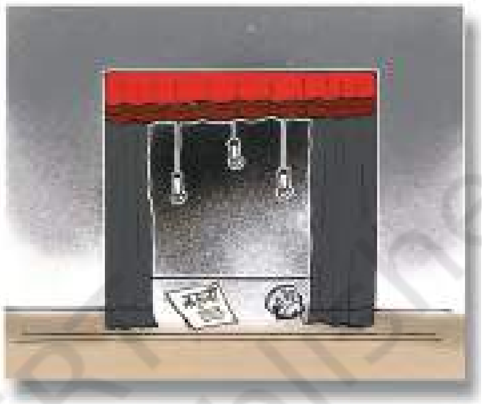

प्रत्येक कथा साहित्य में मूलतः एक कहानी होती है भाषा भी एक जैसी होती है फिर विधाओं का स्वरूप अलग-अलग क्यों? वे कौन-से तत्त्व हैं जो इन विधाओं के अलग-अलग स्वरूप को निर्धारित करते हैं। क्या विधा बदलने से काव्य प्रभाव और आस्वाद में भी बदलाव आता है?

साहित्य की अलग-अलग विधाओं का अलग-अलग स्वरूप होता है। न केवल उनकी रचना प्रक्रिया अलग होती है बल्कि उनके तत्त्व भी अलग होते हैं। भाषा का प्रयोग भी विधा बदल जाने पर परिवर्तित हो जाता है। इसके साथ-साथ यह तथ्य भी महत्त्वपूर्ण है कि साहित्यिक विधाओं का स्वरूप, समय और आवश्यकता के अनुसार बदलता रहता है। विधाओं में आदान-प्रदान की प्रक्रिया चलती रहती है।

कहानी का नाटक में रूपांतरण करने के लिए सबसे पहले कहानी और नाटक में वैविध्य तथा समानताओं को समझना आवश्यक

© NCERT not to be republished

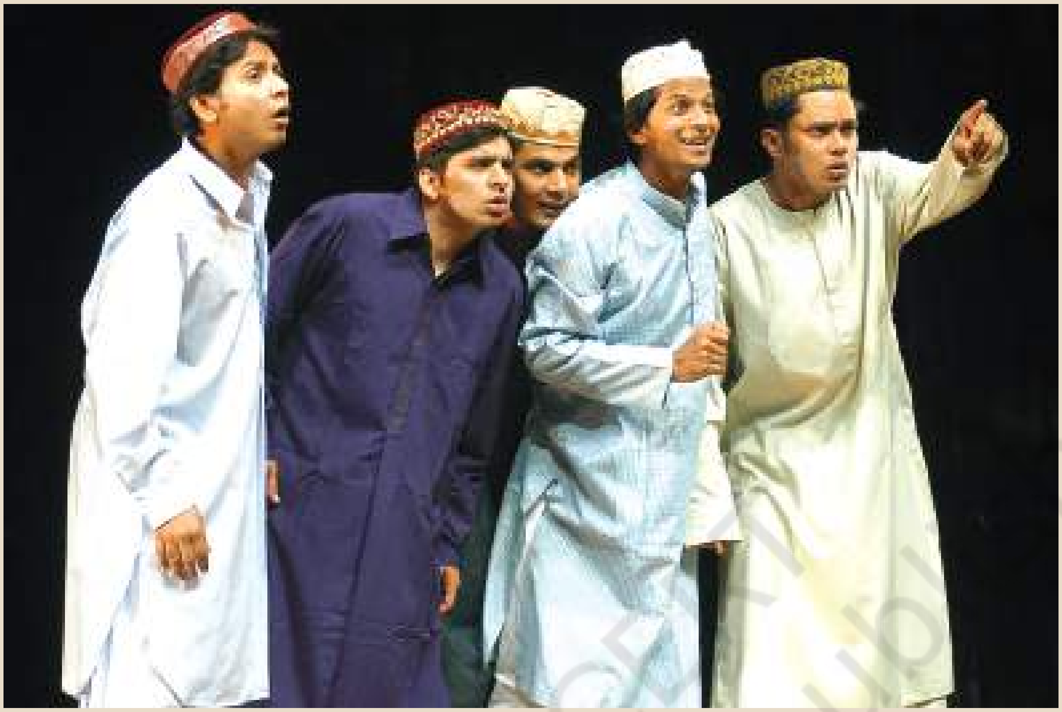

ईदगाह के नाट्य रूपांतरण का एक दृश्य

है। इसके लिए हमें नाटक की विशेषताओं को समझना होगा। जहाँ कहानी का संबंध लेखक और पाठक से जुड़ता है वहीं नाटक लेखक, निर्देशक, पात्र, दर्शक, श्रोता एवं अन्य लोगों को एक-दूसरे से जोड़ता है। चूँकि दृश्य का स्मृतियों से गहरा संबंध होता है इसलिए नाटक एवं फ़िल्म को लोग देर तक याद रखते हैं। यही कारण है कि *गोदान, देवदास, उसने कहा था, सद्गति* आदि के नाट्य रूपांतरण कई बार हुए हैं और कई तरह से हुए हैं।

कहानी कही जाती है या पढ़ी जाती है। नाटक मंच पर प्रस्तुत किया जाता है। नाटक को मंच पर अभिनेता अभिनय द्वारा प्रस्तुत करते हैं। मंच सज्जा होती है, संगीत होता है, प्रकाश व्यवस्था होती है। समानता यह होती है कि कहानी और नाटक दोनों में एक कहानी होती है, पात्र होते हैं, परिवेश होता है, कहानी का क्रमिक विकास होता है, संवाद होते हैं, द्वंद्व होता है, चरम उत्कर्ष होता है। इस तरह हम देखते हैं कि नाटक और कहानी की आत्मा के कुछ मूल तत्त्व एक ही हैं। यह अवश्य है कि कुछ मूल तत्त्व जैसे द्वंद्व नाटक में जितना और जिस मात्रा में आवश्यक है उतना संभवत: कहानी में नहीं है।

कहानी को नाटक में रूपांतरित करने के लिए सबसे पहले कहानी की विस्तृत कथावस्तु को समय और स्थान के आधार पर विभाजित किया जाता है। हम जानते हैं कि कथावस्तु उन घटनाओं का लेखा-जोखा है जो कहानी में घटती है। हम यह भी जानते हैं कि प्रत्येक घटना किसी स्थान पर किसी समय में घटती है। ऐसा भी संभव है कि घटना स्थान तथा समयविहीन हो। कहानी की

कुछ प्रसिद्ध कहानियाँ जिनका सफलतापूर्वक नाट्य रूपांतरण हुआ है–

- चीफ़ की दावत – भीष्म साहनी
- टोबा टेक सिंह – मंटो
- डिप्टी कलेक्टरी – अमरकांत
- दुविधा – विजयदान देथा
- कफ़न – प्रेमचंद
- बड़े भाई साहब – प्रेमचंद
- मोटेराम शास्त्री – प्रेमचंद
- ईदगाह – प्रेमचंद
- रुपया तुम्हें खा गया – भगवती चरण वर्मा
- वारेन हेस्टिंग्स का साँढ़ – उदय प्रकाश
- और अंत में प्रार्थना – उदय प्रकाश
- मोहनदास – उदय प्रकाश
- धूप का टुकड़ा, डेढ़ इंच ऊपर, वीक एंड (तीन एकांत नाम से प्रकाशित) – निर्मल वर्मा

कथावस्तु (कथानक) को सामने रखकर एक-एक घटना को चुन-चुनकर निकाला जाता है और उसके आधार पर दृश्य बनता है। तात्पर्य यह कि यदि एक घटना एक स्थान और एक समय में घट रही है तो वह एक दृश्य होगा। *ईदगाह* कहानी के संदर्भ में देखें तो इसके आरंभ में लेखक ने मेले को लेकर बच्चों के उतावलेपन और कुतूहल का लंबा मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है इसके लिए पहले दृश्य में गाँव के उस हिस्से को फ़ोकस कर सकते हैं, जहाँ बच्चे भाग-दौड़ कर रहे हैं, तैयार हो रहे हैं, बार-बार अपने पैसे गिन रहे हैं और टोली के निकलने की राह देख रहे हैं। पहले दृश्य का अंतिम हिस्सा हामिद और उसकी दादी अमीना पर केंद्रित हो सकता है और उनके संवाद दिए जा सकते हैं।

स्थान और समय के आधार पर कहानी का विभाजन करके दृश्यों को लिखा जा सकता है। यह देखना आवश्यक है कि प्रत्येक दृश्य का कथानक के अनुसार औचित्य हो। मतलब यह कि प्रत्येक दृश्य क्या कथानक का हिस्सा है? क्या उसे निकाल दिया जाए तो कथानक और उसके विकास पर कोई फ़र्क पड़ेगा? ऐसे दृश्य नहीं हो सकते जो अनावश्यक हों। ये नाटक की गति को बाधित करेंगे और नाटक उबाऊ हो जाएगा। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक दृश्य का कथानुसार तार्किक विकास हो रहा है या नहीं। यह सुनिश्चित करने के लिए दृश्य विशेष के उद्देश्य और उसकी संरचना पर विचार आवश्यक है। प्रत्येक दृश्य एक बिंदु से प्रारंभ होता है। कथानुसार अपनी आवश्यकताएँ पूरी करता है और उसका ऐसा अंत होता है जो उसे अगले दृश्य से जोड़ता है। इसलिए दृश्य का पूरा विवरण तैयार किया जाना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि दृश्य में कोई आवश्यक जानकारी छूट जाए या उसका क्रम बिगड़ जाए। इस प्रकार हम देखते हैं कि नाटक ही में नहीं बल्कि नाटक के प्रत्येक दृश्य में प्रारंभ, मध्य और अंत होता है। दृश्य कई काम एक साथ करता है। एक ओर वह कथानक को आगे बढ़ाता है तो दूसरी ओर पात्रों और परिवेश को संवादों के माध्यम से स्थापित करता है। इसके साथ-साथ दृश्य अगले दृश्य के लिए भूमिका भी तैयार करता है।

गतिविधि

- *परिवेश या परिस्थितियों पर इस पाठ में की गई टिप्पणी को आप नाटक में कैसे शामिल करेंगे?*
- *क्या कहानी में ऐसे कुछ और भी तत्त्व हो सकते हैं जिनको नाटक मे ढालना मुश्किल होता है? सहपाठियों एवं शिक्षकों की मदद से ऐसे तत्त्वों पर विचार करें।*

ऐसा हो सकता है कि कुछ ऐसे दृश्य बनते हों जिनमें लेखक ने केवल विवरण दिया हो और उसमें कोई संवाद न हो। ऐसे दृश्यों का भी पूरा खाका तैयार कर लेना चाहिए। यह अवश्य देखना चाहिए कि जानकारियाँ, सूचनाएँ और घटनाएँ दोहराई न गई हों।

रामायण कथा का नाट्य रूपांतरण

दृश्य निर्धारित करने के बाद दृश्यों और मूल कहानी को पढ़ने से यह अनुमान लग सकता है कि मूल कहानी में ऐसा क्या है जो दृश्यों में नहीं आया है। लेखक द्वारा परिवेश का विवरण या परिस्थितियों पर टिप्पणियाँ प्रायः दृश्यों में नहीं ढल पातीं। यह देखना आवश्यक है कि परिस्थिति, परिवेश, पात्र, कथानक से संबंधित विवरणात्मक टिप्पणियाँ किस प्रकार की हैं। विभिन्न प्रकार के विवरणों को नाटक में स्थान देने के अलग-अलग तरीके हैं। उदाहरण के लिए विवरणात्मक टिप्पणी यदि परिवेश के बारे में है तो उसे मंच सज्जा के अंतर्गत लिया जा सकता है या पार्श्व संगीत के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है। विवरण यदि पात्रों के बारे में है तो उन्हें संवादों के माध्यम से निर्धारित दृश्यों में उचित स्थान पर दिया जा सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि कहानी में व्यक्त महत्त्वपूर्ण सूत्र नाटक के स्वरूप के अनुसार अपनी जगह निर्धारित कर लेते हैं।

दृश्य निर्धारित हो जाने पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि दृश्य की सभी आवश्यकताओं को पूरा करने वाले तथा दृश्य के क्रमिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त संवाद हैं या नहीं। यदि पर्याप्त संवाद नहीं हैं तो उन्हें लिखने का काम किया जाता है। सबसे पहली और महत्त्वपूर्ण शर्त यह है कि नए लिखे संवाद, कहानी के मूल संवादों के साथ मेल खाते हों। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह कि उनके लिखे जाने का सौ प्रतिशत औचित्य हो। तीसरी बात जो ध्यान में रहे वह यह है कि संवाद छोटे, प्रभावशाली और बोलचाल की भाषा में हों। कहानी में छपे लंबे संवाद को पाठक पढ़ सकता है लेकिन मंच पर बोले गए लंबे संवाद से तारतम्य बनाए रख पाना कठिन होता है।

कहानी में चरित्र-चित्रण अलग प्रकार से किया जाता है और नाटक में उसकी विधि कुछ बदल जाती है। रूपांतरण करते समय कहानी के पात्रों की दृश्यात्मकता और नाटक के पात्रों में उसका प्रयोग किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए प्रेमचंद ने *ईदगाह* में मेले में जाते हामिद के कपड़ों का ज़िक्र नहीं किया है और न ही अन्य लड़कों के बारे में कुछ लिखा है परंतु कहानी से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि हामिद नंगे पैर होगा, उसके कुर्ते में पैबंद लगे होंगे जबकि अन्य लड़कों के कपड़े उनकी अच्छी आर्थिक स्थिति के सूचक होंगे। संवाद को नाटक में प्रभावशाली बनाने का अगला तरीका अभिनय है जो प्रायः निर्देशक का काम है, पर लेखक भी इस ओर संकेत कर सकता है। पात्र की भावभंगिमाओं और उसके तौरतरीकों (मैनरिज़्म) से प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है। कहानी के लंबे संवादों को छोटा करके उन्हें अधिक नाटकीय बनाया जा सकता है। स्थानीय रंग में संवादों को रंग कर चरित्र-चित्रण को परिमार्जित किया जा सकता है।

ध्वनि और प्रकाश भी चरित्र-चित्रण करने तथा संवेदनात्मक प्रभाव उत्पन्न करने में कारगर सिद्ध हो सकते हैं। प्राय: निर्देशक ही इस संबंध में निर्णय लेते हैं पर लेखकों के सुझाव सदा स्वागत योग्य होते हैं। लेखक को यदि इन संभावनाओं की जानकारी है तो उसके अंदर आत्मविश्वास पैदा होता है और रूपांतरण का कार्य संतोषजनक होता है।

रूपांतरण में एक समस्या पात्रों के मनोभावों को कहानीकार द्वारा विवरण के रूप में व्यक्त प्रसंगों या मानसिक द्वंद्व के दृश्यों की नाटकीय प्रस्तुति में आ सकती है। उदाहरण के लिए ईदगाह का वह हिस्सा जहाँ हामिद इस द्वंद्व में है कि क्या-क्या खरीदे या जहाँ वह यह सोचता है कि अम्मा का हाथ जल जाता है, उसका रूपांतरण कठिन है। रूपांतरण में इस तरह के विवरण प्रस्तुत करने के लिए स्वगत कथन का प्रयोग किया जाता है जिसमें लेखक मंच के कोने में जाकर अपने आपसे यह संवाद बोलता है। लेकिन आजकल 'वायस ओवर' अर्थात ऐसी ध्वनि जो दर्शकों को सुनाई देती है पर पात्र नहीं बोलता के माध्यम से संभव है। अम्मा वाले अंश के लिए फ़्लैशबैक शैली का उपयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार हामिद की ललचाई आँखों, होठों पर जीभ फेरते और बाद में भारी कदमों से दुकान से दूर जाने का दृश्य बनाया जा सकता है।

कहानी का नाट्य रूपांतरण करने से पहले यह जानकारी होना आवश्यक है कि वर्तमान रंगमंच में क्या संभावनाएँ हैं। यह तभी संभव है जब अच्छे नाटक देखे जाएँ। इसलिए रूपांतरण का पहला पाठ यही हो सकता है कि अच्छी नाट्य प्रस्तुतियाँ देखी जाएँ।

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. कहानी और नाटक में क्या-क्या समानताएँ होती हैं?

2. स्थान और समय को ध्यान में रखते हुए *दोपहर का भोजन* कहानी को विभिन्न दृश्यों में विभाजित करें। किसी एक दृश्य का संवाद भी लिखें।

3. कहानी के नाट्य रूपांतरण में संवादों का विशेष महत्त्व होता है। नीचे *ईदगाह* कहानी से संबंधित कुछ चित्र दिए जा रहे हैं। इन्हें देखकर संवाद लिखें–

12
कैसे बनता है रेडियो नाटक

11071CH12

इस पाठ में...

- रेडियो नाटक की परंपरा
- सिनेमा, रंगमंच और रेडियो नाटक, समानता और अंतर
- रेडियो नाटक में ध्वनि संकेतों की महत्ता
- रेडियो नाटक की अवधि और पात्र

यह एक कष्टदायक सचाई है कि एक स्वतंत्र साहित्यिक विधा के रूप में रेडियो नाटक हिंदी में अभी तक कोई जगह नहीं बना पाया है।

–नेमिचंद जैन

मशहूर रंगकर्मी एवं साहित्यकार

आज से कुछ दशक पहले एक ज़माना ऐसा भी था, जब दुनिया में न टेलीविज़न था, न कंप्यूटर। सिनेमा हॉल और थिएटर थे तो, लेकिन उनकी संख्या आज के मुकाबले काफ़ी कम होती थी और एक आदमी के लिए वे आसानी से उपलब्ध भी नहीं थे। ऐसे समय में घर में बैठे मनोरंजन का जो सबसे सस्ता और सहजता से प्राप्त साधन था, वो था–रेडियो। रेडियो पर खबरें आती थीं, ज्ञानवर्धक कार्यक्रम आते थे, खेलों का आँखों देखा हाल प्रसारित होता था, एफ़.एम. चैनलों की तरह गीत-संगीत की भरमार रहती थी। टी.वी. धारावाहिकों और टेलीफ़िल्मों की कमी को पूरा करते थे, रेडियो पर आने वाले नाटक।

हिंदी साहित्य के तमाम बड़े नाम, साहित्य रचना के साथ-साथ रेडियो स्टेशनों के लिए नाटक भी लिखते थे। उस समय ये

© NCERT not to be republished

- *नाट्य आंदोलन के विकास में रेडियो नाटक की अहम भूमिका रही है।*
- *सिनेमा और रंगमंच की तरह रेडियो एक दृश्य माध्यम नहीं, श्रव्य माध्यम है।*
- *रेडियो की प्रस्तुति संवादों और ध्वनि प्रभावों के माध्यम से होती है।*
- *फ़िल्म की तरह रेडियो में एक्शन की गुंजाइश नहीं होती।*
- *चूँकि रेडियो नाटक की अवधि सीमित होती है इसलिए पात्रों की संख्या भी सीमित होती है क्योंकि सिर्फ़ आवाज़ के सहारे पात्रों को याद रख पाना मुश्किल होता है।*
- *पात्र संबंधी विविध जानकारी संवाद एवं ध्वनि संकेतों से उजागर होती है।*

बड़े सम्मान की बात मानी जाती थी। हिंदी व अन्य भारतीय भाषाओं के नाट्य आंदोलन के विकास में रेडियो नाटक की अहम भूमिका रही है। हिंदी के कई नाटक जो बाद में मंच पर भी बेहद कामयाब रहे, मूलतः रेडियो के लिए लिखे गए थे। धर्मवीर भारती कृत *अंधा युग* और मोहन राकेश का *आषाढ़ का एक दिन* इसके श्रेष्ठ उदाहरण हैं। लेकिन फिलहाल हम इस पर ध्यान देंगे कि रेडियो नाटक लिखे कैसे जाते हैं?

सिनेमा और रंगमंच की तरह रेडियो नाटक में भी चरित्र होते हैं उन चरित्रों के आपसी संवाद होते हैं और इन्हीं संवादों के ज़रिये आगे बढ़ती है कहानी। बस सिनेमा और रंगमंच की तरह रेडियो नाटक में विजुअल्स अर्थात दृश्य नहीं होते।

यही सबसे बड़ा अंतर है, रेडियो नाटक तथा सिनेमा या रंगमंच के माध्यम में। रेडियो पूरी तरह से श्रव्य माध्यम है इसीलिए रेडियो नाटक का लेखन सिनेमा व रंगमंच के लेखन से थोड़ा भिन्न भी है और थोड़ा मुश्किल भी। आपको सब कुछ संवादों और ध्वनि प्रभावों के माध्यम से संप्रेषित करना होता है। यहाँ आपकी सहायता के लिए न मंच सज्जा तथा वस्त्र सज्जा है और न ही अभिनेता के चेहरे की भाव-भंगिमाएँ। वरना बाकी सब कुछ वैसा ही है। एक कहानी, कहानी का वही ढाँचा, शुरुआत-मध्य-अंत, इसे यूँ भी कह सकते हैं, परिचय-द्वंद्व-समाधान। बस ये सब होगा आवाज़ के माध्यम से। कहानी की विस्तृत जानकारी आपको कथालेखन और नाट्यलेखन के अध्यायों से मिल ही गई होगी।

सबसे पहले बारी आती है कहानी चुनने की। कहानी आपकी मौलिक हो या चाहे किसी और स्रोत से ली हुई। उसमें निम्न बातों का ध्यान ज़रूर रखना होगा–

कहानी ऐसी न हो जो पूरी तरह से एक्शन अर्थात हरकत पर निर्भर करती हो। क्योंकि रेडियो पर बहुत ज़्यादा एक्शन सुनाना उबाऊ हो सकता है। मान लीजिए आपकी पूरी कहानी का आधार पीछा करना है। अपराधी अपराध करके भाग रहा है पुलिस उसके पीछे लगी है और बीच-बीच में दिलचस्प, नाटकीय घटनाएँ घटती हैं। अब सिनेमा में इसे बड़ी खूबसूरती से पेश किया जा सकता है, लेकिन रेडियो में ये कथानक शायद अपना पूरा असर बनाने में कामयाब न हों। क्योंकि सिर्फ़ आवाज़ों की मदद से आप अपराधी और पुलिस की भाग-दौड़ से पैदा होने वाले रोमांच का सृजन नहीं कर पाएँगे या मान लीजिए आपकी कहानी क्रिकेट या फ़ुटबाल जैसे खेल के इर्द-गिर्द बुनी हुई है, अब इस पर अच्छा सिनेमा तो बन सकता है, लेकिन रेडियो नाटक नहीं। इसलिए कहानी का चुनाव अपने माध्यम को समझते हुए करिए।

दूसरी बात, आमतौर पर रेडियो नाटक की अवधि 15 मिनट से 30 मिनट होती है। उसके दो कारण हैं, श्रव्य माध्यम में नाटक या वार्ता जैसे कार्यक्रमों के लिए मनुष्य की एकाग्रता की अवधि 15–30 मिनट ही होती है, इससे ज़्यादा नहीं। दूसरे, सिनेमा या नाटक में दर्शक अपने घरों से बाहर निकल कर किसी अन्य सार्वजनिक स्थान पर एकत्रित होते हैं इसका मतलब वो इन आयोजनों के लिए एक प्रयास करते हैं और अनजाने लोगों के एक समूह का हिस्सा बनकर प्रेक्षागृह में बैठते हैं। अंग्रेज़ी में इन्हें कैपटिव ऑडिएंस कहते हैं, अर्थात एक स्थान पर कैद किए गए दर्शक। जबकि टी.वी. या रेडियो ऐसे माध्यम हैं कि आमतौर पर इंसान अपने घर में अपनी मरज़ी से इन यंत्रों पर आ रहे कार्यक्रमों को देखता–सुनता है। सिनेमाघर या नाट्यगृह में बैठा दर्शक थोड़ा बोर हो जाएगा, लेकिन आसानी से उठ कर जाएगा नहीं। पूरे मनोयोग से जो कार्यक्रम देखने आया है, देखेगा। जबकि घर पर बैठ कर रेडियो सुननेवाला श्रोता मन उचटते ही किसी और स्टेशन के लिए सुई घुमा सकता है या उसका ध्यान कहीं और भी भटक सकता है। इसलिए अमूमन रेडियो नाटक की अवधि छोटी होती है और अगर आपकी कहानी लंबी है तो फिर वह एक धारावाहिक के रूप में पेश की जा सकती है, जिसकी हर कड़ी 15 या 30 मिनट की होगी। यहाँ एक बात और समझ लीजिए। रेडियो पर निश्चित समय पर निश्चित कार्यक्रम आते हैं, इसलिए उनकी अवधि भी निश्चित होती है 15 मिनट, 30 मिनट, 45 मिनट, 60 मिनट वगैरह।

अब क्योंकि आपके रेडियो नाटक की अवधि ही सीमित है—तो फिर अपने–आप ही पात्रों की संख्या भी सीमित हो जाएगी। क्योंकि श्रोता सिर्फ़ आवाज़ के सहारे चरित्रों को याद रख पाता है, ऐसी स्थिति में रेडियो नाटक में यदि बहुत ज़्यादा किरदार हैं तो उनके साथ एक रिश्ता बनाए रखने में श्रोता को दिक्कत होगी। अगर संख्याओं में बात करनी है तो हम इस प्रकार कह सकते हैं, 15 मिनट की अवधि वाले रेडियो नाटक में पात्रों की अधिकतम संख्या 5–6 हो सकती है। 30–40 मिनट की अवधि के नाटक में 8 से 12 पात्र। अगर एक घंटे या उससे ज़्यादा अवधि का रेडियो नाटक लिखना ही पड़ जाए, तो उसमें 15 से 20 भूमिकाएँ गढ़ी जा सकती हैं। पात्रों की संख्या के मामले में दो संकेत और उपरोक्त बताई गईं संख्याएँ एक अंदाज़ा मात्र हैं। अर्थात 15 मिनट के रेडियो नाटक में अगर ज़रूरत है तो 7 या 8 किरदार भी हो सकते हैं। लेकिन यह संख्या बहुत ज़्यादा बढ़ाई, तो जैसा पहले ही कहा था श्रोता के लिए मुसीबत उठ खड़ी हो सकती है। दूसरे, हम जब इन संख्याओं की बात कर रहे हैं, तो ये प्रमुख और सहायक भूमिकाओं की संख्या है। छोटे–मोटे किरदारों की गिनती इसमें नहीं की गई है। मतलब, फेरीवाले की एक आवाज़ या पोस्टमैन का एक संवाद या न्यायालय में जज का सिर्फ़ 'ऑर्डर–ऑर्डर' कहना आदि।

तो हमने देखा कि रेडियो नाटक के लिए कहानी का चुनाव करते समय हमें तीन मुख्य बातों का खयाल रखना है—कहानी सिर्फ़ घटना प्रधान न हो, उसकी अवधि बहुत ज़्यादा न हो (धारावाहिक की बात दीगर है) तथा पात्रों की संख्या सीमित हो।

अब आती है बारी रेडियो नाटक लिखने की। जैसा कि पहले भी ज़िक्र हुआ था, मंच का नाट्यालेख, फ़िल्म की पटकथा और रेडियो नाट्यलेखन में काफ़ी समानता है। सबसे बड़ा फ़र्क यही है कि इसमें दृश्य गायब है, उसका निर्माण भी ध्वनि प्रभावों और संवादों के ज़रिये करना होगा। यहाँ एक बात और समझ लीजिए, ध्वनि प्रभाव में संगीत भी शामिल है। अपनी बात को और बेहतर ढंग से समझने के लिए एक उदाहरण की मदद लेते हैं। मान लीजिए दृश्य कुछ इस प्रकार का है, रात का समय है और जंगल में तीन बच्चे, राम, श्याम और मोहन रास्ता भटक गए हैं। फ़िल्म या मंच पर इसे प्रकाश, लोकेशन/मंच सज्जा, ध्वनि प्रभावों और अभिनेताओं की भाव-भंगिमाओं से दिखाया जा सकता था। रेडियो के लिए इसका लेखन कुछ इस प्रकार होगा।

कट-1 या पहला हिस्सा

(जंगली जानवरों की आवाज़ें, डरावना संगीत, पदचाप का स्वर)

राम	:	*श्याम, मुझे बड़ा डर लग रहा है, कितना भयानक जंगल है।*
श्याम	:	*डर तो मुझे भी लग रहा है राम! इत्ती रात हो गई घर में अम्मा-बाबू सब परेशान होंगे!*
राम	:	*ये सब इस नालायक मोहन की वजह से हुआ। (मोहन की नकल करते हुए) जंगल से चलते हैं, मुझे एक छोटा रास्ता मालूम है...*
श्याम	:	*(चौंककर) अरे! मोहन कहाँ रह गया? अभी तो यहीं था! (आवाज़ लगाकर) मोहन! मोहन!*
राम	:	*(लगभग रोते हुए) हम कभी घर नहीं पहुँच पाएँगे...*
श्याम	:	*चुप करो! (आवाज़ लगाते हुए) मोहन! अरे मोहन हो!*

मोहन	:	*(दूर से नज़दीक आती आवाज़) आ रहा हूँ! वहीं रुकना! पैर में काँटा चुभ गया था। (नज़दीक ही कोई पक्षी पंख फड़फड़ाता भयानक स्वर करता उड़ जाता है।) (राम चीख पड़ता है।)*
राम	:	*श्याम, बचाओ!*
मोहन	:	*(जो नज़दीक आ चुका है।) डरपोक कहीं का।*
राम	:	*(डरे स्वर में) वो... वो... क्या था?*
मोहन	:	*कोई चिड़िया थी। हम लोगों की आवाज़ों से वो खुद डर गई थी। एक नंबर के डरपोक हो तुम दोनों।*
श्याम	:	*मोहन रास्ता भटका दिया, अब बहादुरी दिखा रहा है...*

ये दृश्य इसी तरह चलेगा। आपने गौर किया होगा, शुरू में हमने अंक या दृश्य की जगह कट/हिस्सा लिखा है। दरअसल रेडियो नाटक में दृश्य नहीं होता, इसीलिए उसकी बजाय अंग्रेज़ी शब्द 'कट' लिखने की परिपाटी है। वैसे ये इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है, आप अलग-अलग दृश्यों या हिस्सों को अपने तरीके से दर्शा सकते हैं। महत्त्वपूर्ण हैं–संवाद और ध्वनि प्रभाव। हमने शुरू में ही ध्वनि प्रभावों से जंगल या किसी खुली जगह का संकेत दे दिया है, फिर राम भी अपने संवाद में कहता है–कितना भयानक जंगल है। अर्थात ये लोग इस समय जंगल में हैं ये बात श्रोता को मालूम हो गई है, अब श्याम अपने अगले संवाद में–इत्ती रात हो गई अर्थात स्थान–जंगल, समय–रात। अगर हमें समय और ज़्यादा स्पष्ट करना है, तो श्याम का संवाद कुछ इस प्रकार हो सकता था–रात के बारह बज गए हैं, घर में अम्मा-बाबू सब परेशान होंगे। तात्पर्य यह है कि आप संवादों के द्वारा दृश्य का देशकाल स्थापित कर सकते हैं, बस शर्त यह है कि वो स्वाभाविक होना चाहिए, ज़बरदस्ती ठूँसा हुआ न लगे। मसलन श्याम अगर ये संवाद कहें–राम, रात के बारह बजे हैं और मुझे डर लग रहा है। साफ़ दिखाई देता है कि मात्र सूचना देने के अंदाज़ में संवाद लिखा गया है।

हम आगे देखते हैं कि दृश्य हमें और क्या-क्या जानकारी दे रहा है–तीन दोस्त हैं राम, श्याम और मोहन। तीनों कहीं से वापस घर आ रहे थे। मोहन ने सुझाव दिया कि उसे जंगल से होकर जानेवाला कोई छोटा रास्ता पता है। तीनों ने जल्दी घर पहुँचने की ललक में वो राह पकड़ ली और अब भटक गए हैं। हमें यह भी पता चलता है कि सबसे ज़्यादा डरा हुआ राम है, डर श्याम को भी लग रहा है, लेकिन वो उस पर काबू करने की कोशिश कर रहा है। तीनों में सबसे बेफ़िक्र मोहन है।

रेडियो नाटक में पात्रों संबंधी तमाम जानकारी हमें संवादों के माध्यम से ही मिलती हैं। उनके नाम, आपसी संबंध, चारित्रिक विशेषताएँ, ये सभी हमें संवादों द्वारा ही उजागर करना होता है। भाषा पर भी आपको विशेष ध्यान रखना होगा। वो पढ़ा-लिखा है कि अनपढ़, शहर का है कि गाँव का, क्या वो किसी विशेष प्रांत का है, उसकी उम्र क्या है, वो क्या रोज़गार-धंधा करता है। इस तरह की तमाम जानकारियाँ उस चरित्र की भाषा को निर्धारित करेंगी। फिर पात्रों का आपसी संबंध भी संवाद की बनावट पर असर डालता है। एक ही व्यक्ति अपनी पत्नी से अलग ढंग से बात करेगा, अपने नौकर से अलग ढंग से, आपने बॉस के प्रति सम्मानपूर्वक रवैया अपनाएगा, तो अपने मित्र

के प्रति उसका बराबरी और गरम-जोशी का व्यवहार होगा। ये सब प्रकट होगा उसके संवादों से। यूँ तो ये सब कुछ फ़िल्म और मंच के लिए लिखे गए संवादों पर भी लागू होता है, लेकिन रेडियो क्योंकि मूलतः संवाद प्रधान माध्यम है, इसलिए यहाँ इसका खास ध्यान रखना होता है। संवाद से ही संबंधित एक तथ्य और है और ये विशेषकर रेडियो नाटक पर ही लागू होता है। क्योंकि रेडियो में कौन किससे बात कर रहा है, हम देख नहीं पाते इसलिए संवाद जिस चरित्र को संबोधित है, उसका नाम लेना ज़रूरी होता है, खासतौर पर जब दृश्यों में दो से अधिक पात्र हों। इसके अलावा रेडियो नाटक में कई बार कोई पात्र विशेष जब कोई हरकत, कोई एक्शन करता है तो उसे भी संवाद का हिस्सा बनाना पड़ता है। उदाहरण के लिए हमारा चरित्र पार्क में है और उसे बेंच पर बैठना है तो उसका संवाद कुछ इस तरह का होगा–**कितनी गरमी है आज पार्क में। चलूँ कुछ देर इस बेंच पर बैठ जाऊँ**। (और वो आह की ध्वनि करता बेंच पर बैठ जाता है।)

उपरोक्त लिखी बातों को और बेहतर ढंग से समझने के लिए हम जगदीश चंद्र माथुर जी के नाटक के एक अंश को रेडियो नाटक में रूपांतरित करते हैं।

(हास्य भाव को पेश करने वाला संगीत। संगीत मद्धम पड़ता है। अधेड़ उम्र के बाबू रामस्वरूप का स्वर उभरता है।)

बाबू : *अबे धीरे-धीरे चल... (लकड़ी के तख्त की दीवार से टकराने की आवाज़।)*

बाबू : *अरे-अरे एक तख्त बिछाने में ड्राइंगरूम की सारी दीवारें तोड़ेगा क्या?... अब तख्त को उधर मोड़ दे... अरे उधर... बस, बस!*

नौकर : *बिछा दूँ साहब?*

बाबू : *(तेज़ स्वर में) और क्या करेगा? परमात्मा के यहाँ अक्ल बँट रही थी तो तू देर से पहुँचा था क्या? (नकल करते हुए)... बिछा दूँ साब!... और ये पसीना किसलिए बहाया है?*

(तख्त को ज़मीन पर रखने का ध्वनि प्रभाव, साथ ही नौकर की हँसी का स्वर।)

नौकर : *ही-ही-ही-ही।*

बाबू : *हँसता क्यों है? अबे हमने भी जवानी में कसरतें की हैं, कलसों से नहाता था लोटों की तरह। ये तख्त क्या चीज़ है? अच्छा सुन रतन, भीतर जा और बहू जी से दरी माँग ला, इसके ऊपर बिछाने के लिए।*

रतन : *जी साब!*

बाबू : *(थोड़ा स्वर बढ़ाकर, मानो पीछे से आवाज़ दे रहे हों।) और चद्दर भी, कल जो धोबी के यहाँ से आई है, वही!*

रतन : *(मानो दूर से ही जवाब दे रहा हो) जी साब!*

(बाबू रामस्वरूप कोई भजन गुनगुनाते हैं, शायद 'दर्शन दो घनश्याम, नाथ मोरी आखियाँ प्यासी हैं' फिर स्वयं से कहते हैं।)

बाबू	:	*ओहो, एकदम नालायक है ये रतन... देखो कैसी धूल जमी है, कुर्सियों पर... ये गुलदस्ता भी, जैसे बाबा आदम के ज़माने से साफ़ नहीं हुआ है क्या सोचेंगे लड़के वाले... ओफ़्फ़ोह अब ये झाड़न भी गायब है, अभी तो यहीं था... हाँ ये रहा (कपड़े के झाड़न से कुर्सी साफ़ करने की आवाज़ के साथ-साथ बाबूजी का एकालाप जारी रहता है।)*
बाबू	:	*आज ये लोग उमा को देख कर चले जाएँ... फिर खबर लेता हूँ... श्रीमती जी की भी... और इस गधे रतन की भी...(चौंक कर) ये क्या दोनों इधर ही आ रहे हैं...रतन खाली हाथ!*
प्रेमा	:	*(गुस्से में) मैं कहती हूँ तुम्हे इस वक्त धोती की क्या ज़रूरत पड़ गई। एक तो वैसे ही जल्दी-जल्दी में...*
बाबू	:	*(आश्चर्य से) धोती!*
प्रेमा	:	*हाँ, अभी तो बदलकर आए हो...*
बाबू	:	*लेकिन तुमसे धोती माँगी किसने?*
प्रेमा	:	*यही तो कह रहा था रतन।*
बाबू	:	*क्यों बे रतन, तेरे कानों में डॉट लगी है क्या? मैंने कहा था–धोबी! धोबी के यहाँ से जो चादर आई है, उसे माँग ला... अब तेरे लिए दूसरा दिमाग कहाँ से लाऊँ। उल्लू कहीं का।*
प्रेमा	:	*अच्छा, जा पूजा वाली कोठरी में लकड़ी के बक्स के ऊपर धुले कपड़े रखे हैं न, उन्हीं में से एक चादर उठा ला।*
रतन	:	*और दरी बीबी जी?*
प्रेमा	:	*दरी यहीं तो रखी है, कोने में... वो पड़ी तो है।*
बाबू	:	*दरी हम उठा लेंगे, तू चादर ले कर आ और सुन बीबी जी के कमरे से हारमोनियम भी लेते आना।... अब जल्दी जा।*
रतन	:	*जी साब!*
बाबू	:	*आओ तब तक हम दोनों दरी बिछा देते हैं... ज़रा पकड़ो उधर से इसे एक बार झटक देते हैं (दरी के झटकने का स्वर। बाबू जी के खाँसने का स्वर।)*
बाबू	:	*(खाँसते-खाँसते) ओ...हो... कितनी गर्द भरी है इस दरी में*

ये दृश्य इसी तरह चलता रहेगा। अब देखा जाए तो नाटक के आलेख, और रेडियो के आलेख में कोई खास फ़र्क नज़र नहीं आएगा। लेकिन कुछ छोटे-छोटे अंतर हैं, और यही अंतर रेडियो नाटक के लिए काफ़ी महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं। हम बताएँ, इससे बेहतर होगा आप स्वयं ही दोनों दृश्यों की तुलना कीजिए और दोनों आलेखों में क्या-क्या अंतर हैं, उन्हें खोजिए। ये भी समझने की कोशिश कीजिए कि ये अंतर क्यों हैं?

© NCERT not to be republished

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. दृश्य-श्रव्य माध्यमों की तुलना में श्रव्य माध्यम की क्या सीमाएँ हैं? इन सीमाओं को किस तरह पूरा किया जा सकता है?

2. नीचे कुछ दृश्य दिए गए हैं। रेडियो नाटक में इन दृश्यों को आप किस-किस तरह से प्रस्तुत करेंगे, विवरण दीजिए।
   (क) घनी अँधेरी रात
   (ख) सुबह का समय
   (ग) बच्चों की खुशी
   (घ) नदी का किनारा
   (ङ) वर्षा का दिन

3. रेडियो नाटक लेखन का प्रारूप बनाइए और अपनी पुस्तक की किसी कहानी के एक अंश को रेडियो नाटक में रूपांतरित कीजिए।

© NCERT not to be republished

13

नए और अप्रत्याशित विषयों पर लेखन

जिस तरह हम बोलते हैं
उस तरह तू लिख
और इसके बाद भी
हमसे बड़ा तू दिख।

–भवानी प्रसाद मिश्र
हिंदी कवि

इस पाठ में...

- क्या है अप्रत्याशित विषयों पर लेखन?
- क्या हो सकती है इसकी कोई तकनीक?
- कैसे करें तैयारी?

- आपने पिछली फ़िल्म कब देखी थी? शायद हफ़्तेभर पहले देखी हो या शायद महीनेभर पहले! देखने के बाद फ़िल्म के बारे में दोस्तों से बातचीत ज़रूर की होगी। उन्हें बताया होगा कि अच्छी लगी या नहीं। अच्छी लगने या न लगने के कारणों पर भी चर्चा हुई होगी। अब सोचिए कि क्या उस फ़िल्म के बारे में अपने खयालात को आप एक व्यवस्थित लेख की शक्ल दे सकते हैं?
- अगर आपने फ़िल्म सिनेमाघर में देखी हो, तो उस सिनेमाघर का पूरा माहौल आपके ज़ेहन में होगा–टिकट खिड़की पर लगी लाइन, उस लाइन में चलने वाली बतकही और ठेलमठेल, खाने-पीने की चीज़ों के जगमगाते काउंटर, आगे की संभावित फ़िल्मों के चित्ताकर्षक पोस्टर, सिनेमाघर की लॉबी की अपनी खास महक वगैरह, वगैरह। क्या आप स्मृति और अनुभव में बसे उस सिनेमाघर को शब्दों के सहारे पन्नों पर उकेर सकते हैं?

© NCERT not to be republished

अप्रत्याशित विषयों पर लेखन कम समय में अपने विचारों को संकलित कर उन्हें सुंदर और सुघड़ ढंग से अभिव्यक्त करने की चुनौती है।

- आपने आज सुबह का अखबार देखा होगा। पूरा न भी देखा हो, तो कम-से-कम खास-खास खबरों पर एक नज़र दौड़ाई होगी। उन खबरों को देखते हुए अपने समय और समाज की जो तसवीर आपके मन में बनती है, क्या उसे आप एक लेख में व्यक्त कर सकते हैं?

कहने की ज़रूरत नहीं कि लेख की शक्ल देना, उसे शब्दों के सहारे पन्नों पर उकेरना–यह सब ज़्यादातर लोगों के लिए खासा मुश्किल काम है। जिन विचारों को कह डालना हमारे लिए कतई कठिन नहीं होता, उन्हें लिख डालने का निमंत्रण एक चुनौती की तरह लगने लगता है। ऐसा क्यों है? होने को इसके अनगिनत कारण होंगे, पर एक कारण हमारे काम का है और वह यह कि हम में से ज़्यादातर लोग आत्मनिर्भर होकर लिखित रूप में अभिव्यक्ति का अभ्यास ही नहीं करते। अभ्यास के हर मौके को हम रटंत पर निर्भर होकर गँवा बैठते हैं। रटंत का मतलब है, दूसरों के द्वारा तैयार की गई सामग्री को याद करके ज्यों-का-त्यों प्रस्तुत कर देने की कुटेव (बुरी लत)। इस कुटेव का शिकार हो जाने पर असली अभ्यास या रियाज़ का मौका ही कहाँ मिलता है?

ज़ाहिर है, लेखन का आशय यहाँ यांत्रिक हस्तकौशल से नहीं है। उसका आशय भाषा के सहारे किसी चीज़ पर विचार करने और उस विचार को व्याकरणिक शुद्धता के साथ सुसंगठित रूप में अभिव्यक्त करने से है। याद रखें, भाषा विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम ही नहीं, स्वयं विचार करने का साधन भी है। विचार करने और उसे व्यक्त करने की यह प्रक्रिया निबंध के चिरपरिचित विषयों के साथ आमतौर पर घटित नहीं हो पाती। इसका कारण यह है कि उन पर तैयारशुदा सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहती है और हम कुछ नया सोचने-लिखने की ज़हमत उठाने के बजाय उसी सामग्री पर निर्भर हो जाते हैं। मौलिक प्रयास एवं अभ्यास को बाधित करनेवाली यह निर्भरता हमारे अंदर लिखित अभिव्यक्ति की क्षमता विकसित नहीं होने देती। इसलिए यह बहुत ज़रूरी है कि हम निबंध के परंपरागत विषयों को छोड़ कर नए तरह के विषयों पर लिखने का अभ्यास करें। यही अभ्यास हमें अपने मौलिक अधिकारों में से एक–अभिव्यक्ति के अधिकार का पूरा-पूरा उपयोग कर पाने की सामर्थ्य देगा।

ऐसे लेखन के लिए आपको जिस तरह के विषय दिए जा सकते हैं, उनकी संख्या अपरिमित है। आपके सामने की दीवार, उस दीवार पर टंगी घड़ी, उस दीवार में बाहर की ओर खुलता झरोखा–कुछ भी उसका विषय हो सकता है। ऐसे विषय भी हो सकते हैं, जिनमें इनके मुकाबले खुलापन थोड़ा कम हो और 'फ़ोकस' अधिक स्पष्ट हो। जैसे टी.वी. धारावाहिकों में *स्त्री, बहुत ज़रूरी है शिक्षा,* इत्यादि।

यहाँ जितने विषय एक झटके में सुझा दिए गए, ज़ाहिर है, वे बहुत अलग-अलग प्रकृति के हैं और इसीलिए आपसे इनकी माँग भी अलग-अलग किस्म की होगी। कोई विषय आपको तार्किक विचार प्रक्रिया में उतारना चाहता है, कोई आपसे यह माँग करता है कि जो कुछ आपने देखा-सुना है या देख-सुन रहे हैं, उसे थोड़ी बारीकी से पुन:संकलित करते हुए एक व्यवस्था में ढाल दें, कोई अपनी स्मृतियों को खंगालने के लिए आपको प्रेरित करता है, तो कोई अनुभव को

सैद्धांतिक नज़रिये से जाँचने-परखने के लिए आपको उकसाता है। इन माँगों के जवाब में आप जो कुछ लिखेंगे, वह कभी निबंध बन पड़ेगा, कभी संस्मरण, कभी रेखाचित्र की शक्ल लेगा, तो कभी यात्रावृत्तांत की। इसीलिए हम उसे एक सामान्य नाम देंगे–लेख, ताकि आपको ऐसा न लगे कि हम आप पर किसी विधा विशेष के भीतर ही लेखन करने का दबाव बना रहे हैं।

अब सवाल है कि ऐसा लेख प्रस्तुत करने की चुनौती सामने हो, तो क्या करना चाहिए? कहने की ज़रूरत नहीं कि लिखने का कोई फ़ॉर्मूला आज तक दुनिया में नहीं बना। अगर फ़ॉर्मूला होता, तो कंप्यूटर हमारे मुकाबले बेहतर लेखक साबित हो सकता था। वस्तुत: लेखन की रचनात्मकता का पूरा संबंध फ़ॉर्मूले का वजूद न होने की इसी सचाई से है। इसके बावजूद यहाँ कुछ ऐसे सुझाव दिए जा सकते हैं, जो अचानक सामने आए विषय से मुखामुखम होने में आपकी मदद कर सकते हैं।

अव्वल तो यह ध्यान में रखें कि इस तरह के लेखन में विषय दो खंभों के बीच बंधी रस्सी की तरह नहीं होता, जिस पर चलते हुए हम एक कदम भी इधर-उधर रखने का जोखिम नहीं उठा सकते। वह तो खुले मैदान की तरह होता है, जिसमें बेलाग दौड़ने, कूदने और कुलाँचे भरने की छूट होती है। दरअसल, दिए गए विषय के साहचर्य से जो भी सार्थक और सुसंगत विचार हमारे मन में आते हैं, उन्हें हम यहाँ व्यक्त कर सकते हैं। हाँ, अपेक्षाकृत स्पष्ट फ़ोकस वाले विषय मिलने पर (मसलन, टी.वी. धारावाहिकों में स्त्री) इस विचार-प्रवाह को थोड़ा नियंत्रित रखना पड़ता है। इन पर लिखते हुए विषय में व्यक्त वस्तुस्थिति की हम उपेक्षा नहीं कर सकते। इसीलिए बहुत खुलापन रखनेवाले विषयों पर अगर हम शताधिक कोणों से विचार कर सकते हैं, तो उनसे भिन्न, किंचित केंद्रित प्रकृति के विषयों पर विचार करने के कोण स्वाभाविक रूप से थोड़े कम होते हैं। लेकिन इतना तय है कि किसी भी विषय पर एक ही व्यक्ति के ज़ेहन में कई तरीकों से सोचने की प्रवृत्ति होती है। ऐसी स्थिति अगर आपके साथ हो, तो सबसे पहले दो-तीन मिनट ठहर कर यह तय कर लें कि उनमें से किस कोण से उभरनेवाले विचारों को आप थोड़ा विस्तार दे सकते हैं। यह तय कर लेने के बाद आप एक आकर्षक-सी शुरुआत पर विचार करें। हाँ, ये खयाल रहे कि वह शुरुआत आकर्षक होने के साथ-साथ निर्वाह-योग्य भी हो। ऐसा न हो कि आगे आप जो कुछ कहना चाहते हों, उसे इस प्रस्थान के साथ सुसंबद्ध और सुसंगत रूप में पिरो पाना आपके लिए मुमकिन न हो। इसलिए शुरुआत से आगे बात कैसे सिलसिलेवार बढ़ेगी, इसकी एक रूपरेखा आपके ज़ेहन में होनी चाहिए। वस्तुत: सुसंबद्धता किसी भी तरह के लेखन का एक बुनियादी नियम है। खासतौर से, जब विषय पर विचार करने की चौहद्दियाँ बहुत सख्ती से तय न कर दी गई हों, उस सूरत में सुसंबद्धता बनाए रखने के लिए कोशिश करनी पड़ती है। जब चौहद्दियाँ सख्ती से तय कर दी गई हों, तब बाहरी/आरोपित अनुशासन ही विचार-प्रवाह में कमोबेश आंतरिक संबद्धता कायम कर देता है।

विवरण-विवेचन के सुसंबद्ध होने के साथ-साथ उसका सुसंगत होना भी अच्छे लेखन की एक खासियत है। आपकी कही गई बातें न सिर्फ़ आपस में जुड़ी हुई हों, बल्कि उनमें तालमेल भी हो। अगर आपकी दो बातें आपस में ही एक-दूसरे का खंडन करती हों, तो यह लेखन का ही नहीं, किसी भी तरह की अभिव्यक्ति का एक अक्षम्य दोष है।

सुसंबद्धता और सुसंगति को और बेहतर तरीके से समझने के लिए एक मोटा उदाहरण दिया जा सकता है। मान लीजिए मौसम की चर्चा करते-करते आप एकाएक राजनीति पर बात करने लगें और ऐसा करने का कोई ठोस आधार या कारण—मसलन, समानता के आधार पर कोई व्यंग्य करना या इन दोनों का कोई पारस्परिक प्रभाव रेखांकित करना—प्रकट न हो, तो आपकी बातों में संबद्धता का अभाव दिखेगा। इसी तरह मौसम की चर्चा करते हुए आप किसी खास दिन, समय और स्थान के मौसम को एक बार खुशगवार बताएँ और दूसरी बार उबाऊ, तो आपकी बातें असंगत जान पड़ेंगी। आप अपनी कही हुई बात को इस तरह खुद ही झुठला दें, तो कौन आपको पढ़ना चाहेगा? इसलिए लेख—चाहे वह संस्मरणात्मक हो, रेखाचित्रात्मक हो अथवा वैचारिक, उसकी सुसंबद्धता और सुसंगति के प्रति हर लेखक को सचेत होना चाहिए। वैसे हमारे सोचने की प्रक्रिया स्वाभाविक रूप से इन गुणों को धारण करती ही है, फिर भी सचेत न रहने पर, संभव है, ये गुण कहीं-कहीं नदारद हो जाएँ!

यह भी उल्लेखनीय है कि सामान्यत: निबंधों या आलेखों/प्रश्नोत्तरों में जहाँ 'मैं' शैली का प्रयोग वर्जित होता है, वहीं इस तरह के लेखन में 'मैं' की आवाजाही बेरोकटोक चल सकती है। यहाँ विषय की प्रकृति में ही निहित होता है कि लेख में व्यक्त विचारों में आत्मनिष्ठता और लेखक के व्यक्तित्व की छाप होगी। इसलिए अन्यत्र वस्तुनिष्ठता के आग्रह से 'मैं' शैली को भले ही ठीक न माना जाता हो, यहाँ उस पर कोई प्रतिबंध नहीं होता।

आइए, अब आपके सामने कुछ नमूने पेश करें! सबसे पहले तीन नमूने एक ही विषय—'दीवाल घड़ी' पर। यह बिलकुल खुला हुआ विषय है। विषय प्रस्तावित करनेवाला यहाँ किसी तरह की चौहद्दी नहीं बाँध रहा, वह आपको इस बात की छूट दे रहा है कि इस विषय के साथ आपके ज़ेहन में जो भी खयाल उभर रहे हैं, उन्हें सुसंगत तरीके से शब्दबद्ध करें। अगर वह 'दीवाल घड़ी की उपयोगिता', 'दीवाल घड़ी का इतिहास' जैसा कोई विषय प्रस्तावित करता, तो बात और थी। वहाँ ढीला-ढाला ही सही, एक बंधन होता और आप उसकी मर्यादा का ध्यान रखते हुए लेखन करते। पर यहाँ आपको खुले मैदान में छोड़ दिया गया है। आप जिस दिशा में जाकर जुगाली करना चाहते हैं, करें! इन तीन नमूनों को देख कर यह बात आपके सामने साफ़ हो जाएगी।

दीवाल घड़ी-1

उसे देखते ही किसी फ़िल्म का एक खूबसूरत-सा दृश्य याद आता है। घड़ियों की एक दुकान में नायक-नायिका की मुलाकात होती है। हर तरफ़ भाँति-भाँति की घड़ियाँ टँगी हैं। बारह बजने ही वाले हैं। ज्यों ही नायक कुछ कहना चाहता है। और वह कुछ बड़ा ही मानीखेज़ है—घड़ियों की सुइयाँ बारह पर पहुँच जाती हैं और एक-एक कर सारी घड़ियों से बारह बार घंटी बजने की आवाज़ उठने लगती है। अगले कुछ सेकेंड तक ऐसा संगीतमय शोर गूँजता रहता है कि नायक हकला कर चुप रह जाता है। घड़ियों ने मानो उसका मंच ही छीन लिया हो! फिर नायक-नायिका, दोनों इस मधुर विडंबना पर मुसकराते हुए एक-दूसरे को देखते रह जाते हैं... यह खूबसूरत दृश्य मेरी याददाश्त में उसी तरह टँगा है, जिस तरह दीवार पर घड़ी टँगी होती है। कहीं आती-जाती नहीं, हमेशा स्थिर, फिर भी गतिशील!

ऐसी कई स्मृतियाँ दीवाल घड़ी के साथ जुड़ी हैं। मेरे घर में जब पहली दीवाल घड़ी खरीद कर आई (वही अभी तक की आखिरी भी है), तो उसे टाँगने की जुगत में पूरा घर जिस तरह लगा रहा, उसकी याद आते ही बेसाख्ता हँसी छूट जाती है। हम सब उस दिन अंकल पोज़र की मुद्रा में थे। हर कोई भवनशास्त्र से लेकर सौंदर्यशास्त्र तक का विशेषज्ञ होने का दावा कर रहा था। 'घड़ी यहाँ टँगनी चाहिए'। 'नहीं, वहाँ टँगनी चाहिए'। कील ऐसे ठोंकी जानी चाहिए, 'नहीं, वैसे ठोंकी जानी चाहिए' 'घड़ी हाथ की पहुँच में होनी चाहिए', 'नहीं, पहुँच से बाहर होनी चाहिए'। ये सारी बहसें हम तमाम विशेषज्ञों के बीच चलती रहीं और अंत में जब सर्वसम्मति से किसी फ़ॉर्मूले के तहत काम संपन्न हो पाया, तब तक दीवार पर कम-से-कम छह जगह उसे टाँगे जाने की कोशिशों के निशान छूट चुके थे। अगली दीवाली पर उन गड्ढों के भरे जाने तक दीवाल घड़ी तारों के बीच चमकते धवल चाँद की तरह स्थापित रही। चाँद तो अब भी है, पर तारे नहीं रहे। यह चाँद ऐसा है, जो तकरीबन सभी मध्यवर्गीय घरों में पाया जाता है। मेरी ही तरह उन घरों के बाशिंदों के मन में भी उसे लेकर कुछ-न-कुछ यादें बसी होंगी। यह कितना अजीब है कि जो प्रतिक्षण समय के बीते जाने पर टकटकी लगाए रखता है, वही स्मृतियों के रूप में हमारे भीतर समय को कहीं स्थिर भी कर देता है।

दीवाल घड़ी-2

वह मेरे ठीक सामने है, एक साफ़-सुथरी दीवार पर कील के सहारे टँगी हुई। कील दिखती नहीं। इसका मतलब यह कि कील पर उसके टँगे होने का कोई प्रत्यक्ष प्रमाण उपलब्ध नहीं है। लेकिन तर्कशास्त्रियों ने तो तर्कसंगत अनुमान को भी प्रमाण की ही श्रेणी में रखा है। इसलिए तर्क पर आधारित यह अनुमान बिलकुल निरापद है कि घड़ी कील के सहारे टँगी है।... वह अपनी जगह बिलकुल स्थिर है, पता नहीं कब से, लेकिन चल रही है। उसके काँटों में एक अनवरत चक्रीय गति है। चक्र या वृत्त की न कोई शुरुआत होती है, न उसका अंत होता है। इस तरह इन काँटों की चक्रीय गति हमें बताती है कि समय अनादि अनंत है। घड़ी को दीवार के आसन पर बिठा कर मानो यही बताते रहने का ज़िम्मा सौंप दिया गया है कि समय लगातार बीत रहा है, पर खत्म होने के लिए नहीं। यह विरोधाभास-सा लगता है ना! किसी झुके हुए मर्तबान से लगातार पानी गिर रहा है, पर न पानी कम होता है, न मर्तबान खाली होता है। गौर करें तो यह विरोधाभास नहीं है। समय अनंत है, पर हम सबका अपना-अपना समय अनंत नहीं। घड़ी के चक्र में हर थोड़ी-थोड़ी दूरी पर जो लकीरें हैं, वे समय के कृत्रिम खंड ही सही, वे हमें बताती हैं कि हर इंसान का, हर चीज़ का और हर काम का अपना समय होता है। वह शुरू भी होता है और खत्म भी। याद आता है, कौन बनेगा करोड़पति का वह छोटा-सा बहुचर्चित जुमला–'तो आपका समय शुरू होता है अब!'

दीवाल घड़ी-3

वह मेरे ठीक सामने है, एक साफ़-सुथरी दीवार पर कील के सहारे टँगी हुई। बिलकुल स्थिर है अपनी जगह पर, पता नहीं कब से, पर लगातार चल रही है, हिंदी में टिक्-टिक्-टिक्-टिक् और अंग्रेज़ी में टिक्-टॉक, टिक्-टॉक! उसे अंग्रेज़ी या हिंदी नहीं

आती, पर दोनों तरह के भाषा-भाषी उसकी पदचाप को अपने-अपने तरीके से सुनते हैं। ठीक वैसे ही जैसे कुत्तों को अंग्रेज़ी या हिंदी नहीं आती, पर अंग्रेज़ी समाज के लिए वह बाउ-बाउ करता है और हिंदी समाज के लिए भौं-भौं! टिक्-टिक् या टिक्-टॉक की पदचाप के साथ लगातार चलायमान यह घड़ी सामने की दीवार पर एक खूबसूरत-सी बिंदी के समान दिख रही है। कमरे की चारों दीवारों पर कहीं भी और कुछ नहीं है—न कोई पेंटिंग, न कैलेंडर। ऐसे में इस गोलाकार घड़ी का वजूद सिर्फ़ उपयोगितावादी नहीं लगता। वह खूबसूरती के लिए भी है। दीवार की हल्की पीली रंगत के साथ उसका भूरा रंग एक नयनाभिराम कंट्रास्ट रचता है और उसकी अनथक चलती सुइयाँ दीवारों की स्थिरता के बीच एक जीवंत स्पंदन भरती हैं। दीवारों की खामोशी और स्थिरता के बीच वह ऐसी दिखती है, मानो कोई बच्चा चुपचाप बैठे रहने की सज़ा निभा रहा हो, पर उसकी आँखें लगातार बोल रही हों। हाँ, वह बोल रही है, न अंग्रेज़ी में, न हिंदी में, बल्कि एक ऐसी ज़बान में, जिसे इस धरती पर रहनेवाला हर समझदार इंसान समझता है। कुछ ज़्यादा नहीं है उसके पास कहने के लिए। वह तो सिर्फ़ इतना कह रही है कि वक्त किसी के लिए नहीं ठहरता। बात बड़ी है, भले ही इस घड़ी की सुइयाँ मेरी कलम के आकार से ज़्यादा बड़ी न हों! बस, एक चीज़ अखरती है। लगानेवाले ने उसे ऐसी जगह लगाया है कि उसे देखो, तो खिड़की की तरफ़ पीठ करनी पड़ती है। काश, ऐसा न होता!

इन नमूनों में से पहला मुख्यतः स्मृति-आधारित है। दीवाल-घड़ी को देख कर जो यादें मन में उभर आई हैं, उन्हें लेखक एक तरतीब दे रहा है। तरतीब देने के सिलसिले में ध्यान इस बात का रखा गया है कि वे स्मृतियाँ पाठक को दिलचस्प जान पड़ें; साथ ही, यथासंभव उन स्मृतियों से कहीं एक-दो वाक्यों में ऐसा निचोड़ निकाला जाए कि वे किसी सामान्य सत्य—यानी एक बड़े धरातल पर अनुभव किए जानेवाले सत्य की ओर इशारा करने लगें।

दूसरा नमूना दार्शनिक मिजाज़ का है। यहाँ लेखक दीवाल घड़ी को देखता है और रोज़मर्रा की छोटी-मोटी चीज़ों से ऊपर उठ कर कुछ ऐसे गंभीर प्रश्नों की ओर उन्मुख हो जाता है, जो उस घड़ी के साथ एक क्षीण तंतु से जुड़े हैं।

तीसरा नमूना मुख्यतः अवलोकन-आधारित है। सामने की दीवार पर एक घड़ी दिखती है और उसकी खूबसूरती, गति, आवाज़, टँगे होने का अंदाज़—ये सारी चीज़ें लेखक की टिप्पणी का विषय बन जाती हैं। टिप्पणी में स्थिति का बयान करने के साथ-साथ वह अपनी राय भी ज़ाहिर करता है और इनके द्वारा अपने लेखन को सपाट विवरण बनने से बचाता है। कहीं एक-दो वाक्यों में निचोड़ के तौर पर किसी सामान्य सत्य को प्रतिष्ठित करने की पद्धति यहाँ भी अपनाई गई है।

तरीके और भी हो सकते हैं। मसलन, किसी ज्वलंत सामाजिक-सांस्कृतिक प्रश्न (जातिवाद का ज़हर) पर लिखना हो, तो आप तथ्य और उसका विश्लेषण प्रस्तुत करने की पद्धति अपना सकते हैं। किसी खास जगह के दृश्य (मेरे मुहल्ले का चौराहा) को उकेरना हो, तो आप कल्पना में उस दृश्य को उपस्थित मान कर चल-कैमरे की तरह अनेक ब्योरों को समेट सकते हैं; किसी प्रवृत्ति या चलन पर लिखना हो, तो उसके गुणावगुण पर तर्कपूर्वक विचार कर सकते हैं। ये तरीके

पिछले तीन नमूनों के लिए अपनाए गए तरीकों से जुदा हैं। कहने का मतलब यह कि आप अपनी सुविधा और विषय की माँग के अनुसार अपने तरीके का चुनाव कर सकते हैं। अगर आपके सामने विषय है, 'जातिवाद का ज़हर', तो ज़ाहिर है कि आप कल्पना की उड़ान वाली शैली नहीं अपनाएँगे। यह एक ज्वलंत सामाजिक मुद्दा है, जो आपसे ठोस विश्लेषण और स्पष्ट राय की माँग करता है। तो इस विषय के साथ आपका बरताव शायद कुछ इस तरह हो–

जातिवाद का ज़हर

ज़हर जीवित शरीर को मौत की नींद सुला देता है और अगर शरीर की प्रतिरोध क्षमता के कारण वह ऐसा न कर पाए, तब भी शरीर की व्यवस्था में भयंकर उथल-पुथल मचा कर उसे अशक्त और बीमार तो बना ही देता है। मानव-समाज के जीवित शरीर में जातिवाद ने ऐसे ही ज़हर का काम किया है। हमारे जिन पुरखों ने कर्म के आधार पर वर्ण तय किए थे, उन्होंने सोचा भी नहीं होगा कि कल को यह विचार जन्मना जातिव्यवस्था में परिणत हो जाएगा और इसके चलते गर्भ में शिशु के आते ही उसकी नियति तय हो जाया करेगी। उन्हें इस बात का शायद ही अंदाज़ा रहा हो कि वे जो बीज बो रहे हैं, उससे ऐसा विषवृक्ष निकलेगा, जो आगे हज़ारों सालों तक गैर-बराबरी और शोषण-उत्पीड़न का आधार बन कर समाज की तंदुरुस्ती का क्षय करता रहेगा। आज हम बड़े-बड़े औद्योगिक संयंत्रों, तीव्र गतिवाले परिवहन-साधनों, स्वचालित उपकरणों, कंप्यूटर और इंटरनेट के युग में जी रहे हैं, फिर भी जन्म के आधार पर कुछ लोगों को अपना और कुछ को पराया मानने, कुछ को बड़ा और कुछ को क्षुद्र मानने की सदियों पुरानी परिपाटी कायम है। आए दिन अखबारों में इस तरह की खबरें पढ़ने को मिलती हैं कि फ़लाँ गाँव या कस्बे में किसी प्रेमी युगल को इसलिए मार डाला गया कि उन्होंने अलग-अलग जातियों से आने के बावजूद साथ जीवन बिताने का सपना देखा था। ऐसी खबरों का दुहराव होने में भी ज़्यादा अंतराल नहीं आता कि किसी गाँव में एक जातिविशेष के टोले पर दूसरी जाति के लोगों ने हमला कर दिया और महिलाओं-बच्चों समेत बड़ी संख्या में लोग मारे गए। यह कहना गलत न होगा कि जातिवादी तनाव हमारे रोज़मर्रा के जीवन का हिस्सा बन बैठा है, जो गाहे-बगाहे अपना चरम रूप धारण कर लेता है और अपने तांडव में कितनी ही ज़िंदगियों को उजाड़ देता है।

सामान्य रूप से यह माना जाता है कि आधुनिक लोकतंत्र ऐसी मानवविरोधी परिपाटियों के वजूद को मिटा डालता है, पर हमारे यहाँ मंज़र ही उलटा है। हमारे लोकतांत्रिक चुनावों ने जातिवादी भावनाओं को और गहरा बनाने का काम किया है; अलग-अलग जातियाँ राजनीतिक दलों के वोट बैंकों में तब्दील हो गई हैं। ऐसे में कोई उम्मीद भी कैसे कर सकता है कि यह लोकतंत्र जातिवाद की जड़ों पर प्रहार कर पाएगा! राजनीति में जब जातिगत आधारों पर गोलबंदियाँ होती हैं, तब स्वाभाविक है कि हमारे गली-मोहल्ले, हमारे काम के स्थान, हमारे शिक्षण-संस्थान इत्यादि भी इस तरह की गोलबंदियों से मुक्त नहीं होंगे। जिस तरह शरीर में प्रवेश करनेवाला ज़हर धमनियों में दौड़ते खून की मदद से अंग-प्रत्यंगों तक पहुँच जाता है, वैसे ही जातिवाद का ज़हर समाज के हर अंग को अपनी जकड़ में ले चुका है। पर इस समाज की

© NCERT not to be republished

जिजीविषा अद्‌भुत है। वह इस ज़हर को परास्त करके ही रहेगा, क्योंकि इसे जीना है और वह भी तंदुरुस्त रहकर, घिसट-घिसट कर नहीं। जातिवाद से फ़ायदा उठानेवाले लोग मुट्ठीभर हैं और उसका नुकसान झेलनेवाले बहुसंख्यक–इस बात को समझने के संकेत हिंदुस्तान की जनता देने लगी है। जिस दिन उसकी सोच पर पड़े सारे झोल को चीर कर यह बात साफ़-साफ़ दिखने लगेगी, उसी दिन इस मारक विष का सही उपचार शुरू हो पाएगा।

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. अधूरे वाक्यों को अपने शब्दों में पूरा करें–
   - हम नया सोचने-लिखने का प्रयास नहीं करते क्योंकि...
   - लिखित अभिव्यक्ति की क्षमता का विकास नहीं होता क्योंकि...
   - हमें विचार-प्रवाह को थोड़ा नियंत्रित रखना पड़ता है क्योंकि...
   - लेखन के लिए पहले उसकी रूपरेखा स्पष्ट होनी चाहिए क्योंकि...
   - लेख में 'मैं' शैली का प्रयोग होता है क्योंकि...

2. निम्नलिखित विषयों पर दो से तीन सौ शब्दों में लेख लिखिए–
   - झरोखे से बाहर
   - सावन की पहली झड़ी
   - इम्तहान के दिन
   - दीया और तूफ़ान
   - मेरे मुहल्ले का चौराहा
   - मेरा प्रिय टाइमपास
   - एक कामकाजी औरत की शाम

3. घर से स्कूल तक के सफ़र में आज आपने क्या-क्या देखा और अनुभव किया? लिखें और अपने लेख को एक अच्छा-सा शीर्षक भी दें।

4. अपने आसपास की किसी ऐसी चीज़ पर एक लेख लिखें, जो आपको किसी वजह से वर्णनीय प्रतीत होती हो। वह कोई चाय की दुकान हो सकती है, कोई सैलून हो सकता है, कोई खोमचेवाला हो सकता है या किसी खास दिन पर लगनेवाला हाट-बाज़ार हो सकता है। विषय का सही अंदाज़ा देनेवाला शीर्षक अवश्य दें।

© NCERT not to be republished

व्यावहारिक लेखन

इकाई तीन

© NCERT not to be republished

व्यावहारिक लेखन

इकाई तीन

© NCERT
not to be republished

14

कार्यालयी लेखन और प्रक्रिया

जवाब देना है
किसी ऐरे-गैरे को नहीं
बल्कि मुझे समंदर को जवाब देना है।

–वेणु गोपाल
हिंदी कवि

इस पाठ में...

- औपचारिक पत्र
- टिप्पण, मुख्य टिप्पण, आनुषंगिक टिप्पण
- अनुस्मारक
- अर्धसरकारी पत्र
- स्वत: स्पष्ट टिप्पणी
- कार्यसूची
- कार्यवृत्त
- प्रेस विज्ञप्ति
- परिपत्र

आपको किसी आम सरकारी दफ़्तर में जाने का अवसर अवश्य मिला होगा जहाँ आपने कागज़ों और फ़ाइलों के ढेर देखे होंगे। ये फाइलें दफ़्तरों के कामकाज में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सरकारी कामकाज की गाड़ी फ़ाइलों के पहियों पर ही दौड़ती है।

किसी भी विषय पर विचार करने और उस पर निर्णय लेने के लिए उस विषय से संबंधित एक फ़ाइल होती है। उस विषय से संबंधित जो प्रस्ताव या पत्र बाहरी व्यक्तियों या दूसरे कार्यालयों से प्राप्त होते हैं उन्हें फ़ाइल की दाहिनी तरफ़ रखा जाता है। किसी प्रस्ताव या विषय पर विचार के लिए जो टिप्पणियाँ लिखी जाती हैं या मंतव्य प्रकट किए जाते हैं वे फ़ाइल की बाईं तरफ़ लगे पृष्ठों पर होते हैं।

जैसा कि अभी ऊपर बताया गया, फ़ाइल के बाईं तरफ़ का हिस्सा टिप्पण के लिए और दाहिनी तरफ़ का हिस्सा पत्र व्यवहार को संजोकर रखने के लिए होता है।

सरकारी कार्यालयों की ज़रूरतों को ध्यान में रखते हुए इन पत्रों को कई श्रेणियों में बाँट दिया गया है। मसलन, कई पत्र सूचनाएँ माँगने या भेजने के लिए लिखे जाते हैं। कुछ पत्रों द्वारा मुख्यालय या बड़े अधिकारी अपने अधीनस्थ कार्यालयों या अधीनस्थ कर्मचारियों को आदेश भेजते हैं। कुछ पत्र अखबारों को विभागीय गतिविधियों की जानकारी देने के लिए भेजे जाते हैं। हर श्रेणी के पत्र के लिए एक विशेष स्वरूप निर्धारित कर दिया गया है। इस पाठ में हम इन्हीं अलग-अलग स्वरूपों की चर्चा करेंगे।

इन स्वरूपों की जानकारी प्राप्त करने के लिए हम किसी कार्यालय में चलते हैं। आप इसका नाम जानना चाहेंगे? अजी नाम में क्या रखा है! चलिए हम इसका नाम रखते हैं *अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति संस्थान।* यह है संस्थान का मुख्यालय जिसे महानिदेशालय के नाम से जाना जाता है। देशभर में फैले तमाम क्षेत्रीय कार्यालय इसी के नियंत्रण में आते हैं। आइए हम इसके अंदर चलें।

यह है महानिदेशालय का प्रशासन विभाग। यहाँ एक अनुभाग अधिकारी शंकरन जी पूरी गंभीरता से किसी मसले को सुलझाने में व्यस्त हैं। सामने एक पत्र पड़ा है जो मसले का केंद्रबिंदु है। पत्र मुंबई के क्षेत्रीय कार्यालय से आया हुआ है और इस प्रकार है–

औपचारिक पत्र (फ़ॉर्मल लेटर)

अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति संस्थान

क्षेत्रीय कार्यालय : मुंबई

फा.संख्या: मुंबई/का./5/2005/206 मुंबई, 15 मार्च 2005

सेवा में,
महानिदेशक
अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति संस्थान
तिलक मार्ग, नयी दिल्ली-110001

विषय: मोबाइल फ़ोन पर होने वाले व्यय के लिए निर्धारित सीमा

महोदय,

कृपया अपने परिपत्र का स्मरण करें जिसकी संख्या 24/13/प्र./2004 थी, जो 23 नवंबर, 2004 को जारी किया गया था। परिपत्र में हिदायत दी गई थी कि मोबाइल फ़ोन पर महीने में दो हज़ार से अधिक खर्च नहीं किया जाना चाहिए।

इस संबंध में निवेदन है कि मुंबई स्थित क्षेत्रीय कार्यालय की गतिविधियाँ अत्यंत व्यापक हैं। देश के तमाम फ़िल्म और टेलीविज़न निर्माता मुंबई में ही हैं। इनकी वजह से विभिन्न विधाओं के कलाकार बड़ी संख्या में मुंबई में ही निवास करते हैं। साथ ही निदेशक को देश के विभिन्न नगरों में स्थित कार्यालयों एवं क्षेत्रीय कार्यालय से भी निरंतर संपर्क में रहना पड़ता है। साथ ही

संस्थान की गतिविधियों के लिए प्रायोजक जुटाने के सिलसिले में देश के विभिन्न औद्योगिक संगठनों से भी लगातार बात करनी पड़ती है।

ऊपर बताए तथ्यों की वजह से दो हज़ार रुपए मासिक की सीमा मुंबई कार्यालय के लिए कम पड़ रही है। पिछले छह महीनों से यह देखा जा रहा है कि मासिक खर्च छह हज़ार रुपये के आसपास आता है।

अत: निवेदन है कि मुंबई कार्यालय की विशेष स्थिति को ध्यान में रखते हुए मोबाइल फ़ोन पर मासिक खर्च की सीमा बढ़ाकर छह हज़ार रुपये कर दी जाए।

भवदीय

(राकेश कुमार)

निदेशक

शंकरन जी ने पत्र को पढ़कर बुरा-सा मुँह बनाया। वे पत्र में बताए गए कारणों से कतई सहमत नहीं थे। उन्हें लग रहा था कि खर्च की सीमा को बढ़ाना फ़िज़ूलखर्ची को दावत देना है। अगर एक जगह ढील दे दी जाए तो ऐसी दस माँगें लेकर लोग सामने आ जाते हैं। लेकिन यह तो उनकी व्यक्तिगत राय थी।

दफ़्तर का एक अपना तरीका होता है और निर्णय में अन्य दूसरे लोगों की भी भूमिका होती है। लिहाज़ा उन्होंने वह पत्र अपने सहायक ज्ञान प्रकाश जी को इस निर्देश के साथ भेजा कि इस पर आवश्यक कार्रवाई की जाए।

ज्ञान प्रकाश जी खुर्राट सहायकों में से एक हैं। विभाग में लंबे अर्से से हैं और इस वजह से वे विभागीय ज्ञान के भंडार हैं। उन्हें कार्यालय नियमावली की चलती-फिरती लाइब्रेरी कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

ज्ञान प्रकाश जी ने तुरंत वह फ़ाइल निकाली जो मोबाइल फ़ोन के खर्च में

ध्यान देने की बातें

- *सरकारी पत्र औपचारिक पत्र की श्रेणी में आते हैं।*
- *प्राय: ये पत्र एक कार्यालय, विभाग अथवा मंत्रालय से दूसरे कार्यालय, विभाग या मंत्रालय को लिखे जाते हैं।*
- *पत्र के शीर्ष पर कार्यालय, विभाग या मंत्रालय का नाम व पता लिखा जाता है।*
- *पत्र के बाईं तरफ़ फ़ाइल संख्या लिखी जाती है जिससे यह स्पष्ट हो सके कि पत्र किस विभाग द्वारा किस विषय के तहत कब लिखा जा रहा है।*
- *जिसे पत्र लिखा जा रहा है उसका नाम, पता आदि बाईं तरफ़ लिखा जाता है। कई बार अधिकारी का नाम भी दिया जाता है।*
- *'सेवा में' का प्रयोग धीरे-धीरे कम हो रहा है।*
- *'विषय' शीर्षक के अंतर्गत संक्षेप में यह लिखा जाता है कि पत्र किस प्रयोजन के लिए या किस संदर्भ में लिखा जा रहा है।*
- *विषय के बाद बाईं तरफ़ 'महोदय' संबोधन लिखा जाता है।*
- *पत्र की भाषा सरल एवं सहज होनी चाहिए। क्लिष्ट शब्दों के प्रयोग से बचना चाहिए।*
- *अनेक बार सटीक अर्थ प्रेषित करने के लिए प्रशासनिक शब्दावली का प्रयोग करना ही उचित होता है।*
- *इस पत्र के बाईं ओर प्रेषक का पता और तारीख दी जाती है।*
- *पत्र के अंत में 'भवदीय' शब्द का प्रयोग अधोलेख के रूप में होता है।*
- *भवदीय के नीचे पत्र भेजने वाले के हस्ताक्षर होते हैं। हस्ताक्षर के नीचे कोष्ठक में पत्र लिखने वाले का नाम मुद्रित होता है। नाम के नीचे पदनाम लिखा जाता है।*

© NCERT not to be republished

कटौती से संबंधित थी। फ़ाइल और इसमें लगे परिपत्र उन्हें मुखाग्र थे। फिर भी उन्होंने उन पर एक नज़र डालने के बाद फ़ाइल पर कुछ इस प्रकार की टिप्पणी लिखी–

मुख्य टिप्पण (नोटिंग)

यह टिप्पणी मुंबई स्थित क्षेत्रीय कार्यालय के निदेशक के उस पत्र से संबंधित है जिसकी फ़ा.संख्या मुंबई/का./5/2005 है और जो दिनांक 15 मार्च, 2005 को भेजी गई है। पत्र में ये निदेशक ने मोबाइल फ़ोन के मासिक व्यय पर लगाई गई सीमा को दो हज़ार रुपये से छह हज़ार रुपये तक बढ़ाए जाने का आग्रह किया है।

इस संदर्भ में महानिदेशालय द्वारा दिनांक 23 नवंबर, 2004 को जारी परिपत्र पर ध्यान देना आवश्यक है जो इस फ़ाइल की पृष्ठ संख्या 12 पर है। इस परिपत्र में खर्च की सीमा दो हज़ार रुपये निर्धारित कर दी गई है और किसी भी परिस्थिति में किसी प्रकार की छूट का प्रावधान नहीं है।

इस सिलसिले में कृपया इस फ़ाइल में इसी विषय पर की गई पहले की टिप्पणी को देखें जो पृष्ठ संख्या 8/टिप्पण पर है। टिप्पणी को पढ़ने से स्पष्ट है कि खर्च की सीमा का निर्धारण सभी पहलुओं पर विचार करने के बाद सोच समझकर लिया गया है।

यह भी विचारणीय है कि खर्च की सीमा बोर्ड की स्वीकृति से निर्धारित हुई है और बिना बोर्ड की अनुमति के इसमें किसी भी प्रकार का बदलाव संभव नहीं है।

विचारार्थ प्रस्तुत

अनुभाग अधिकारी

(ज्ञान प्रकाश)
सहायक

ध्यान देने की बातें

- *किसी भी विचाराधीन पत्र अथवा प्रकरण को निपटाने के लिए उस पर जो राय, मंतव्य, आदेश अथवा निर्देश दिया जाता है वह टिप्पणी कहलाती है।*
- *टिप्पणी शब्द अंग्रेज़ी के नोटिंग शब्द के अर्थ में प्रयुक्त होता है। टिप्पणी लिखने की प्रक्रिया को हम टिप्पण यानी नोटिंग कहते हैं।*
- *टिप्पणी का उद्देश्य उन तथ्यों को स्पष्ट तथा तर्कसंगत रूप से प्रस्तुत करना है जिन पर निर्णय लिया जाना है। साथ ही उन बातों की ओर भी संकेत करना है जिनके आधार पर उक्त निर्णय संभवत: लिया जा सकता है।*
- *टिप्पण का उद्देश्य मामलों को नियमानुसार निपटाना है।*
- *टिप्पण मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं–सहायक स्तर पर टिप्पण तथा अधिकारी स्तर पर टिप्पण।*
- *कार्यालय में टिप्पण कार्य अधिकतर सहायक स्तर पर होता है।*
- *इसे आरंभिक टिप्पण या मुख्य टिप्पण कहते हैं जिसमें सहायक विचाराधीन मामले का संक्षिप्त ब्योरा देते हुए उसका विवेचन करता है।*

© NCERT not to be republished

- *इस प्रकार के टिप्पण में सबसे पहले मूल पत्र या आवती में दिए गए विवरण या तथ्य का सार दिया जाता है। फिर निहित प्रस्ताव की व्याख्या की जाती है और संबंधित नियमों-विनियमों का हवाला देते हुए अपनी राय दी जाती है।*
- *टिप्पणी लिखने के बाद सहायक अधिकारी दाहिनी ओर अपने हस्ताक्षर कर उसे अपने अधिकारी के सम्मुख प्रस्तुत करता है। जिस अधिकारी को प्रस्तुत किया जाना है उसका पदनाम वहाँ बाईं ओर लिखा जाता है।*
- *टिप्पणी लिखने से पूर्व सहायक के लिए संबंधित विषय को समझना बहुत आवश्यक होता है।*
- *टिप्पणी अपने आप में पूर्ण एवं स्पष्ट होनी चाहिए। इसमें असली मुद्दे पर अधिक बल देना चाहिए।*
- *टिप्पणी संक्षिप्त, विषय-संगत, तर्कसंगत और क्रमबद्ध होनी चाहिए।*
- *टिप्पणकार को अपने विचार संतुलित एवं शिष्ट भाषा में देने चाहिए। इसमें व्यक्तिगत आक्षेप, उपदेश या पूर्वाग्रहों के लिए कोई स्थान नहीं होता।*
- *टिप्पणी सदैव अन्य पुरुष में लिखी जाती है।*

श्री ज्ञान प्रकाश जी के ज्ञान से प्रकाशित होने के बाद फ़ाइल अब शंकरन जी के पास आ गई। वे तो पहले से ही भरे बैठे थे।

ज्ञान प्रकाश जी की टिप्पणी को पढ़ने के बाद उनकी बाछें खिल गईं। ज्ञान प्रकाश जी की मुख्य टिप्पणी के नीचे उन्होंने अपनी **आनुषंगिक टिप्पणी** कुछ इस प्रकार से दर्ज की–

आनुषंगिक टिप्पण

मैं ऊपर लिखी टिप्पणी से सहमत हूँ, साथ ही इस ओर भी ध्यान दिलाना चाहूँगा कि मुंबई कार्यालय के निदेशक पिछले छह महीने से निर्धारित सीमा से अधिक खर्च करते रहे हैं, जो परिपत्र का उल्लंघन है। चूँकि परिपत्र में किसी प्रकार की छूट का प्रावधान नहीं है। अत: अतिरिक्त राशि निदेशक द्वारा देय होनी चाहिए। यह राशि निदेशक के वेतन से काटी जा सकती है।

विचारार्थ

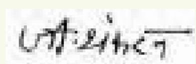

(जी. शंकरन)

उपनिदेशक (प्रशासन) — अनुभाग अधिकारी

ध्यान देने की बातें

- *सहायक, आरंभिक या मुख्य टिप्पणी को जब संबंधित अधिकारी के पास भेजता है तो वह अधिकारी टिप्पणी पढ़ने के बाद नीचे मंतव्य लिखता है। इसे आनुषंगिक टिप्पणी कहते हैं और यह क्रिया आनुषंगिक टिप्पण कहलाती है।*
- *अगर अधिकारी अपने अधीनस्थ की टिप्पणी से पूरी तरह सहमत है तो इस प्रकार की टिप्पणी की आवश्यकता नहीं होती। अधिकारी अधीनस्थ की टिप्पणी के नीचे या तो केवल हस्ताक्षर भर करता है या 'मैं उपर्युक्त टिप्पणी से सहमत हूँ', लिखता है।*

© NCERT not to be republished

- *अगर अधिकारी अपने अधीनस्थ की टिप्पणी से पूरी तरह सहमत है मगर उसे और सशक्त एवं तर्कसंगत बनाने के लिए अपनी ओर से भी कुछ जोड़ना चाहता है तो वह अपना मंतव्य आनुषंगिक टिप्पणी के रूप में दर्ज कर देता है।*
- *यदि अधिकारी पूर्णत: असहमत है या आंशिक रूप से सहमत है तो वह अपने तर्क और कारणों के साथ अपनी आनुषंगिक टिप्पणी करता है।*
- *अधिकारी को अधीनस्थ की टिप्पणी को काटने, बदलने या हटाने का अधिकार नहीं है। वह केवल अपनी सहमति, आंशिक सहमति या असहमति व्यक्त कर सकता है।*
- *आनुषंगिक टिप्पणी प्राय: संक्षिप्त होती है लेकिन असहमति की स्थिति में कई बार इस प्रकार की टिप्पणी बड़ी भी हो सकती है।*

अब फ़ाइल एक और सीढ़ी चढ़कर राजकुमार शर्मा जी की मेज़ पर आ गई जो उपनिदेशक (प्रशासन) हैं। कामकाज को वे बड़ी ही दक्षता और फुर्ती से निपटाते हैं, वे नियमों के पाबंद हैं और उसमें कोताही उन्हें पसंद नहीं। जब भी कोई फ़ाइल उन तक पहुँचती है, तो वे उसमें किसी गोताखोर की तरह डुबकी लगाते हैं और मोती निकाल लाते हैं। इस फ़ाइल की गहराई में भी वे कुछ इसी प्रकार उतरे। विचार के जो मोती निकले उसे उन्होंने फ़ाइल पर इस प्रकार जड़ा–

मैं सहायक से सहमत हूँ। साथ ही यह भी जोड़ना चाहूँगा कि 23 नवंबर, 2004 को जब परिपत्र जारी किया गया था तब कॉल की दरें ज़्यादा थीं जो अब काफ़ी गिर चुकी हैं। ऐसे में यह साफ़ है कि प्रकारांतर से निर्धारित व्यय सीमा अपने आप ही बढ़ गई है। इसे और घटा दिया जाए तो संस्था के खर्च में कमी आएगी जो लोकहित में होगा।

मैं अनुभाग अधिकारी के इस सुझाव से सहमत नहीं हूँ कि सीमा से अधिक की धन राशि निदेशक के वेतन से वसूली जानी चाहिए। लेकिन उनसे विस्तार में स्पष्टीकरण माँगा जा सकता है।

विचारार्थ

(राज कुमार शर्मा)

उपमहानिदेशक (प्रशासन) उपनिदेशक (प्रशासन)

फ़ाइल अब गुफ़रान अहमद, उप महानिदेशक (प्रशासन) के पाले में थी। उन्होंने फ़ाइल को पढ़ने के बाद सहमति स्वरूप हस्ताक्षर कर दिए। फ़ाइल का अगला पड़ाव महानिदेशक के पास था। मणिकांत मंडल, महानिदेशक थे। अपनी पूरी व्यस्तता के बावजूद वे हर फ़ाइल पूरी गहराई से पढ़ते थे। दफ़्तर में दस घंटे बैठने पर भी काम का बोझ बना रहता था और जब वे देर रात घर लौटते तो फ़ाइलों का गट्ठर साथ-साथ जाता। घर आई फ़ाइलें उनकी पत्नी को सौत की तरह लगतीं मगर वह भी थक-हारकर समझौता कर चुकी थीं।

मंडल जी एक अनुभवी और सुलझे इंसान थे। फ़ाइल पढ़कर उन्होंने महसूस किया कि नीचे के अधिकारियों ने नियमानुसार सही टिप्पणी लिखी है। लेकिन वे मुंबई कार्यालय के निदेशक के पक्ष से भी सहमत थे। दौरे पर मुंबई आते-जाते उन्हें वहाँ की परिस्थितियों का ज्ञान था। उन्होंने सोच-विचार के बाद अपनी टिप्पणी इस प्रकार लिखी।

© NCERT not to be republished

प्रशासन विभाग के अधिकारियों ने नियमानुसार सही टिप्पणी लिखी है। मगर निदेशक ने खर्च की सीमा के अतिक्रमण के जो कारण दिए हैं उन्हें भी नकारा नहीं जा सकता। अपने दौरों में मैंने यह पाया कि पिछले छह महीनों के दौरान केंद्र की गतिविधियों में जो बढ़ोतरी हुई है उन्हें ध्यान में रखते हुए मोबाइल फ़ोन पर हुआ खर्च उचित प्रतीत होता है।

खर्च की सीमा संबंधी परिपत्र तैयार करने के क्रम में अलग-अलग केंद्रों की विशिष्ट आवश्यकताओं को ध्यान में नहीं रखा गया है। मुंबई की तुलना अन्य स्थानों से नहीं हो सकती। अत: मुंबई के लिए खर्च की सीमा बढ़ा कर छह हज़ार रुपए प्रतिमास करना युक्तिसंगत प्रतीत होता है।

चूँकि मासिक व्यय संबंधी पिछला परिपत्र बोर्ड की अनुमति के बाद जारी किया गया था। अत: बोर्ड की अगली बैठक में इस पूरे मसले को प्रस्तुत कर उनकी अनुमति ली जानी चाहिए।

मणिकांत मंडल

(मणिकांत मंडल)

उपमहानिदेशक (प्रशासन) महानिदेशक

उधर अपने पत्र का कोई जवाब न पा कर मुंबई केंद्र के निदेशक राकेश कुमार जी चिंता में पड़ गए। उन्होंने महानिदेशालय को अपनी पहली चिट्ठी की याद दिलाने के लिए **स्मरण पत्र** या **अनुस्मारक (रिमाइंडर)** भेजा जो इस प्रकार था–

अनुस्मारक या स्मरण पत्र

अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति संस्थान
क्षेत्रीय कार्यालय : मुंबई

फा.संख्या : मुंबई/वा/5/2005/372 मुंबई, 26 अप्रैल, 2005
सेवा में,

महानिदेशक
अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति संस्थान,
तिलक मार्ग, नयी दिल्ली 110001

विषय : मोबाइल फ़ोन पर होने वाले व्यय के लिए निर्धारित सीमा।

महोदय,
कृपया उपर्युक्त विषय पर इस कार्यालय द्वारा भेजे गए समसंख्यक पत्र का स्मरण करें जो 15 मार्च, 2005 को भेजा गया था।

निवेदन है कि मोबाइल फ़ोन की मासिक व्यय सीमा को बढ़ाने संबंधी इस कार्यालय के अनुरोध पर विचार कर कृपया आवश्यक स्वीकृति जारी की जाए।

भवदीय
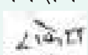
(राकेश कुमार)
निदेशक

ध्यान देने की बातें

- *जब किसी पत्र, ज्ञापन इत्यादि का उत्तर समय पर प्राप्त नहीं होता तो याद दिलाने के लिए 'अनुस्मारक' भेजा जाता है। इसे 'स्मरण पत्र' भी कहते हैं।*
- *इसका प्रारूप औपचारिक पत्र की तरह ही होता है मगर आकार छोटा होता है।*
- *अनुस्मारक के शुरू में पूर्व पत्र का हवाला दिया जाता है।*
- *जब एक से अधिक अनुस्मारक भेजे जाते हैं, तो पहले अनुस्मारक को 'अनुस्मारक-1', दूसरे को 'अनुस्मारक-2', तीसरे को 'अनुस्मारक-3' इत्यादि लिखते हैं।*

महानिदेशक ने इस अनुस्मारक को गुफ़रान अहमद, उपमहानिदेशक के पास इस हिदायत के साथ भेजा कि मुंबई कार्यालय के निदेशक को एक अंतरिम उत्तर भेज दिया जाए।

गुफ़रान अहमद के पास फ़ाइल भी लौट चुकी थी। महानिदेशक ने निचले अधिकारियों द्वारा की गई अनुशंसा को बिलकुल ही उलट दिया था। यह बात एक क्षण के लिए गुफ़रान अहमद

© NCERT not to be republished

को चुभी तो ज़रूर, लेकिन अनुभव ने उन्हें अच्छी तरह सिखा दिया था कि कार्यालय के दैनिक कार्यव्यापार में ऐसी उलट-फेर होती ही रहती है और इसे खेल भावना से ही लिया जाना चाहिए। उन्होंने तय किया कि बोर्ड की स्वीकृति के लिए भेजी जाने वाली टिप्पणी वे स्वयं ही तैयार करेंगे, और राकेश कुमार को अंतरिम उत्तर भी खुद ही भेजेंगे। मुंबई केंद्र के निदेशक राकेश कुमार को उन्होंने एक अंतरिम उत्तर **अर्धसरकारी पत्र (डी.ओ. लेटर)** के रूप में कुछ इस प्रकार भेजा–

अर्धसरकारी पत्र

अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति संस्थान

महानिदेशालय

नयी दिल्ली, 4 मई, 2005

फा.संख्या : 3/2/2005/ प्र.

गुफ़रान अहमद,

उपमहानिदेशक

प्रिय श्री कुमार,

कृपया 15 मार्च, 2005 और 26 अप्रैल, 2005 को भेजे गए अपने पत्रों का स्मरण करें, जो मोबाइल फ़ोन पर किए जाने वाले मासिक व्यय की सीमा बढ़ाने के बारे में थे।

आपके अनुरोध पर कार्रवाई की जा रही है। चूँकि व्यय सीमा में बढ़ोतरी के लिए बोर्ड की अनुमति आवश्यक है अत: हम इस मसले को बोर्ड की अगली बैठक में प्रस्तुत करेंगे।

इस मसले पर बोर्ड के निर्णय से हम आपको अवगत करा देंगे।

शुभकामनाओं सहित

आपका

(गुफ़रान अहमद)

निदेशक

श्री राकेश कुमार

दूरदर्शन केंद्र, मुंबई

© NCERT not to be republished

ध्यान देने की बातें

- *औपचारिक-पत्र के विपरीत अर्ध-सरकारी पत्र में अनौपचारिकता का पुट होता है। इसमें एक मैत्री भाव होता है।*
- *अर्ध-सरकारी पत्र तब लिखे जाते हैं जब लिखने वाला अधिकारी संबंधित अधिकारी को व्यक्तिगत स्तर पर जानता है।*

- *इस प्रकार का पत्र ऐसी स्थिति में भी लिखा जाता है जब किसी खास मसले पर संबोधित अधिकारी का ध्यान व्यक्तिगत रूप से आकर्षित कराया जाता है या उसका व्यक्तिगत परामर्श लिया जाए।*
- *प्रारूप में बाईं ओर शीर्ष पर प्रेषक का नाम होता है। इसके नीचे उसका पदनाम होता है।*
- *अर्ध-सरकारी पत्र के लिए अमूमन कार्यालय के 'लेटर हेड' का प्रयोग होता है, अगर उपलब्ध हो।*
- *पत्र के प्रारंभ में संबोधन के रूप में महोदय या प्रिय महोदय का प्रयोग नहीं होता। ऐसे पत्र में आमतौर पर प्रयोग किया जाने वाला संबोधन 'प्रिय श्री...' या 'प्रियवर श्री..., हो सकता है।*
- *पत्र के अंत में अधोलेख के रूप में दाहिनी ओर 'भवदीय' के स्थान पर 'आपका' का प्रयोग किया जाता है।*
- *अंत में बाईं ओर संबोधित अधिकारी का नाम, पदनाम और पूरा पता दिया जाता है।*

गुफ़रान अहमद की अगली जवाबदेही इस मसले को बोर्ड के समक्ष रखने की थी। उन्होंने पूरी फ़ाइल को विस्तार से पढ़ा और बोर्ड के विचारार्थ एक विस्तृत टिप्पणी तैयार की जिसमें पूरे मसले की पृष्ठभूमि और निदेशक के अनुरोध के औचित्य का विश्लेषण था और अंत में यह सिफ़ारिश की गई थी कि मुंबई केंद्र के लिए सीमा बढ़ा दी जाए। **टिप्पणी** इस प्रकार थी:

टिप्पण

अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति बोर्ड की पचपनवीं बैठक के विचारार्थ प्रस्तुत टिप्पणी

विषय : मोबाइल फ़ोन के लिए निर्धारित व्यय सीमा

बोर्ड ने 12 नवंबर, 2004 को हुई अपनी तैंतालीसवीं बैठक में निर्णय लिया था कि विभिन्न क्षेत्रीय कार्यालयों के निदेशकों को कार्यालय द्वारा प्रदान मोबाइल फ़ोन पर किए जाने वाले खर्च की सीमा दो हज़ार रुपए प्रतिमाह हो (बैठक के कार्यवृत्त का संबंधित अंश संलग्न है)।

बोर्ड के निर्णय का पालन करते हुए महानिदेशालय ने इस संबंध में 23 नवंबर, 2004 को एक परिपत्र जारी किया था। जिसकी एक प्रति संलग्न है।

संस्थान के मुंबई स्थित क्षेत्रीय कार्यालय में ऐसा महसूस किया जा रहा है कि यह सीमा कार्यालय के दक्ष, सुचारु और प्रभावी संचालन में बाधक बन रही है।

निदेशक ने सूचित किया है कि कार्यालय की गतिविधियों में निरंतर वृद्धि हुई है। जिसकी वजह से निदेशक को मोबाइल फ़ोन का अत्यधिक प्रयोग करना पड़ रहा है। उन्हें विभिन्न विशेषज्ञों, कलाकारों, साहित्यकारों, संगीतकारों, प्रायोजकों, वरिष्ठ अधिकारियों, सहकर्मियों और अन्य कर्मियों के साथ निरंतर संपर्क में रहना पड़ता है।

कार्यालय की गतिविधियों में जो बढ़ोतरी हुई है उससे कार्यालय का राजस्व भी बढ़ा है। ऐसे में यह आवश्यक प्रतीत होता है कि केंद्र के अनुरोध को स्वीकार करते हुए उनकी मासिक व्यय सीमा दो हज़ार रुपये से बढ़ा कर छह हज़ार रुपये कर दी जाए।

बोर्ड के विचारार्थ प्रस्तुत

ध्यान देने की बातें

- *यह अपने स्वरूप में आरंभिक या मुख्य टिप्पणी से काफ़ी मिलती है।*
- *चूँकि यह टिप्पणी फ़ाइल के ऊपर लिख कर स्वतंत्र रूप से भेजी जाती है अत: इसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि यह अपने आप में संपूर्ण हो और केवल इस टिप्पणी को पढ़ लेने भर से पूरा मसला समझ में आ जाए।*
- *यदि आवश्यक हो तो संदर्भ के लिए किसी पिछली टिप्पणी, पत्र, ज्ञापन इत्यादि को संलग्नक के रूप में टिप्पणी के साथ लगाया जा सकता है।*
- *बोर्ड के पास भेजी जाने वाली स्वत: स्पष्ट टिप्पणी किसी मसले पर बोर्ड की स्वीकृति प्राप्त करने के लिए होती है। इसके लिए प्रारंभ में मसले की पृष्ठभूमि दी जाती है और उसके विभिन्न पहलुओं का विवेचन किया जाता है। इसके बाद स्वीकृति क्यों दी जानी चाहिए उसके समर्थन में तर्क दिए जाते हैं। अंत में स्वीकृति प्रदान किए जाने का अनुरोध होता है।*

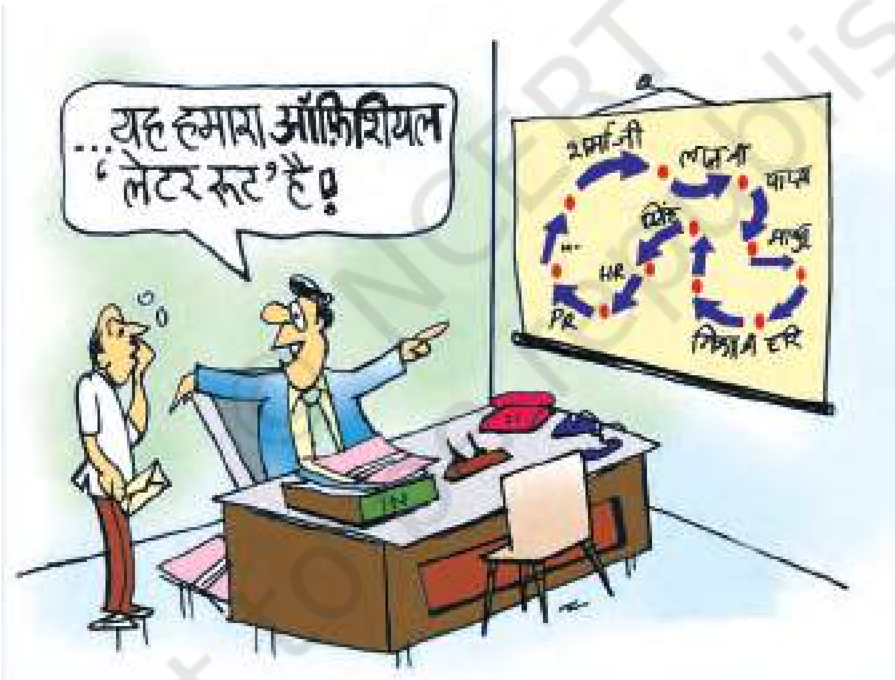

श्री गुफ़रान अहमद ने बोर्ड को भेजी जाने वाली टिप्पणी के मसौदे को महानिदेशक के पास स्वीकृति के लिए भेजा। स्वीकृति मिलते ही यह टिप्पणी बोर्ड के सचिव श्री विष्णु सहाय के पास इस अनुरोध के साथ भेज दी गई कि इसे बोर्ड की पचपनवीं बैठक के समक्ष स्वीकृति के लिए प्रस्तुत कर दिया जाए जो 17 मई, 2005 को निर्धारित है।

श्री सहाय को जब यह अनुरोध मिला तो वे 17 मई को होने वाली बैठक की कार्यसूची बना रहे थे। उन्होंने इस मुद्दे को भी कार्य सूची में शामिल कर लिया। **कार्यसूची** (एजेंडा) इस प्रकार थी–

कार्यसूची

अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति बोर्ड की पचपनवीं बैठक की कार्यसूची

1. चौवनवीं बैठक के कार्यवृत्त की संपुष्टि
2. पिछली बैठकों के लिए किए गए निर्णयों के अनुपालन की समीक्षा
3. लेखकों, कलाकारों और विशेषज्ञों को दिए जाने वाले पारिश्रमिक की समीक्षा
4. संस्थान द्वारा आयोजित कार्यक्रमों की गुणवत्ता बढ़ाए जाने संबंधी प्रतिवेदन पर चर्चा
5. मोबाइल फ़ोन पर होने वाले मासिक व्यय पर लगाई गई सीमा की समीक्षा
6. अध्यक्ष की अनुमति से किसी भी अन्य विषय पर विमर्श

बोर्ड की बैठक अपनी निर्धारित तिथि यानी 17 मई 2005 को संपन्न हो गई। यह बोर्ड एक शीर्ष संगठन था जिसका काम अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति संगठन के कामकाज पर निगरानी रखना और इसके लिए आवश्यक नीतियाँ तय करना था। इस बोर्ड में संस्थान के उच्च अधिकारियों के अलावा बाहरी सदस्य भी थे जो अपने-अपने क्षेत्रों के जाने-माने लोग थे। इन्होंने पूरे मसले पर जम कर चर्चा की और हर पक्ष को अच्छी तरह जाँचा परखा और बैठक की समाप्ति के बाद बोर्ड के सचिव श्री विष्णु सहाय ने बैठक का कार्यवृत्त तैयार किया जो इस प्रकार था–

_ध्यान देने की बातें_

किसी भी संस्था की औपचारिक बैठक की कार्यसूची उस बैठक में चर्चा के लिए निर्धारित विषयों की अग्रिम जानकारी देती है। इससे बैठक के अनुशासित संचालन में सहायता मिलती है।

निर्धारित विषयों से संबंधित स्वत: स्पष्ट टिप्पणियाँ अपने संलग्नकों के साथ सदस्यों को कार्यसूची के साथ अग्रिम रूप से भेजी जानी चाहिए ताकि वे बैठक में पूरी तैयारी से आ सकें।

कार्यवृत्त (मिनिट्स)

दिनांक 17 मई, 2005 को आयोजित अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति बोर्ड की पचपनवीं बैठक का कार्यवृत्त

अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति बोर्ड की पचपनवीं बैठक बोर्ड मुख्यालय के समिति कक्ष में दिनांक 17 मई, 2005 को संपन्न हुई। बैठक की अध्यक्षता बोर्ड के अध्यक्ष श्री नरेंद्र देसाई ने की। बैठक में भाग लेने वाले माननीय सदस्यों की सूची इस प्रकार है–

1. विंसेंट अब्राहम, मुख्य कार्यकारी
2. श्रीमती देविका घोषाल, सदस्य (वित्त)

3. श्री राजकुमार मीना, सदस्य (कार्मिक)
4. श्री अक्षय पटनायक, सदस्य (योजना एवं विकास)
5. श्री मणिकांत मंडल, महानिदेशक, अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति संस्थान
6. श्रीमती राधिका बरुआ, सदस्य
7. श्री सुदीप हेम्ब्रम, सदस्य
8. श्री आर. कृष्णास्वामी, सदस्य

कार्रवाई के प्रारंभ में अध्यक्ष ने अपनी दक्षिण अफ़्रीका यात्रा की चर्चा करते हुए वहाँ की संस्कृति पर भूमंडलीकरण के प्रभावों का ज़िक्र किया। उन्होंने यह भी बताया कि दक्षिण अफ़्रीका के अनुभवों से हम क्या सबक ले सकते हैं।

उपर्युक्त सामान्य चर्चा के बाद बैठक की कार्यसूची में वर्णित विषयों पर विमर्श हुआ जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

1. चौवनवीं बैठक के कार्यवृत्त की संपुष्टि।
   बोर्ड ने चौवनवीं बैठक के कार्यवृत्त की संपुष्टि कर दी। इसमें लिए गए निर्णयों के अनुपालन पर एक प्रतिवेदन अगली बैठक में प्रस्तुत किया जाएगा।
2. पिछली बैठकों में लिए गए निर्णयों के अनुपालन की समीक्षा।
   बोर्ड ने पिछली बैठक में लिए गए निर्णयों के अनुपालन संबंधी प्रतिवेदन की विस्तार से समीक्षा की। जहाँ उन्होंने यह संतोष व्यक्त किया कि अधिकांश निर्णयों का पूर्ण रूप से अनुपालन हो चुका है वहीं उन्होंने इस बात पर भी ज़ोर दिया कि जिन निर्णयों का अनुपालन शेष है उन्हें अगली बैठक के पहले कार्यान्वित कर दिया जाना चाहिए।
3. लेखकों, कलाकारों और विशेषज्ञों को दिए जाने वाले पारिश्रमिक की समीक्षा।
   बोर्ड ने लेखकों, कलाकारों और विशेषज्ञों को दिए जाने वाले पारिश्रमिक पर विस्तृत चर्चा की। ऐसा महसूस किया गया कि लेखकों, कलाकारों और विशेषज्ञों को दिया जाने वाला मौजूदा पारिश्रमिक पाँच वर्ष पूर्व निर्धारित किया गया था, जो समय और परिस्थितियों के आलोक में अपनी प्रासंगिकता खो चुका है। अत: पारिश्रमिक की दरों में वृद्धि अत्यावश्यक है ताकि अच्छे लेखक, कलाकार और विशेषज्ञ, संस्थान से जुड़े रहें और उनका सर्वश्रेष्ठ योगदान संस्थान को प्राप्त हो। इस संबंध में बोर्ड ने संस्थान द्वारा प्रस्तावित नयी दरों पर दृष्टि डाली और उन्हें संतोषजनक पाते हुए अपनी स्वीकृति दे दी। बोर्ड ने यह भी टिप्पणी की कि ये दरें अविलंब लागू की जानी चाहिए।
4. संस्थान द्वारा आयोजित कार्यक्रमों की गुणवत्ता बढ़ाए जाने संबंधी प्रतिवेदन पर चर्चा बोर्ड ने संस्थान द्वारा आयोजित कार्यक्रमों की गुणवत्ता बढ़ाए जाने संबंधी राधानंदन समिति की सिफ़ारिशों पर भी चर्चा की। बोर्ड ने महसूस किया कि इन सिफ़ारिशों का अध्ययन और भी गहनता से किया जाना चाहिए। इसके लिए बोर्ड ने श्रीमती देविका घोषाल, सदस्य (वित्त) की अध्यक्षता में एक तीन सदस्यीय समिति का गठन किया। समिति के अन्य सदस्य श्री सुदीप हेम्ब्रम और श्री आर. कृष्णास्वामी होंगे। समिति अपनी रिपोर्ट दो माह के अंदर देगी।

5. मोबाइल फ़ोन पर होनेवाले व्यय पर लगाई गई सीमा की समीक्षा समिति ने इस मुद्दे पर विचार करते हुए संबंधित प्रस्ताव को अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी।
   बैठक में यह निर्णय भी लिया गया कि बोर्ड की अगली बैठक 14 और 15 जुलाई, 2005 को बंगलौर में होगी।

बोर्ड में लिए गए फ़ैसले के अनुसार लेखकों, कलाकारों और विशेषज्ञों के पारिश्रमिक में बढ़ोतरी के संबंध में एक प्रेस विज्ञप्ति भी जारी करनी थी। उन्होंने जनसंपर्क अधिकारी श्री देवेन्द्र शर्मा से इस बारे में अनुरोध किया। श्री शर्मा ने जो विज्ञप्ति जारी की वह इस प्रकार थी–

ध्यान देने की बातें

- *कार्यसूची में रेखांकित कार्यों पर हुए विचार-विमर्श का संक्षिप्त विवरण कार्यवृत्त में प्रस्तुत किया जाता है।*
- *इसमें क्रमश: उपस्थित लोगों की राय का पूरा विवरण दिया जाना चाहिए।*
- *उपस्थित व्यक्तियों के नाम पदानुसार दिए जाने चाहिए।*

प्रेस विज्ञप्ति (प्रेस रिलीज़)

अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति बोर्ड

प्रेस विज्ञप्ति

अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति संस्थान द्वारा आयोजित कार्यक्रमों से जुड़े लेखकों और कलाकारों के पारिश्रमिक में वृद्धि

अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति बोर्ड ने निर्णय लिया है कि *अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति संस्थान* द्वारा आयोजित कार्यक्रमों से जुड़े लेखकों, कलाकारों और विशेषज्ञों के पारिश्रमिक में तत्काल प्रभाव से वृद्धि कर दी जाए।

ध्यान दें कि इसके पूर्व लेखकों, कलाकारों के पारिश्रमिक में सन् 2000 में संशोधन किया गया था। पिछले कुछ समय से लेखकों और कलाकारों द्वारा यह शिकायत की जा रही थी कि संस्थान द्वारा दिए जाने वाले पारिश्रमिक की राशि बहुत कम है जिनके कारण अच्छी प्रतिभाएँ संस्थान से विमुख हो रही हैं।

लेखकों और कलाकारों की शिकायतों को ध्यान में रखते हुए बोर्ड ने पारिश्रमिक की बढ़ी दरों को मंज़ूरी देते हुए यह विश्वास व्यक्त किया है कि इससे अच्छी प्रतिभाओं को आकर्षित करने में तो मदद मिलेगी ही कार्यक्रमों की गुणवत्ता में भी सुधार होगा।

ध्यान देने की बातें

कोई संस्थान या व्यक्ति किसी विषय या किसी बैठक में जो निर्णय लेता है, उसे प्रेस विज्ञप्ति के माध्यम से सर्वसामान्य तक पहुँचाया जाता है। निर्णय में विलंब का कारण और उससे होने वाले लाभ के बारे में भी जानकारी दी जाती है।

© NCERT not to be republished

हम प्रेस विज्ञप्ति के चक्कर में मुख्य कथानक से हट गए हैं। आइए वापस लौटें। वैसे अब पटाक्षेप ही शेष है और यह काम गुफ़रान अहमद जी को सौंपा गया है। उन्हें बोर्ड के व्यय सीमा संबंधी फ़ैसले को कार्यान्वित करने के लिए एक परिपत्र जारी करना है। इस कथानक की चरम परिणति इस परिपत्र (सर्कुलर) के रूप में हुई–

अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति संस्थान
महानिदेशालय

पत्रांक : 24/13/प्र.2005 नयी दिल्ली, 27 मई 2005

परिपत्र

विषय : मोबाइल फ़ोन पर होने वाले व्यय के लिए निर्धारित सीमा

महानिदेशालय ने उपर्युक्त विषय पर दिनांक 23 नवंबर, 2004 को एक समसंख्यक परिपत्र जारी किया था।

उपर्युक्त परिपत्र द्वारा मोबाइल फ़ोन पर होने वाले व्यय की सीमा दो हज़ार रुपए प्रतिमाह निर्धारित की गई थी।

अखिल भारतीय साहित्य एवं संस्कृति बोर्ड द्वारा इस सीमा पर पुनर्विचार किया गया। तद्नुसार उपर्युक्त परिपत्र में आंशिक संशोधन करते हुए यह निर्णय लिया गया है कि मुंबई क्षेत्रीय कार्यालय के लिए यह सीमा छह हज़ार रुपये प्रतिमाह होगी।

उपर्युक्त परिपत्र के अन्य प्रावधान पूर्ववत रहेंगे।

यह निर्णय तत्काल प्रभाव से लागू होगा।

गुफ़रान अहमद

ध्यान देने की बातें

बैठक में लिए गए महत्त्वपूर्ण निर्णयों को कार्यान्वित करने के लिए परिपत्र जारी किया जाता है। जिस मुद्दे को लेकर पहला परिपत्र जारी किया जाता है उस मुद्दे पर होने वाला फ़ैसला भी परिपत्र के रूप में जारी किया जाता है जिसमें निर्णय को कार्यान्वित किए जाने के निर्देश होते हैं।

© NCERT not to be republished

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. नीचे कुछ स्थितियाँ दी गई हैं। इनमें आप पत्राचार के किस रूप का प्रयोग करेंगे ? लिखिए–
   (क) किसी सरकारी–पत्र की कार्रवाई के रूप में फ़ाइल शुरू करके विषय का निपटान करना।
   (ख) विचाराधीन मामलों को निपटाने के लिए लिखित सुझाव देना।
   (ग) जब सरकार को जन–सामान्य तक कोई सूचना पहुँचानी हो।
   (घ) किसी विभाग को कोई सूचना अपने विभाग के कर्मचारियों, अधिकारियों को देनी हो।
   (ङ) विभाग द्वारा श्रीमती रूपाली को अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान का डिप्लोमा करने संबंधी अनुमति प्रदान करना।
   (च) मंत्रालय द्वारा श्रीमती सुलेखा को शिक्षा–शिक्षण कार्यक्रम में शामिल होने संबंधी सूचना देना।
   (छ) किसी कार्य का अनुपालन न होने की स्थिति में उसके बारे में पुनः स्मरण कराना।
   (ज) अपने समकक्ष अधिकारी से किसी संदर्भ में परामर्श लेना।

2. आप राजकीय प्रतिभा विकास विद्यालय में हिंदी के शिक्षक हैं और जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय से एम.फ़िल करना चाहते हैं। विभाग से एम.फ़िल करने की अनुमति प्राप्त करने के लिए पत्र लिखिए।

3. विद्यालय में हुए पुरस्कार वितरण समारोह का कार्यवृत्त तैयार कीजिए।

4. निम्नलिखित पत्र को ध्यानपूर्वक पढ़िए।

भारतीय रिज़र्व बैंक
नयी दिल्ली

कार्यपालक निदेशक
आर.बी.आई./2006/136
फा.सं. 118/11/37.01/2005–06
6 अप्रैल, 2006
अध्यक्ष व प्रबंध निदेशक
सभी सार्वजनिक और निजी बैंक
नयी दिल्ली
विषय : सिक्के की स्वीकृति और वितरण संबंधी
महोदय/महोदया,
आप अपनी शाखाओं को तत्काल आदेश दें कि वे जनता के किसी भी सदस्य से बिना किसी प्रतिबंध के सभी मूल्यवर्गों के सिक्के स्वीकार करें। यदि कोई उपभोक्ता सिक्कों की माँग करता है तो उसे सभी मूल्यवर्गों के सिक्के भी उपलब्ध करवाने होंगे।

© NCERT not to be republished

हालाँकि 5, 10 और 20 पैसे मूल्यवर्गों के छोटे सिक्के बनाना बंद कर दिया गया है जबकि पहले जारी सिक्के जो अब भी प्रचलन में हैं। वे वैध मुद्रा बने रहेंगे। कृपया इसकी पावती भेजें तथा अपनी कार्यवाही से अवगत करवाएँ।

भवदीया

(डॉ रश्मि सिन्हा)
कार्यपालक निदेशक

अभ्यास

(1) (क) पंजाब नेशनल बैंक द्वारा इसकी पावती रिज़र्व बैंक को भेजिए।

(ख) इस पत्र की विषय-वस्तु के आधार पर रिज़र्व बैंक द्वारा प्रेस विज्ञप्ति तैयार कीजिए।

(ग) रिज़र्व बैंक को अभी भी उपभोक्ताओं द्वारा शिकायतें मिल रही हैं। अतः रिज़र्व बैंक के महाप्रबंधक को दूसरे बैंकों को अनुस्मारक भेजना है, अतः इस अनुस्मारक को तैयार करने में उनकी मदद कीजिए।

(घ) पंजाब नेशनल बैंक ने अपनी सभी शाखाओं को कार्यालय आदेश भेजा। उपर्युक्त पत्र के आधार पर आप कार्यालय आदेश तैयार कीजिए।

(2) (क) पंजाब नेशनल बैंक की भीकाजी कामा प्लेस और सफ़दरजंग एंक्लेव की शाखाओं से अभी भी रिज़र्व बैंक को शिकायतें मिल रहीं हैं कि इन शाखाओं में सिक्कों को स्वीकार नहीं किया जाता, इसलिए कार्यपालक निदेशक को पंजाब नेशनल बैंक के अध्यक्ष को एक अर्ध-सरकारी पत्र लिखना है, जिसे आप तैयार कीजिए।

(ख) पंजाब नेशनल बैंक के महाप्रबंधक को जब यह पत्र मिलता है तब वह अपने अधिकारी से इसका जवाब माँगता है। इस विषय-वस्तु को ध्यान में रखते हुए सहायक और अधिकारी की टिप्पणी लिखिए।

(संकेत–सहायक बैंक की शाखा में पिछले छह महीनों का ब्योरा देगा कि कितने सिक्के उन्होंने स्वीकार किए और कितने सिक्के जारी किए। अधिकारी अपनी टिप्पणी में इसे निराधार बताएगा।)

© NCERT not to be republished

11071CH15

15

स्ववृत्त (बायोडेटा) लेखन और रोज़गार संबंधी आवेदन पत्र

इस पाठ में...

- स्ववृत्त की विशेषताएँ
- स्ववृत्त का रूप-आकार
- स्ववृत्त की प्रस्तुति
- विविध सूचनाओं का ब्योरा
- स्ववृत्त और आवेदन-पत्र

यह हो सकता है कि कोई अपना रास्ता चुने
भी और उस पर अकेला भी न हो?
राजमार्ग पर चलने वाले रास्ता नहीं चुनते,
रास्ता उन्हें चुनता है।

–सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'
हिंदी साहित्यकार

विद्यार्थी के मन में अपने भविष्य को लेकर तरह-तरह की कल्पनाएँ होती हैं। कुछ अपना स्वतंत्र उद्यम या व्यवसाय खड़ा करने का स्वप्न देखते हैं तो कुछ अपनी मनचाही नौकरी पाने का ख्वाब बुनते हैं। कोई डॉक्टर बनना चाहता है तो कोई इंजीनियर। कोई मैनेजर बनना चाहता है तो कोई बैंकर। वहीं कुछ शिक्षक बनना चाहते हैं। विद्यार्थी जीवन होता ही है कल्पनाओं का संसार रचने और उसे हकीकत में बदलने का प्रयास। एक दिन छात्र-जीवन अपनी परिणति प्राप्त करता है और फिर हम अपनी कल्पना के महल के दरवाज़े पर दस्तक देने लगते हैं, अंदर प्रवेश का अरमान सँजोए।

लेकिन कई बार उस महल के द्वार पर प्रवेशार्थियों की अच्छी खासी भीड़ जमा हो जाती है और अंदर जगह की कमी होती है। कुछ को प्रवेश मिल पाता है और अधिकांश बाहर ही रह जाते हैं। द्वार के दोबारा खुलने की प्रतीक्षा करते हुए। नरेंद्र भी एक वैसा ही प्रतीक्षारत प्रवेशार्थी है।

© NCERT not to be republished

नरेंद्र मार्केटिंग मैनेजर बनना चाहता है। सच पूछा जाए तो अंततः इसके भी बहुत आगे जाना चाहता है। इस दिशा की पहली सीढ़ी है मार्केटिंग एक्ज़क्यूटिव का पद। इसके लिए नरेंद्र कुछ समय से जी तोड़ कोशिश कर रहा है। अखबारों, बिज़नेस पत्रिकाओं और इंटरनेट पर वह विज्ञापनों की तलाश करता रहता है और लगातार आवेदन भेजता रहता है मगर या तो आवेदन का उत्तर ही नहीं मिलता या फिर नकारात्मक उत्तर आता है।

आज फिर दरवाज़े की घंटी बजी। बाहर पोस्टमैन खड़ा था। नरेंद्र के दिल की धड़कन बढ़ गई। आशाओं और आशंकाओं के मिश्रित ऊहापोह के साथ उसने दरवाज़ा खोला। पत्र किसी कंपनी से ही आया था। धड़कते हृदय के साथ लिफ़ाफ़ा खोला। फिर वही ढाक के तीन पात। वही नकारात्मक उत्तर।

नरेंद्र के चाचा जी मुंबई से आजकल घर पर ही आए हुए हैं। चाचा जी मुंबई में एक बड़ी कंपनी के मानव संसाधन विभाग में बड़े पद पर हैं। उनकी नज़र नरेंद्र के उदास चेहरे पर पड़ती है।

नरेंद्र! चेहरा इस तरह उतरा हुआ क्यों है? इतने उदास क्यों नज़र आ रहे हो?

वैसे तो नरेंद्र का अहं उसे अपना दुख बाँटने से रोकता था लेकिन इस समय वह फट पड़ा। जख्म ताज़ा-ताज़ा था।

"चाचा जी! मैं मार्केटिंग एक्ज़क्यूटिव के पद के लिए न जाने कितनी बार प्रयत्न कर चुका हूँ। अगर मुझे साक्षात्कार के लिए बुलावा मिल जाए तो मुझे विश्वास है कि मैं अवश्य ही चुन लिया जाऊँगा। मगर उसकी नौबत ही नहीं आती। या तो जवाब ही नहीं आता या फिर इंकार का पत्र आ जाता है। लगता है अपने भाइयों या रिश्तेदारों को ही चुन लेते हैं।"

चाचा जी मुसकराए। मानव संसाधन विभाग में काम करने की वजह से ऐसी फब्तियाँ सुनने का उनका अनुभव पुराना था। असफल उम्मीदवार कई बार अनेक तरह के उलटे-सीधे पत्र लिखते थे। उन्होंने संयत होकर नरेंद्र से कहा।

"बेटे ऐसी बात नहीं है। जिस तरह तुम्हें अपनी मनचाही नौकरी की तलाश है, उसी तरह कंपनियों को भी मनचाहे उम्मीदवार की खोज रहती है। मगर उनकी समस्या यह है कि वे जब भी कोई विज्ञापन निकालते हैं, उनके पास स्ववृत्तों का ढेर लग जाता है। कई बार तो पाँच पदों के लिए पाँच हज़ार स्ववृत्त आ जाते हैं। ऐसे में किसी भी कंपनी के लिए क्या यह संभव है कि

वह हर किसी को बुलाए और उनका साक्षात्कार करे? पाँच पदों के लिए अधिक से अधिक पचास उम्मीदवारों को ही बुलाया जा सकता है। ये पचास उम्मीदवार स्ववृत्त के आधार पर ही चुने जाते हैं।"

नरेंद्र आश्चर्यचकित होकर बोला यानी साक्षात्कार के बाद तो दस में से एक को चुना जाता है लेकिन साक्षात्कार के लिए बुलाया जाना ज़्यादा कठिन है। सौ में से एक उम्मीदवार को साक्षात्कार के लिए चुनते हैं, स्ववृत्त के आधार पर। शेष निन्यानवे के हाथ निराशा ही लगती है।

चाचा जी बोले, "हाँ बेटे! ऐसा ही है। हो सकता है उस निन्यानवे में कई ऐसे भी उम्मीदवार हों जो चुने गए उम्मीदवारों से अधिक योग्य हों। मगर चूँकि उनके स्ववृत्त अच्छी तरह बने हुए नहीं होते इसलिए वे पीछे छूट जाते हैं।"

नरेंद्र के लिए यह चौंकाने वाली बात थी।

चाचा जी आगे बोले, "तुम मार्केटिंग को अपना कैरियर बनाना चाहते हो। मगर नौकरी की तलाश भी एक प्रकार की मार्केटिंग ही है। इसमें तुम अपने ग्राहक को प्रेरित करते हो कि वह तुम्हारे प्रतियोगियों की तुलना में तुम्हें पसंद करे। जिस प्रकार ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए निर्माता लुभावने विज्ञापनों का सहारा लेता है उसी प्रकार उम्मीदवार के लिए यह ज़रूरी है कि वह अपना स्ववृत्त सुंदर और आकर्षक बनाए।"

चाचा जी जारी रहे–"एक स्ववृत्त की तुलना हम उम्मीदवार के दूत या प्रतिनिधि से कर सकते हैं। जिस प्रकार एक अच्छा दूत या प्रतिनिधि अपने स्वामी का एक सुंदर और आकर्षक चित्र प्रस्तुत करता है, उसी प्रकार एक अच्छा स्ववृत्त नियुक्तिकर्ता के मन में उम्मीदवार के प्रति अच्छी और सकारात्मक धारणा उत्पन्न करता है। एक अच्छा स्ववृत्त किसी चुंबक की तरह होता है जो नियुक्तिकर्ता को आकर्षित कर लेता है। नौकरी में सफलता के लिए योग्यता और व्यक्ति के साथ-साथ स्ववृत्त निर्माण की कला में निपुणता भी आवश्यक है। ध्यान रहे! पहली लड़ाई तो तुम्हारा स्ववृत्त ही तुम्हारे लिए लड़ता है। इस लड़ाई में जीतने के बाद ही खुद लड़ने की बारी आती है। अगर स्ववृत्त कमज़ोर हुआ तो लड़ाई शुरू में ही खत्म हो जाती है।"

नरेंद्र चाचा जी की बातों से अत्यंत प्रभावित हुआ। वह अपने कमरे में जाकर अपना स्ववृत्त ले आया और उसे चाचा जी को देते हुए बोला, "चाचा जी! क्या कमी है मेरे स्ववृत्त में?"

चाचा जी ने स्ववृत्त पर अपनी अनुभवी नज़र दौड़ाई और परखा। फिर बोले, "तुम्हारा स्ववृत्त सही तरीके से नहीं बना है। इसमें कमियाँ ही कमियाँ हैं। मैं तुम्हें बचपन से जानता हूँ और इसलिए यह कह सकता हूँ कि अगर तुम्हें साक्षात्कार का बुलावा मिल जाए तो तुम्हें सफल होने से कोई रोक नहीं सकता। तुम्हारे व्यक्तित्व में वे सारी खूबियाँ हैं जो एक अच्छे मार्केटिंग एक्ज़क्यूटिव में होनी चाहिए। मगर तुम्हारा स्ववृत्त इतने बुरे तरीके से बना हुआ है कि तुम्हारी गलत तसवीर पेश करता है और साक्षात्कार की नौबत ही नहीं आने देता। तुम्हें अपना स्ववृत्त दोबारा तैयार करना होगा।"

नरेंद्र को अपनी भूल समझ में आ रही थी। वह बोला, "चाचा जी क्या आप अच्छा स्ववृत्त बनाने में मेरा मार्गदर्शन करेंगे?"

चाचा जी ने सोफ़े पर अपनी मुद्रा बदली और बोले, "हाँ नरेंद्र, क्यों नहीं। मगर शुरुआत कहाँ से करूँ? चलो, इतना तो अब तक तुम्हें भी मालूम हो गया है कि स्ववृत्त एक विशेष प्रकार का लेखन है, जिसमें व्यक्ति विशेष के बारे में किसी विशेष प्रयोजन को ध्यान में रखकर सिलसिलेवार ढंग से सूचनाएँ संकलित की जाती हैं।"

नरेंद्र बोल पड़ा, "वाह चाचा जी! एक ही वाक्य में इतनी सारी बातें। यह तो गागर में सागर वाली बात हुई।"

चाचा जी आगे बोले, "हाँ बेटे! स्ववृत्त के दो पक्ष हैं। पहले पक्ष में वह व्यक्ति है जिसको केंद्र में रखकर सूचनाएँ संकलित की गई होती हैं। दूसरा पक्ष उस व्यक्ति या संस्था का है जिसके लिए या जिसके प्रयोजन को ध्यान में रखकर सूचनाएँ जुटाई जाती हैं। पहला पक्ष है उम्मीदवार और दूसरा पक्ष नियोक्ता।"

"सच है चाचा जी किसी भी व्यक्ति से संबंधित सूचनाओं का तो कोई अंत ही नहीं है। लेकिन हर सूचना नियोक्ता के काम की नहीं हो सकती। इसीलिए स्ववृत्त में वही सूचनाएँ डाली जा सकती हैं जिनमें दूसरे पक्ष यानी नियोक्ता की दिलचस्पी हो।"

"वाह नरेंद्र! तुम तो खासे समझदार हो! कुछ बातें जो मैं तुम्हें बताना चाहूँगा, उनमें पहली तो यह है कि स्ववृत्त में ईमानदारी होनी चाहिए। किसी भी प्रकार के झूठे दावे या अतिशयोक्ति से बचना चाहिए। यह मत भूलो कि नियोक्ता को उम्मीदवारों के चयन का अच्छा खासा अनुभव होता है। गलत या बढ़ा-चढ़ा कर किए गए दावों से उन्हें धोखा देने की कोशिश खतरनाक बन सकती है। अगर साक्षात्कार के लिए बुला भी लिया गया तो उस दौरान कलई खुलने का पूरा अंदेशा रहता है।"

"मगर इसका यह अर्थ भी नहीं है कि अपनी खूबियाँ और अच्छाइयाँ बताने में तुम कंजूसी बरतो। अपने व्यक्तित्व, ज्ञान और अनुभव के सबल पहलुओं पर ज़ोर देना तो कभी भी नहीं भूलना चाहिए।" नरेंद्र चाचा की बातें गौर से सुन रहा था। उसके मन में एक प्रश्न उभरा।

"चाचा जी! स्ववृत्त की भाषा-शैली कैसी होनी चाहिए?"

"स्ववृत्त में आलंकारिक भाषा की गुंजाइश नहीं है। इसीलिए इसकी शैली–सरल, सीधी, सटीक और साफ़ होनी चाहिए ताकि पढ़ने वाले को सारी बातें एक ही नज़र में स्पष्ट हो जाएँ और अर्थ निकालने के लिए दिमाग पर ज़ोर न डालना पड़े।"

नरेंद्र ने अगला प्रश्न पूछा, "क्या स्ववृत्त के आकार-प्रकार को लेकर भी कोई नियम है?"

चाचा जी ने जवाब दिया–"इसका कोई निश्चित नियम तो नहीं है लेकिन यह ध्यान रखना चाहिए कि स्ववृत्त न तो ज़रूरत से अधिक लंबा हो न ही ज़्यादा छोटा। अगर बहुत संक्षिप्त हुआ तो इसमें अनेक ज़रूरी चीज़ें आने से रह जाएँगी। दूसरी ओर यदि बहुत लंबा हुआ तो पढ़ने वाला अनेक पहलुओं को नज़रअंदाज कर सकता है।"

"लेकिन चाचा जी आप अपने अनुभव के आधार पर कुछ गुर तो बता ही सकते हैं।"

"बेटे, ध्यान देने की बात यह है कि जब पद बहुत बड़ा होता है तो उसके लिए उम्मीदवार भी कम होते हैं। मसलन यदि मैनेजिंग डायरेक्टर के पद के लिए विज्ञापन दिया जाए तो गिनती के लोग ही अपना स्ववृत्त भेजेंगे। ये सारे लोग अच्छी योग्यता और व्यापक अनुभव वाले होंगे। अतः इस स्थिति में स्ववृत्त यदि नौ-दस पृष्ठों का भी हुआ तो उसे ध्यानपूर्वक और बारीकी से पढ़ा जाएगा। लेकिन यदि नीचे के पद के लिए विज्ञापन दिया जाए तो बड़ी संख्या में आवेदन आएँगे। यहाँ पर यदि स्ववृत्त दो-तीन पृष्ठों से अधिक लंबा हुआ तो पढ़ने वाला अपना धैर्य खो सकता है।"

"यानी मेरी तरह जो कॉलेज से तुरंत निकला है उनका स्ववृत्त दो-तीन पृष्ठों से अधिक लंबा नहीं होना चाहिए।"

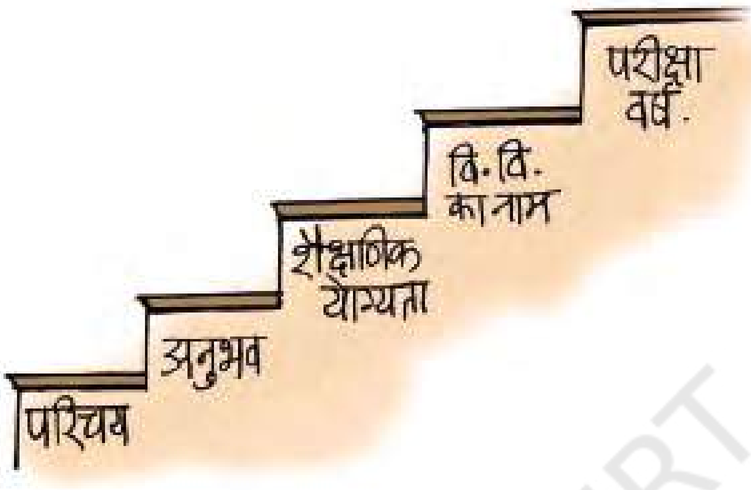

चाचा जी बोले, "हाँ! मोटेतौर पर तुम ऐसा मान सकते हो। एक और बात–स्ववृत्त साफ़–सुथरे ढंग से टंकित या कंप्यूटर–मुद्रित होना चाहिए। व्याकरण संबंधी भूलों को भी दूर कर लेना चाहिए। ये बातें छोटी लग सकती हैं मगर उम्मीदवार के प्रति विपरीत धारणा उत्पन्न करती हैं। नियोक्ता को ऐसा लग सकता है कि उम्मीदवार या तो लापरवाह है या फिर उसकी शिक्षा–दीक्षा ढंग से नहीं हुई है।"

नरेंद्र ने बात को आगे बढ़ाया, "चाचाजी! शुरू में आपने कहा था कि स्ववृत्त व्यक्ति विशेष के बारे में सूचनाओं का सिलसिलेवार संकलन है। क्या आप इसे और समझाएँगे! सूचनाओं का सिलसिला किस प्रकार का होना चाहिए।"

चाचा जी अपनी अनुभव सिद्ध वाणी में बोले–"बेटे स्ववृत्त सूचनाओं का एक अनुशासित प्रवाह है। यानी इसमें प्रवाह और अनुशासन दोनों ही होने चाहिए। प्रवाह व्यक्ति परिचय से प्रारंभ होता है और शैक्षणिक योग्यता, अनुभव, प्रशिक्षण, उपलब्धियाँ, कार्येतर गतिविधियाँ इत्यादि पड़ावों को पार करता हुआ अपनी पूर्णता प्राप्त करता है। स्ववृत्त के जो ये अवयव मैंने तुम्हें बताए हैं वे केवल उदाहरण के लिए हैं। आवश्यकतानुसार इनमें फेरबदल किया जा सकता है।"

नरेंद्र ने जिज्ञासा प्रकट की कि व्यक्ति परिचय में क्या–क्या बातें होनी चाहिए।

चाचा जी ने समझाया कि व्यक्ति परिचय के अंतर्गत उम्मीदवार का नाम, जन्मतिथि, उम्र, पत्र व्यवहार का पता, टेलीफ़ोन नंबर, ई–मेल का पता आदि सूचनाएँ दी जाती हैं। व्यक्ति परिचय में जन्म तिथि और माता–पिता का नाम अवश्य डालना चाहिए। जिन पदों के लिए बड़ी संख्या में आवेदन आते हैं वहाँ एक ही नाम के कई उम्मीदवार होते हैं। पिता के नाम और जन्मदिन के आधार पर उनमें आसानी से भेद किया जा सकता है।

नरेंद्र ने अगला सवाल उठाया, "चाचाजी व्यक्ति परिचय के बाद किस प्रकार की सूचनाएँ डाली जानी चाहिए?"

"यदि उम्मीदवार किसी बड़े पद के लिए आवेदन कर रहा है और बहुत अनुभवी है तो अनुभव की चर्चा व्यक्ति परिचय के तुरंत बाद डाली जा सकती है। लेकिन तुम्हारी तरह जो कॉलेज से तुरंत ही बाहर निकले हैं उन्हें व्यक्ति परिचय के तत्काल बाद अपनी शैक्षणिक योग्यताओं की चर्चा करनी चाहिए। शैक्षणिक योग्यताओं से संबंधित सूचनाएँ एक सारणी के रूप में प्रस्तुत की जानी चाहिए जिनमें प्राप्त डिप्लोमा या डिग्री का विवरण, स्कूल या कॉलेज का नाम, बोर्ड या विश्वविद्यालय का नाम, संबंधित परीक्षा का वर्ष, परीक्षा के विषय, प्राप्तांक प्रतिशत और श्रेणी का उल्लेख होना चाहिए।"

नरेंद्र ने सवाल किया पढ़ाई–लिखाई या अनुभव की चर्चा तो ठीक है मगर कार्येतर गतिविधियों की चर्चा क्यों ज़रूरी है।

चाचा जी सोफ़े पर बैठे–बैठे थोड़े बोर हो रहे थे। वे खड़े होकर कमरे में चहलकदमी करने लगे और खिड़की के पास खड़े होकर कहने लगे, "जब नियोक्ता किसी उम्मीदवार को चुनने का निर्णय लेता है तो उसके संपूर्ण व्यक्तित्व को ध्यान में रखता है। कार्येतर गतिविधियों के माध्यम से उम्मीदवार के व्यक्तित्व के बारे में अच्छी जानकारियाँ मिलती हैं और पद के लिए उसकी योग्यता को तय करना आसान हो जाता है। मसलन यदि कोई उम्मीदवार अच्छा फुटबॉल खिलाड़ी है तो यह माना जा सकता है कि उसमें टीम भावना अवश्य ही होगी। अगर किसी को भाषण या वाद–विवाद में ढेरों पुरस्कार मिल चुके हैं तो इससे उसकी वाक्पटुता और संभाषण कला का पता चलता है। यदि तुम्हारी ऐसी कोई गतिविधि या हॉबी हो, जो तुम्हारी उम्मीदवारी को सबल बनाते हों तो उनकी चर्चा करना मत भूलना।"

नरेंद्र बोल पड़ा, "चाचाजी मुझे तो भाषण और वाद–विवाद में बहुत सारे पुरस्कार मिले हैं। पर्यटन का भी मुझे शौक है। क्या मुझे अपने स्ववृत्त में इनकी चर्चा करनी चाहिए थी।"

"चाचा जी थोड़ा गुस्सा दिखाते हुए बोले, क्या अब तक तुम इनकी चर्चा करना भूल जाते थे? अगर तुम मार्केटिंग एक्ज़क्यूटिव का पद पाना चाहते हो तो तुम्हारी इस प्रकार की गतिविधियाँ तुम्हें अन्य उम्मीदवारों से मीलों आगे ले जा सकती हैं। मार्केटिंग एक्ज़क्यूटिव के रूप में वैसे लोग सफल साबित होते हैं जो वाक्पटु हों और जिन्हें घूमना–फिरना अच्छा लगता हो।"

चाचा जी को अचानक एक और बात याद आई। स्ववृत्त में दो–तीन वैसे लोगों के नाम पते भी दिए जा सकते हैं जो उम्मीदवार के रिश्तेदार न हों मगर उसकी योग्यताओं एवं क्षमताओं से परिचित हों। जिन लोगों का विवरण दिया जाए वे प्रतिष्ठित व्यक्ति हों। यदि वे उसी क्षेत्र के जाने–माने लोग हों जिस क्षेत्र में उम्मीदवार आवेदन कर रहा है तो यह सोने पर सुहागा वाली बात है।

"मगर चाचा जी! जो उम्मीदवार पहले से कहीं काम कर रहे हैं वे तो इस प्रकार का विवरण आसानी से जुटा लेंगे, मगर वे क्या करें जो कॉलेज से तुरंत निकले हैं और संबंधित उद्योग या क्षेत्र के लोगों से जिनका परिचय नहीं है।"

चाचा जी का उत्तर था–"जो कॉलेज से तुरंत निकले हैं उन्हें अपने प्रिंसिपल या प्रोफ़ेसरों के नाम–पते देने चाहिए। कालेज से तुरंत निकले छात्रों के मामले में नियोक्ता, प्रिंसिपल या प्रोफ़ेसरों की राय को महत्त्वपूर्ण मानते हैं क्योंकि इन लोगों ने उम्मीदवार को विद्यार्थी रूप में कई वर्षों तक नज़दीक से देखा–परखा होता है।"

नरेंद्र की सभी शंकाओं का समाधान हो गया था। चाचा जी को धन्यवाद देते हुए बोला, "चाचाजी आपने इतनी बहुमूल्य जानकारियाँ दीं। अब शायद स्ववृत्त की वजह से मैं खारिज नहीं किया जाऊँगा। शायद अगली बार मैं ज़रूर सफल हो जाऊँगा।"

चाचा जी मुसकराते हुए बोले, "धन्यवाद इस प्रकार नहीं। पहले मम्मी को चाय के लिए बोलो और आज का अखबार लेकर आओ। मैंने अब तक अखबार नहीं देखा है। और हाँ! जब तक मैं अखबार का दैनिक पारायण संपन्न करता हूँ तब तक तुम मुझे अपना एक स्ववृत्त बनाकर दिखलाओ। मैं भी तो देखूँ कि मेरी बातों का तुम पर क्या असर पड़ा है।"

चाचा जी अखबार के साथ चाय की चुस्कियाँ लेने लगे और नरेंद्र अपने कमरे में अपना स्ववृत्त तैयार करने लगा। कुछ समय के बाद वह बाहर निकला और चाचा जी के सामने उसने अपना स्ववृत्त पेश कर दिया।

स्ववृत्त इस प्रकार था–

स्ववृत्त

नाम	:	नरेंद्र कुमार
पिता का नाम	:	सुरेश कुमार
माँ का नाम	:	शबनम
जन्म तिथि	:	18 नवंबर, 1982
वर्तमान पता	:	डी 72, पाकेट चार, मयूर विहार (फ़ेज एक) दिल्ली 110092
स्थायी पता	:	वही
टेलीफ़ोन नं.	:	011-22718296
मोबाइल नं.	:	9868234859
ई-मेल	:	85narendra@yahoo.com

शैक्षणिक योग्यताएँ

क्र.सं.	परीक्षा/डिग्री/डिप्लोमा	वर्ष	विद्यालय/बोर्ड/महाविद्यालय/विश्वविद्यालय	विषय	श्रेणी	प्रतिशत
1.	दसवीं कक्षा	1997	राजकीय विद्यालय सीबीएसई	अंग्रेजी, हिंदी, विज्ञान, गणित सामाजिक विज्ञान	प्रथम	93%
2.	बारहवीं	1999	वही सीबीएसई	अंग्रेजी, भौतिकी, रसायन विज्ञान जीव विज्ञान, गणित	प्रथम	95%
3.	बी.एस.सी. (आनर्स)	2002	हिंदू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	कंप्यूटर साइंस	प्रथम	84%
4.	एमबीए	2004	आदर्श इन्स्टीट्यूट ऑफ़ मैनेजमेंट		प्रथम	85%

अन्य संबंधित योग्यताएँ

- कंप्यूटर का अच्छा ज्ञान और अभ्यास (एम.एस. ऑफ़िस तथा इंटरनेट)
- फ्रांसीसी भाषा का कार्य योग्य ज्ञान

© NCERT not to be republished

उपलब्धियाँ

- अखिल भारतीय वाद-विवाद प्रतियोगिता (वर्ष 2001) में प्रथम पुरस्कार
- राजीव गाँधी स्मारक निबंध प्रतियोगिता (2002) में प्रथम पुरस्कार
- विद्यालय और महाविद्यालय क्रिकेट टीमों का कप्तान

कार्येतर गतिविधियाँ और अभिरुचियाँ

- उद्योग व्यापार संबंधी पत्रिकाओं और अखबारों का नियमित पाठन
- देश भ्रमण का शौक
- इंटरनेट सर्फ़िंग
- फुटबाल और क्रिकेट में अभिरुचि

वैसे सम्मानित व्यक्तियों का विवरण जो उम्मीदवार के व्यक्तित्व और उपलब्धियों से परिचित हों

1. श्री जे. रामनाथन, निदेशक, आदर्श इंस्टीट्यूट ऑफ़ मैनेजमेंट, लोदी इस्टेट, नयी दिल्ली
2. श्री देवेंद्र गुप्ता, प्राध्यापक (मार्केटिंग), आदर्श इंस्टीट्यूट ऑफ़ मैनेजमेंट लोदी इस्टेट, नयी दिल्ली

तिथि

स्थान

हस्ताक्षर

चाचा जी ने स्ववृत्त पर नज़र डाली और नरेंद्र की ओर देखकर संतोष और प्रशंसा के सम्मिलित भाव से मुसकराए। थोड़ा विराम देकर वे आगे कहने लगे, "अब तुम्हारा स्ववृत्त पूरी तरह से तैयार है। इसे सुरक्षित रखो। जब भी आवेदन करना हो इसे भेज दो। हाँ, विज्ञापन में वर्णित योग्यताओं और आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए इसमें थोड़ा हेर-फेर या जोड़-घटाव करना मत भूलना।"

इसके बाद चाचा जी ने क्षणभर की एक अर्थपूर्ण चुप्पी साधी। फिर बोले–"लेकिन नरेंद्र, यह तो आधी ही लड़ाई हुई। आधी तो अभी बाकी ही है।"

"क्या मतलब!" नरेंद्र की उत्सुकता बढ़ गई।

"मतलब यह कि सिर्फ़ स्ववृत्त देने भर से ही काम नहीं चलता। स्ववृत्त के साथ एक आवेदन-पत्र भी लिखना होता है। इस आवेदन-पत्र के साथ हम स्ववृत्त को लगाते हैं और नियोक्ता को उसके विचार के लिए भेज देते हैं।"

"मगर चाचा जी, जब स्ववृत्त में सारी जानकारियाँ दे ही दी जाती हैं तो फिर अलग से आवेदन-पत्र लिखने की ज़रूरत क्यों पड़ती है?"

© NCERT not to be republished

"यह अच्छा सवाल है। स्ववृत्त तो बना-बनाया रखा होता है। विज्ञापन देखा और भेज दिया। अत: सिर्फ़ स्ववृत्त से यह पता नहीं चलता कि उम्मीदवार पद और संबंधित संस्थान को लेकर कितना गंभीर है। स्ववृत्त की एक कमी यह होती है कि यह सूचनाओं के सिलसिलेवार संकलन के रूप में होता है। इसमें भाषा का वह वैयक्तिक स्पर्श नहीं आ पाता। दूसरी ओर, आवेदन-पत्र हर विज्ञापन के लिए विशेषतौर पर लिखे जाते हैं। ये उम्मीदवार के भाषा-ज्ञान और अभिव्यक्ति की क्षमता की तो जानकारी देते ही हैं, साथ ही यह भी दर्शाते हैं कि उम्मीदवार पद और संस्थान को लेकर गंभीर है या नहीं। नियोक्ता को योग्य उम्मीदवार की तलाश तो होती ही है, वह यह अपेक्षा रखता है कि चयन के बाद वह नौकरी में कम से कम कुछ वर्षों तक अवश्य टिके। आवेदन-पत्र से बहुत कुछ इन बातों का भी आभास नियोक्ता को मिल जाता है।"

"चाचा जी, आवेदन-पत्र तो हम लोग स्कूल के ज़माने से ही लिखते रहे हैं। क्या नौकरी के आवेदन-पत्र अपने स्वरूप में अन्य आवेदन-पत्रों से भिन्न होता है?"

"आवेदन का ढाँचा या स्वरूप तो वैसा ही होता है जैसा अन्य दूसरे आवेदन-पत्रों का होता है। लेकिन इसका उद्देश्य अलग होता है—पद के लिए अपनी योग्यता और गंभीरता के प्रति नियोक्ता का विश्वास जगाना। उद्देश्य की भिन्नता की वजह से इसकी विषय-वस्तु अन्य आवेदन-पत्रों से भिन्न होती है।"

"चाचा जी, फिर आप यह भी बता दें कि विषय-वस्तु के अंतर्गत क्या होगा और हम उसे आकार कैसे देंगे?"

"बेटे, इस प्रकार के आवेदन-पत्रों की विषय-वस्तु के मुख्यत: चार हिस्से होते हैं। पहला हिस्सा भूमिका का होता है, जिसमें उम्मीदवार विज्ञापन और विज्ञापित पद का हवाला देते हुए अपनी उम्मीदवारी की इच्छा प्रकट करता है। दूसरे खंड में उम्मीदवार यह बतलाता है कि वह विज्ञापन में वर्णित योग्यताओं और आवश्यकताओं को पूरा करने में किस प्रकार सक्षम है। तीसरे खंड में उम्मीदवार पद और संस्थान के प्रति अपनी गंभीरता और अभिरुचि को अभिव्यक्त करता है। चौथा खंड उपसंहार यानी आवेदन-पत्र की विषय-वस्तु के औपचारिक समापन के लिए होता है।"

नरेश को चाचा जी की बातें तो समझ में आ रही थीं मगर एक शंका भी थी। उसने पूछा तीसरे खंड के बारे में अभी-अभी आपने बताया कि इसमें उम्मीदवार पद और संस्थान के बारे में अपनी गंभीरता को अभिव्यक्त करता है। यह बात पूरे तौर पर साफ़ नहीं हुई।

चाचा जी ने अपना चश्मा ठीक करते हुए कहा—"नरेंद्र, जिस प्रकार नियोक्ता अपनी पसंद का उम्मीदवार चुनता है उसी प्रकार उम्मीदवार को भी नियोक्ता का संस्थान पसंद आना चाहिए। तभी उम्मीदवार के लंबे समय तक टिकने की संभावना रहती है। जब उम्मीदवार पद और संस्थान को लेकर गंभीर होता है तो वह उसके बारे में जानकारियाँ हासिल करता है और यह तय करता है कि वे उसके सपनों और भावी योजनाओं के अनुरूप हैं या नहीं। अगर उम्मीदवार ने जानकारी जुटाने के बाद संस्थान को अपनी इच्छाओं के अनुरूप पाया है तो आवेदन-पत्र में इसकी चर्चा अवश्य होनी चाहिए। नियोक्ता पर इसका बहुत ही अच्छा असर होता है।"

"चाचा जी, अभी तक तो मैं विज्ञापन के जवाब में केवल स्ववृत्त ही भेजा करता था मगर अब मैं स्ववृत्त को आवेदन-पत्र के साथ भेजा करूँगा।"

चाचा जी बोल पड़े फिर शुभ कार्य में देर किस बात की।

फिर वे अखबार के पन्ने पलटते हुए बोले, "मैंने इसमें तुम्हारे लिए अभी-अभी एक विज्ञापन देखा है। इंडिया केमिकल्स लि. को मार्केटिंग एक्ज़क्यूटिव्स की ज़रूरत है। तुम इसके लिए आवेदन-पत्र तैयार क्यों नहीं करते? आवेदन का आवेदन होगा और इस बात की परीक्षा भी हो जाएगी कि अभी-अभी तुमने मुझसे कितना सीखा है?"

नरेंद्र को अखबार पकड़ाने के बाद अब चाचा जी पड़ोस में अपने मित्र से मिलने चले गए और नरेंद्र अपने कमरे में आवेदन-पत्र लिखने चला गया। जब आवेदन-पत्र तैयार हुआ तो वह इस प्रकार था–

सेवा में,
महाप्रबंधक (मानव संसाधन)
मानव संसाधन विभाग
इंडिया केमिकल्स लिमिटेड
36, न्यू लिंक रोड
अंधेरी, मुंबई-400053

विषय : मार्केटिंग एक्ज़क्यूटिव पद के लिए आवेदन

महोदय,

आज दिनांक 16 अप्रैल, 2006 को दिल्ली से प्रकाशित नवभारत टाइम्स के प्रात: संस्करण में प्रकाशित विज्ञापन से ज्ञात हुआ है कि आपकी कंपनी को मार्केटिंग एक्ज़क्यूटिव्स की आवश्यकता है। मैं इस पद के लिए अपना आवेदन प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मेरा स्ववृत्त इस आवेदन के साथ संलग्न है। इसका अवलोकन करने पर आप पाएँगे कि मैं इस पद के लिए पूरी तरह से उपयुक्त उम्मीदवार हूँ। मैं विज्ञापन में आपके द्वारा वर्णित सभी योग्यताओं और अर्हताओं को पूरा करता हूँ। संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

(क) मैं विज्ञान का छात्र रहा हूँ और रसायन शास्त्र मेरा प्रिय विषय रहा है। मैंने इस विषय में आनर्स के साथ प्रथम श्रेणी में स्नातक की उपाधि पाई है। मैं आपकी कंपनी की गतिविधियों और उत्पादों के वैज्ञानिक पहलुओं से न केवल पूरी तरह से वाकिफ़ हूँ बल्कि उन्हें आपके ग्राहकों के समक्ष सरल शब्दों में प्रस्तुत करने की भी क्षमता रखता हूँ।

(ख) मैंने मार्केटिंग में प्रथम श्रेणी में एमबीए किया है और मुझे मार्केटिंग के विभिन्न सैद्धांतिक और व्यावहारिक पहलुओं का पूरा ज्ञान है।

(ग) मैं लिखित और मौखिक दोनों प्रकार से स्वयं को अभिव्यक्त करने में सक्षम हूँ। मुझे वाद-विवाद और निबंध की अखिल भारतीय प्रतियोगिताओं में प्रथम पुरस्कार मिले हैं।

(घ) मैं अपने विद्यालय और महाविद्यालय की क्रिकेट टीमों का कप्तान रहा हूँ। इससे मेरी टीम भावना और नेतृत्व क्षमता प्रमाणित होती है।

© NCERT not to be republished

(ङ) मैं पर्यटन का शौक रखता हूँ और लगभग पूरे देश के महत्त्वपूर्ण स्थानों का दौरा कर चुका हूँ। मेरी यह प्रकृति पद की आवश्यकता के अनुकूल है।

मैं उद्योग और व्यवसाय से जुड़ी पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ने का शौक रखता हूँ। इनके माध्यम से मैं आपकी कंपनी की गतिविधियों से निरंतर अवगत रहा हूँ कि अपनी स्थापना के कुछ ही वर्षों के अंदर कंपनी की गतिविधियों में व्यापक विस्तार हुआ है। मेरी सूचना के अनुसार कंपनी ने भविष्य के लिए अत्यंत महत्त्वाकांक्षी योजनाएँ बनाई हैं। मैं महसूस करता हूँ कि ऐसे माहौल में मुझे न केवल अपनी उन्नति और विकास का अवसर मिलेगा बल्कि मैं कंपनी की उन्नति और विकास में भी योगदान कर सकूँगा।

अनुरोध है कि उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए मेरे आवेदन पर सकारात्मक रूप से विचार करें और मुझे मार्केटिंग एक्ज़क्यूटिव के पद पर नियुक्त करें।

सधन्यवाद

भवदीय

(नरेंद्र कुमार)

जब तक नरेंद्र का आवेदन-पत्र तैयार हुआ, चाचा जी पड़ोस से वापस आ चुके थे।

उन्होंने आवेदन-पत्र को पढ़ा और गहरी साँस खींचते हुए कहा, "वैसे तो मैं कंपनी के मानव संसाधन विकास के महाप्रबंधक को अच्छी तरह से जानता हूँ मगर मैं तुम्हारी सिफ़ारिश नहीं करूँगा। मुझे विश्वास है कि तुम यह पद अपनी योग्यता के बल पर हासिल कर सकोगे।"

दो महीने बाद मुंबई में चाचा जी के फ़्लैट की घंटी बजी। दरवाज़ा खोलने के बाद चाचा जी ने दरवाज़े पर नरेंद्र को खड़ा पाया। हाथ में मिठाई का डिब्बा और गरम सूट का एक पैकेट था। दोनों की नज़रें मिलीं। नरेंद्र ने चाचा जी के पैर छुए और चाचा जी ने बधाई देते हुए उसे गले लगा लिया।

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. कल्पना कीजिए कि आपने पत्रकारिता के क्षेत्र में अपना अध्ययन पूरा कर लिया है और किसी प्रसिद्ध अखबार में पत्रकार पद के लिए आवेदन भेजना है। इसके लिए एक आवेदन-पत्र लिखिए।

2. राजीव गांधी फ़ाउंडेशन उच्च शिक्षा हेतु स्कॉलरशिप प्रदान करती है अत: उसे भेजने के लिए अपना 'बायोडेटा' तैयार कीजिए।

3. स्ववृत्त में कौन-कौन से बिंदुओं को शामिल किया जाता है और उनकी प्रस्तुति का क्या प्रभाव पड़ता है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

© NCERT not to be republished

16

कोश–एक परिचय

11071CH16

अदृश्य की आड़ के पीछे छिपी हैं कुछ ऐसी सुरंगें, जो अपने गुप्त रास्तों से शब्दों की जन्मकथा तक ले जाती हैं।

–राजेश जोशी

हिंदी कवि

इस पाठ में...

- शब्दकोश
- विश्वकोश
- साहित्य कोश

कुछ पढ़ते समय जब किसी शब्द का अर्थ अथवा उसका संदर्भ आपके ज़ेहन में स्पष्ट नहीं होता तब आप क्या करते हैं? ज़ाहिर है आपके मन में फ़ौरन **शब्दकोश** का ध्यान आता होगा। चंद्रिका भी आपकी तरह परेशान हुई। आइए जानें कि उसकी समस्या कैसे हल हुई।

पढ़ते-पढ़ते चंद्रिका को ऐसा लगा जैसे स्वादिष्ट भोजन करते हुए दाँतों के बीच अचानक एक कंकड़ी आ फँसी हो। सारा मज़ा किरकिरा हो रहा था। चंद्रिका गरमी की छुट्टियों के दौरान घर में लेटी किसी और ही दुनिया की सैर कर रही थी लेकिन अचानक वहाँ से वापस लौटना पड़ा। समस्या के समाधान के लिए वह लता दीदी के कमरे में भागी लेकिन वह भी कहीं बाहर गई हुई थीं।

चंद्रिका के लिए अब कोई चारा नहीं था। जिस उपन्यास के काल्पनिक जगत का वह आनंद ले रही थी अब उसे आगे पढ़ने की इच्छा नहीं हो रही थी। उपन्यास पढ़ते-पढ़ते खाने में कंकड़ी की तरह एक शब्द अचानक बीच में आकर उसके आनंद में खलल डाल रहा था। शब्द का अर्थ चंद्रिका को पता नहीं था। बगैर अर्थ जाने वह आगे बढ़ना नहीं चाहती थी, मानो कोई ब्रेक लग गया हो।

© NCERT not to be republished

शब्द था—विदग्ध। यह शब्द उसका मुँह चिढ़ा रहा था और यह पराजय भाव चंद्रिका को स्वीकार्य नहीं था।

लेटे-लेटे वह इसी शब्द के बारे में सोचने लगी। सोचते-सोचते उसे ऐसा लगा जैसे सामने खिड़की से कोई छाया-सी अंदर आई और उसके सामने खड़ी हो गई।

अरे! यह तो कोई परी है। चंद्रिका उसे देखकर चौंकी। थोड़ी घबराई भी। मगर तुरंत ही उसने स्वयं को संभाल लिया। साहस बटोर कर उसने परी से पूछा—"तुम कौन हो और यहाँ किसलिए आई हो"।

"मैं चंद्रिका हूँ। शब्दलोक से आई हूँ"।

"मगर चंद्रिका तो मेरा नाम है"।

"हाँ! मैंने ही तुम्हें अपना नाम उधार दिया है। घबराना मत। मैं इस बात की कोई फ़ीस या किराया नहीं लेती", शब्दपरी चंद्रिका हँसते हुए परिहास के स्वर में बोली।

"और हाँ! मैं तुम्हारी समस्या भी सुलझा सकती हूँ। विदग्ध भी मेरे लोक में ही रहता है। बहुत अच्छा लड़का है। मैं उससे तुम्हारी दोस्ती करा दूँगी। इसके बाद वह तुम्हें कभी परेशान नहीं करेगा।"

चंद्रिका ने शब्दपरी से कहा—"मगर तुम्हारे लोक के जो दूसरे निवासी हैं वे तो मुझे परेशान करते रहेंगे।"

शब्दपरी बोली—"मैं तुम्हें अपने लोक के सारे रहस्य समझा दूँगी। फिर तुम्हें कोई कठिनाई नहीं होगी। मेरे लोक के समस्त निवासी तुम्हारे मित्र बन जाएँगे। चलो, मैं तुम्हें अपने लोक में ले चलती हूँ।"

"मगर मैं चलूँगी कैसे? मेरे पास तो तुम्हारी तरह पंख हैं नहीं।" —चंद्रिका ने थोड़ा आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा।

"चिंता मत करो। मैं तुम्हारे लिए फूलों का रथ लेकर आई हूँ। चलो चलते हैं।"—चंद्रिका अपनी हमनाम शब्दपरी के साथ फूलों के रथ पर कुछ समय तक उड़ती रही। अब फूलों का रथ एक विशाल नगर के ऊपर था। चंद्रिका ने रथ से नीचे देखा। नगर की विशेषता यह थी कि इसमें एक अत्यंत प्रशस्त राजमार्ग था और सारे भवन इस राजमार्ग के एक ही तरफ़ पंक्तिबद्ध रूप में निर्मित थे। राजमार्ग के दूसरी तरफ़ कुछ भी नहीं था।

"हमारे लोक में नागरिकों को शब्द कहा जाता है। यह एक आदर्श लोकतंत्र है और यहाँ सभी शब्द समान हैं। कोई छोटा-बड़ा नहीं, कहीं ऊँच-नीच नहीं। यहाँ इतनी सुंदर व्यवस्था है कि किसी राजा या शासक की ज़रूरत भी नहीं होती।"

"कौन-सा शब्द इस राजमार्ग के किनारे कहाँ रहेगा, इस बात पर क्या कोई विवाद नहीं होता?" चंद्रिका ने पूछा।

शब्दपरी बोली—"हमने इसके लिए नियम निर्धारित कर रखे हैं। हर शब्द अनुशासन का पक्का है। बिना किसी बलप्रयोग के वह अपनी जगह खुद ले लेता है। जब किसी नए शब्द को यहाँ की नागरिकता मिलती है तो वह भी यहाँ के नियमों के आधार पर ही इस राजमार्ग के किनारे अपनी जगह ले लेता है। यहाँ के भवन भी ऐसे हैं कि वे थोड़ा-थोड़ा आगे खिसक कर नए शब्द को उसका सही स्थान अपने आप दे देते हैं।"

चंद्रिका की अगली जिज्ञासा थी—"नए शब्दों को आपके लोक की नागरिकता क्या आसानी से मिल जाती है?"

कुछ महत्त्वपूर्ण कोश

शब्दपरी ने गर्वभाव से कहा–"नागरिकता के लिए तो हज़ारों शब्द कोशिश करते हैं मगर वह इतनी आसानी से नहीं मिलती। जब तक किसी शब्द और उसके अर्थ या अर्थों को तुम्हारे समाज की मान्यता नहीं मिल जाती तब तक हम अपने लोक में उसे प्रवेश की भी अनुमति नहीं देते, नागरिकता तो दूर की बात है। हमारे लोक की नागरिकता एक बहुत बड़ा सम्मान है, जिसके लिए 'शब्दों' को लंबे समय तक कोशिश करनी होती है।"

रथ नीचे उतरा और शब्दलोक के प्रवेश द्वार से होता हुआ राजमार्ग पर धीरे-धीरे चलने लगा। चंद्रिका ने पूछा–"शब्दपरी, तुम्हारे लोक की आबादी क्या होगी?"

"अभी तो हमारे लोक की आबादी लगभग **पाँच लाख** है। जैसा कि मैंने तुम्हें बताया, हमारे लोक में नए शब्द भी जुड़ते रहते हैं।"

शब्दपरी ने आगे कहा–"जिस प्रकार तुम्हारी पृथ्वी पर नए नगरों को योजनाबद्ध ढंग से खंडों और उपखंडों में बाँटा जाता है और फिर हर मकान को एक संख्या प्रदान करते हैं उसी प्रकार हमारे लोक को भी पहले खंडों में बाँटा गया है और फिर उस खंड में हर शब्द के भवन को हमारे नियम के अनुसार क्रमवार व्यवस्थित किया गया है।" चंद्रिका का अगला सवाल था–"यहाँ खंडों का नामकरण कैसे करते हैं?"

यहाँ खंडों के नाम वर्णमाला के अक्षरों पर रखे गए हैं। जैसे, 'क खंड' 'च खंड' 'प खंड' आदि। इन खंडों का क्रम भी वर्णमाला के अक्षरों के क्रम के ही अनुसार है। हाँ, दो महत्त्वपूर्ण अंतर हैं?

"वे क्या?"

"पहला अंतर तो यह है कि हिंदी वर्णमाला 'अ' से शुरू होती है मगर इस लोक का पहला खंड 'अं खंड' है। इसके बाद 'अ खंड', 'आ खंड', 'इ खंड' इत्यादि वर्णमाला के क्रम से ही आते हैं।"

"दूसरा अंतर क्या है?"

"हिंदी वर्णमाला में संयुक्ताक्षर क्ष, त्र, ज्ञ, श्र वर्णमाला के अंत में आते हैं। लेकिन हमारे शब्द लोक में ये उन वर्णों के अंत्याक्षर के साथ आते हैं।"

"बात पूरी तरह से समझ में नहीं आई", चंद्रिका ने भोलेपन से कहा।

सब समझ जाओगी। बस इस राजमार्ग पर मेरे साथ आगे चलो।

फूलों का रथ अब राजमार्ग पर चलने लगा। एक ओर प्रकृति का अक्षत सौंदर्य था और दूसरी ओर शब्दों के भवन थे। पहला खंड 'अं' खंड था। फिर 'अ' खंड, 'आ' खंड, 'इ' खंड, 'ई' खंड आदि एक-एक कर आने लगे।

स्वर वर्णों से नामित आखिरी खंड 'औ' खंड था। फिर व्यंजन वर्ण से नामित पहला खंड 'क' खंड आ गया।

© NCERT not to be republished

शब्दपरी बोली–"अब व्यंजन वर्णों से नामित खंड शुरू हो रहे हैं। इन खंडों की एक खास बात यह है कि ये उपखंडों में विभाजित हैं। खंड के भीतर के उपखंडों को व्यंजन पर लगी मात्रा द्वारा नामित किया जाता है।"

चंद्रिका फिर बोल पड़ी, "बात पूरी तरह समझ में नहीं आई।"

शब्दपरी ने समझाया, हमें व्यंजनों में आवश्यकतानुसार मात्राएँ भी लगानी होती हैं। इस बात को ध्यान में रखते हुए हमें व्यंजन नामित खंडों को मात्राओं के आधार पर उपखंडों में बाँटना होता है। अब 'क' खंड की ही बात लो। हम इसके सामने से अभी गुज़र रहे हैं। देखो, पहला उपखंड 'क' है। इस उपखंड में 'क' से शुरू होने वाले 'शब्दों' के भवन हैं। पहले 'कं' फिर 'क' उपखंड, 'का' उपखंड इत्यादि एक-एक कर आते जाएँगे।

रथ आगे बढ़ रहा था। 'क' खंड के विभिन्न उपखंड एक-एक कर गुज़रने लगे। 'कं', 'क', 'का', 'कि', 'की', 'कु', 'कू', 'के', 'कै' और 'को' उपखंडों से गुज़रते हुए रथ 'कौ' उपखंड तक पहुँच चुका था। तभी चंद्रिका के मन में एक सवाल उठा।

मेरी हमनाम जी, विभिन्न मात्राओं से नामित उपखंड तो नज़र आए मगर वे सारे शब्द इस लोक में कहाँ निवास करते हैं जहाँ दो व्यंजन मिलकर संयुक्ताक्षर बनाते हैं। अभी हम 'क' खंड का नज़ारा देख रहे हैं। मगर 'क्यारी', 'क्रंदन', 'क्रीड़ा' इत्यादि शब्द तो नज़र ही नहीं आए!

शब्दपरी बोली–यह तुमने अच्छा सवाल उठाया। हमारे लोक में इसके भी निश्चित नियम हैं। अब 'क' खंड की ही बात लो। 'कं' उपखंड से चलते-चलते हम 'कौ' उपखंड तक पहुँच चुके हैं। इसके बाद संयुक्ताक्षर का उपखंड शुरू होगा।

शब्दपरी ने सच ही कहा था। 'कौ' उपखंड के तुरंत बाद 'क्' उपखंड शुरू हो गया। 'क्या', 'क्यारी', 'क्यों', जैसे शब्द आने लगे।

शब्दपरी बोल पड़ी, "मैंने तुम्हें कुछ देर पहले बताया था कि 'क्ष' 'त्र' 'श्र' जैसे वर्णों से शुरू होने वाले शब्द इन वर्णों के प्रथमाक्षर के साथ आते हैं।"

चंद्रिका ने याद करते हुए कहा, "हाँ और आपकी बात मेरी समझ में नहीं आई थी।" शब्दपरी समझाने की मुद्रा में बोली, "देखो, अब 'क्ष' का ही उदाहरण लो। यह 'क' और 'ष' के योग से बना हुआ संयुक्ताक्षर है। इस संयुक्ताक्षर का पहला अक्षर यानी प्रथमाक्षर 'क' है अतः यह इसी उपखंड में आगे जाकर है।"

रथ की यात्रा जारी थी। चंद्रिका ने ध्यान दिया कि 'क' प्रथमाक्षर से शुरू होने वाले शब्द एक-एक कर सामने से

ध्यान देने योग्य बातें

- *शब्दकोश, शब्दों का खज़ाना है। इसमें एक भाषा-भाषी समुदाय में प्रयुक्त होने वाले शब्दों को संचित किया जाता है।*
- *शब्दकोश में शब्दों की व्युत्पत्ति, स्रोत, लिंग, शब्द-रूप एवं विभिन्न संदर्भपरक अर्थों के बारे में जानकारी दी जाती है।*
- *हिंदी शब्दकोश में हिंदी वर्णमाला का अनुसरण किया जाता है परंतु अं से प्रारंभ होने वाले शब्द सबसे पहले दिए जाते हैं।*
- *यद्यपि हिंदी वर्णमाला में कुछ संयुक्त व्यंजन सबसे अंत में आते हैं परंतु शब्दकोश में उन्हें उस क्रम में रखा जाता है जिन व्यंजनों से मिलकर वे बने हैं, जैसे क्+ष=क्ष, ज्+ञ=ज्ञ, त्+र=त्र, श्+र=श्र।*
- *स्वर रहित व्यंजन से प्रारंभ होने वाले शब्द उस व्यंजन में इस्तेमाल होने वाले सभी स्वरों के बाद में रखे जाते हैं, जैसे 'क्या' शब्द 'कौस्तुभ' के बाद ही आएगा।*

© NCERT not to be republished

गुज़र रहे थे। क्रम वर्णमाला का ही था। हाँ, वे दो नियम भी लागू हो रहे थे, जो शब्दपरी ने शुरू में बताए थे। 'क' और 'य' से मिलकर बने संयुक्ताक्षरों से शुरू होने वाले शब्दों से आगे बढ़ते हुए दोनों 'क' और 'र' से बने संयुक्ताक्षर 'क्र' से शुरू होने वाले शब्दों के भवन आए। 'क्रंदन' और 'क्रंदित' के बाद 'क्र' का नंबर आया और 'क्रम', 'क्रमशः' इत्यादि शब्दों के भवन आए। फिर 'क्रा', 'क्रि' इत्यादि से प्रारंभ होने वाले शब्दों के भवन आते गए।

'क्र' के बाद 'क्ल' एवं 'क्व' से शुरू होने वाले शब्द आए। फिर शुरू हुआ 'क्ष' से प्रारंभ होने वाले शब्दों के भवनों का सिलसिला। यह इस लोक के नियमों के अनुसार ही था चूँकि 'क्ष' संयुक्ताक्षर 'क' और 'ष' से मिलकर बना है अतः इसे 'क' और 'व' से मिलकर बने 'क्व' संयुक्ताक्षर से शुरू होने वाले शब्दों के बाद ही आना था।

चंद्रिका खुश होकर बोली–"अब बात मेरी समझ में आ गई। इसका अर्थ यह हुआ कि चूँकि 'त्र' संयुक्ताक्षर 'त' और 'र' वर्णों से मिलकर बना है, अतः इससे शुरू होने वाले शब्दों के भवन 'त' खंड में नियमानुसार निर्धारित स्थलों पर आएँगे।"

शब्दपरी प्रशंसा भाव से मुसकराई–"हाँ, बिलकुल ठीक। 'ज्ञ' संयुक्ताक्षर 'ज' और 'ञ' वर्णों के संयोग से बना है। अतः इससे प्रारंभ होने वाले शब्दों के भवन 'ज' खंड में अपने निर्धारित स्थानों पर आएँगे। 'श्र' संयुक्ताक्षर 'श' और 'र' वर्णों से मिलकर बना है। अतः इससे शुरू होने वाले शब्दों के निवास स्थल 'श' खंड में होंगे।"

रथ चलता जा रहा था। थोड़ी देर में 'च' खंड आ गया। इस लोक के नियमों के हिसाब से पहले 'च' उपखंड आया। चंद्रिका खुशी से चिल्ला पड़ी। शब्दपरी बोली–"लो, तुम्हारा उपखंड तो आ गया। तुम्हारा घर तो इसी उपखंड में होगा।"

"बिलकुल ठीक"–थोड़ी ही देर में इस राजमार्ग के किनारे मेरा घर आने वाला है।"

'च' उपखंड में निवास करने वाले शब्दों के भवन एक-एक कर आते जा रहे थे। पहले उन शब्दों के भवन थे जिनका दूसरा वर्ण 'क' से शुरू होता था। यानी यहाँ भी नियम वही था जो पहले वर्ण के लिए था।

धीरे-धीरे उन शब्दों के भवन आए जिनका दूसरा वर्ण 'द' था। 'चंदन', 'चंदेल' इत्यादि शब्दों के बाद 'द' और 'र' के संयुक्ताक्षर 'द्र' का नंबर आया। इस क्रम का पहला शब्द 'चंद्र' था।

संदर्भ-ग्रंथ

- *जिस प्रकार 'शब्दकोश' में शब्दों के अर्थ दिए होते हैं उसी प्रकार 'संदर्भ-ग्रंथों' में मानव द्वारा संचित ज्ञान को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जाता है।*
- *संदर्भ-ग्रंथ कई प्रकार के होते हैं। संदर्भ-ग्रंथ का सबसे विशद रूप 'विश्व ज्ञान कोश' है। इसमें मानव द्वारा संचित हर प्रकार की जानकारी और सूचना का संक्षिप्त संकलन होता है।*
- *संदर्भ-ग्रंथों के अन्य महत्त्वपूर्ण प्रकार हैं 'साहित्य कोश' और 'चरित्र कोश' 'साहित्य कोश' में साहित्यिक विषयों से संबंधित जानकारियाँ संकलित होती हैं। 'चरित्र कोश' में साहित्य, संस्कृति, विज्ञान आदि क्षेत्रों के महान व्यक्तियों के व्यक्तित्व और कृतित्त्व के बारे में जानकारी संकलित होती है।*
- *संदर्भ-ग्रंथ गागर में सागर के समान हैं। जब भी किसी विषय पर तुरंत जानकारी की आवश्यकता होती है, संदर्भ-ग्रंथ हमारे काम आते हैं।*
- *संदर्भ-ग्रंथों में जानकारियों का सिलसिलेवार संकलन 'शब्दकोश' के नियमों के अनुसार ही होता है।*

2024-25

फिर नियमानुसार इन शब्दों के भवन आए जिनका दूसरा वर्ण 'द्रा' था। 'चंद्रा' 'चंद्रायण' इत्यादि शब्दों के बाद 'द्रि' की बारी आते ही नियमानुसार पहले 'चंद्रिकांबुज' और फिर 'चंद्रिका' का भवन आ गया। भवन के बाहर 'चंद्रिका' की पट्टिका को देखकर चंद्रिका का खुशी से उछलना स्वाभाविक था।

रथ अब तेज़ी से दौड़ने लगा। थोड़ी ही देर में 'व' खंड आ गया। इस खंड के उपखंड एक-एक कर गुज़रने लगे। 'वि' उपखंड के आते ही चंद्रिका का उतावलापन बढ़ने लगा। इस लोक के नियमों द्वारा निर्धारित क्रम के अनुसार थोड़ी देर में 'विदग्ध' शब्द का भवन भी आ गया।

शब्दपरी ने रथ रोका। दोनों रथ से उतरकर भवन के दरवाज़े पर पहुँचे। वहाँ 'विदग्ध' की पट्टिका लगी थी। इस पट्टिका के नीचे संगमरमर की एक और बड़ी पट्टिका थी।

जिज्ञासावश चंद्रिका पट्टिका के सामने रुक गई और लिखी इबारत को पढ़ने लगी।

विदग्ध- वि.(सं.) नागर; निपुण; पंडित; रसिक; रसज्ञ; जला हुआ; जठराग्नि से पका हुआ; पचा हुआ; नष्ट; गला हुआ; जो जला या पचा न हो; सुंदर; भद्रतापूर्ण। पु. चतुर या धूर्त आदमी; रसिक; एक घास।

शब्दपरी बोली, "इस लोक में हर भवन के बाहर यह संगमरमर की पट्टिका होती है जिस पर 'शब्द' का परिचय होता है। यह ज़रूरी है कि शब्द से मिलने और मित्रता करने के पहले तुम उसके बारे में पहले से ही जान लो।"

चंद्रिका ने कहा–"शब्दपरी तुमने शब्द के अर्थ को लेकर तो मेरी समस्या सुलझा दी। मैं देख रही हूँ कि विदग्ध शब्द के कई अर्थ दिए हुए हैं। किसी लेखन में जहाँ जैसा संदर्भ होगा वहाँ वैसा ही अर्थ लागू होगा। मगर एक बात समझ में नहीं आई।"

"वह क्या?"

"संगमरमर की पट्टिका पर कुछ संकेताक्षर भी लिखे हैं। उनके अर्थ क्या हैं?"

शब्दपरी बोली–"वि. का अर्थ यह है कि विदग्ध एक विशेषण है। पु. से यह अभिप्राय है कि यह शब्द पुंलिंग है। (सं.) से यह मतलब निकलता है कि विदग्ध संस्कृत का शब्द है।"

चंद्रिका अब विदग्ध के बारे में पूरी तरह से जान चुकी थी और उससे मिलने के लिए उत्सुक हो रही थी। शब्दपरी ने द्वार की घंटी बजाई। दरवाज़ा खुलने पर एक सुदर्शन व्यक्ति सामने दिखाई पड़ा। यही विदग्ध था। अपने मेहमानों का स्वागत करते हुए वह उन्हें घर के अंदर ले गया।

"विदग्ध, यह है पृथ्वी की मेरी हमनाम–चंद्रिका। तुमने इसे बहुत परेशान किया है"–शब्दपरी बोली।

विदग्ध ने जवाब दिया, "कोई बात नहीं–मैं इनसे माफ़ी माँगता हूँ। मगर इस बहाने इन्होंने हमारे लोक को तो देख लिया।"

चंद्रिका बोली–"नहीं-नहीं, कोई बात नहीं, सच कहूँ तो वह परेशानी ही वरदान साबित हुई।"

विदग्ध ने कहा–"आगे आपको हमारे किसी भी साथी से कोई परेशानी नहीं होगी।"

फिर विदग्ध ने एक मोटी पुस्तक निकाली और चंद्रिका को देते हुए बोला, "आप इसे मेरी तरफ़ से उपहार के रूप में रख लीजिए। यह इस लोक की निर्देशिका है। इसे 'शब्दकोश' कहते हैं।"

चंद्रिका ने इस पुस्तक के पन्ने पलटे। प्रारंभ के दो पृष्ठों पर एक 'संकेत सूची' थी। इसमें संगमरमर पट्टिका पर प्रयुक्त होने वाले संकेतों के अर्थ दिए गए थे जैसे 'पु.–पुंलिंग', 'स्त्री. –स्त्रीलिंग' इत्यादि।

संकेत-सूची

*—पद्य में प्रयुक्त
+—स्थानिक
अ०—अव्यय
(अ०)—अरबी
अ० क्रि०—अकर्मक क्रिया
(अप्र०)—अप्रचलित
अमर०—अमरबेल (वृंदावनलाल वर्मा)
अल्प०—अल्पसूचक, (लघु रूपसूचक)
अहिल्या—(वृंदावनलाल वर्मा)
(आ०)—आधुनिक
(आयु०), (आ० वे०)—आयुर्वेद
(इ०)—इत्यादि
(इ०), (इब०)—इबरानी
(उ०)—उदाहरण
उप०—उपसर्ग
(उपनि०)—उपनिषद्
कवि०-कौ०—कविताकौमुदी (रामनरेश त्रिपाठी)
(का०)—कानून
(काम०)—कामंदकीय या कामशास्त्र
(कौ०)—कौटिल्य
(क्व०)—क्वचित्
(ग०)—गणित
(गी०)—गीता
गीता०—गीतावली, तुलसी-कृत
गुलाब०—गुलाबराय-कृत नवरस
ग्राम०—ग्रामगीत, रामनरेश त्रिपाठी
(ग्रा०)—ग्राम्य
घन०—घन आनन्द ग्रन्थावली'
चंदा०—चंदायन
(चि०)—चित्रकारी
छत्तीस०—छत्तीसगढ़ी बोली
छत्र०—छत्रप्रकाश
(ज०)—जरमन
जिंदगी०—जिंदगी मुसकरायी—कन्हैयालाल प्रभाकर
(जै०)—जैन साहित्य
(ज्या०)—ज्यामिति
(ज्यो०)—ज्योतिष
(तं०)—तंत्रशास्त्र
(ति०)—तिब्बती
(तिर०)—तिरस्कार-सूचक
(तु०)—तुर्की
दीनद०—दीनदयाल गिरि
दे०—देखिये
नागरी०—नागरीदास
(ना०)—नाटक
(न्या०)—न्याय
प०—पद्मावत, जायसी-कृत
(पह०)—पहलवी
(पा०)—पाली
(पाराशरसं०)—पाराशरसंहिता
पु०—पुंलिंग
(पु०)—पुराण
(पुर्त०)—पुर्तगाली
प्र०—प्रत्यय
(प्रा०)—प्राचीन
(फा०)—फारसी
(फ्रें०)—फ्रेंच
(बं०)—बंगाली
(ब०)—बर्मी
(बहु०), (बहुव०)—बहुवचन
बि०—बिहारी रत्नाकर
बी०—बीसलदेव रासो
बुंदेल०—बुंदेलखंडी बोली
(बृ० सं०)—बृहत्संहिता
(बो०), (बोल०)—बोल-चाल
(बौ०, बौद्ध०)—बौद्धसाहित्य
(भाग०)—भागवत
भावि०—भावविलास देव-कृत
भू०, भूषणग्रंथावली
भू० क्रि०—भूतकालिक क्रिया
(मति०)—मतिराम
(मनु०)—मनुस्मृति

© NCERT not to be republished

१६१ | उत्तरण—उत्थान

आदि); 'उत्तरदिनांकित'। —०धनादेश—पु० (पोस्ट डेटेड चेक) वह धनादेश जिसपर बादकी तिथि डाल दी गयी हो अतः जिसका भुगतान तुरंत न होकर उक्त तिथिको ही या उसके बाद संभव हो सके। —दाता(तृ),—दायक—वि० जवाब देनेवाला, जिम्मेदार; धृष्ट। —दायित्व—पु० जवाबदेही, जिम्मेदारी। —दायी(यिन्) —वि० जवाब देनेवाला, जिम्मेदार। —नाभि—स्त्री० यज्ञमें उत्तर दिशामें बना कुंड। —पक्ष—पु० वाद या बहसका जवाब; सिद्धांत-पक्ष। —पट—पु० दुपट्टा, चादर। —पथ—पु० उत्तरका रास्ता; देवयान। —पद—पु० समासका अंतिम पद। —पाद—पु० दावेका जवाब। —प्रत्युत्तर—पु० सवाल-जवाब, बहस-हुज्जत। —प्राप्य, —भोग्य—वि० (रिवर्शनरी) जो बादमें, प्रायः मृत्युके उपरांत, दिया जाय; जो प्राप्य हो जाने पर भी तुरंत न दिया जाकर पूरी अवधि समाप्त हो जाने पर या मृत्यु हो जाने पर ही मिले। —प्रोष्ठपदा —स्त्री० उत्तर भाद्रपदा नक्षत्र। —मंद्रा—स्त्री० संगीतके स्वरका एक प्रकार। —मीमांसा—पु० वेदांत दर्शन। —रामचरित—पु० भवभूति-रचित संस्कृतका एक प्रसिद्ध नाटक। —लक्षण—पु० उत्तर, जवाबके लक्षण। —वय—स्त्री० बुढ़ापा। —वयस—पु० (हिं०) बुढ़ापा। —वस्ति—स्त्री० एक तरहकी छोटी पिचकारी। —वस्त्र—पु० ऊपर पहननेका वस्त्र; दुपट्टा; उपरना। —वादी-(दिन्)—पु० प्रतिवादी, मुद्दालेह; बादमें, पीछे फरियाद करनेवाला। —विचार—पु० (आफ्टर थॉट) बादमें उठा हुआ (मनमें आया हुआ) विचार, पश्चविचार। —साक्षी(क्षिन्)—पु० सुनी हुई बात कहनेवाला गवाह; प्रतिवादिपक्षका गवाह। —साधक —वि० शेषांशको पूरा करनेवाला; जवाबको साबित करनेवाला। पु० सहायक।

उत्तरण—पु० (सं०) पार होना; उतरना; पानीसे निकलना। बैठनेकी एक मुद्रा। —पत्रक—पु० रक्त एरंड। —पाद—वि० जिसकी टाँगें फैला दी गयी हैं। पु० स्वायंभुव मनुका पुत्र जो ध्रुवका पिता था; परमेश्वर। —० ज—पु० ध्रुवतारा; ध्रुव। —शय—वि० चित लेटा हुआ। पु० दुधमुंहा बच्चा। —हृदय—वि० खुले या साफ दिलवाला।

उत्तानक—पु० (सं०) उच्चटा नामक तृण।

उत्तानित—वि० (सं०) ऊपर उठाया या फैलाया हुआ (मुख)।

उत्ताप—पु० (सं०) तेज गरमी या आँच; दुःख; क्लेश; चिंता; क्षोभ; उत्तेजना; शक्ति; प्रयास। —मापी—पु० (पाइरोमीटर) ऐसे तापमापी जो अति उच्च तापको नापनेके काम आते हैं। (जैसे प्रकाशीय उत्तापमापी, आप्टिकल पाइरोमीटर, द्वारा सूर्यकी सतहका ताप (६००० डिग्री सेन्टीग्रेड) नापा जा सकता है। विद्युत-उत्तापमापी द्वारा लगभग १००० डिग्री तकका ताप नाप सकते हैं।)

उत्तापित—वि० (सं०) गरम किया हुआ; पीडित; उत्तेजित किया हुआ।

उत्तापी(पिन्)—वि० (सं०) उत्तापयुक्त।

उत्तार—वि० (सं०) औरोंसे बढ़ जानेवाला, श्रेष्ठ। पु० उद्धार; मुक्ति; वमन; अस्थिरता; प्रयाण; पार ले जाना; तटपर उतारना।

उत्तारक—वि० (सं०) उद्धारक, तारनेवाला। पु० शिव।

उत्तारण—पु० (सं०) पार उतारना; उद्धार करना; विष्णु।

उत्तारी(रिन्)—वि० (सं०) पार करनेवाला; अस्थिर; परिवर्तन-शील; अस्वस्थ।

उत्तार्य—वि० (सं०) पार करने योग्य; वमन करने योग्य।

उत्ताल—वि० (सं०) ऊँचा; प्रबल; प्रचंड; भयंकर; विशाल;

इसके बाद 'अ', 'आ' इत्यादि हर खंड में निवास करने वाले शब्दों की सूची थी। इन शब्दों को इस पुस्तक में ठीक उसी प्रकार सजाया गया था जैसे राजमार्ग के किनारे भवनों को क्रमवार निर्मित किया गया था। वही वर्णमाला क्रम और वे ही दो महत्त्वपूर्ण नियम। लेकिन चंद्रिका ने एक बात और देखी। इस पुस्तक के हर पृष्ठ के शीर्ष पर दो शब्दों का जोड़ा दिया हुआ था। जैसे 'उत्तरण-उत्थान', 'जड़-जन' आदि।

"इसका क्या उद्देश्य है?" चंद्रिका ने पूछा।

विदग्ध बोला, "यह हमारे साथियों की तलाश को आसान बनाता है। हर पृष्ठ के ऊपर दिए गए शब्द युग्म का पहला शब्द उस पृष्ठ का पहला शब्द होता है। दूसरा शब्द पृष्ठ के आखिरी शब्द को दर्शाता है। इस प्रकार पूरे पृष्ठ पर किसी शब्द को तलाशने की ज़रूरत नहीं होती, शब्द-युग्म को देखकर ही पता चल जाता है कि इस पृष्ठ पर इच्छित शब्द का होना संभव है या नहीं।"

विदग्ध को चंद्रिका ने धन्यवाद दिया। फिर दोनों बाहर निकले।

"चलो मैं तुम्हें वापस छोड़ दूँ"—शब्दपरी ने कहा।

फूलों का रथ एक बार फिर हवा में उड़ रहा था।

वापसी यात्रा के दौरान चंद्रिका ने देखा कि रथ किसी और लोक के ऊपर से गुज़र रहा है।

"यह कौन-सा लोक है?"

"जैसे हमारा 'शब्दलोक' है वैसे ही इस लोक को **विश्वज्ञान लोक** कहते हैं।"

"हाँ, यहाँ भी वैसा ही राजमार्ग है और वैसे ही मार्ग के एक तरफ़ भवन बने हुए हैं"—चंद्रिका ने कहा।

शब्दपरी बोली, "विश्वज्ञान लोक में भी भवनों को उसी प्रकार क्रमवार व्यवस्थित किया गया है, जिस प्रकार हमारे शब्दलोक में। अंतर यह है कि हमारे यहाँ 'शब्द' निवास करते हैं और इस लोक में 'जानकारियों' का निवास है।"

"क्या मतलब?"

मतलब यह कि तुम्हें मानव ज्ञान से संबंधित जो भी सूचना या जानकारी चाहिए वह इस लोक के निवासियों से मिल जाएगी। शब्दपरी आगे बोली, "इस लोक की निर्देशिका **विश्वज्ञान कोश** के नाम से जानी जाती है।"

चंद्रिका यह जानकर बड़ी खुश हुई। अब जब उसे किसी विषय पर संक्षिप्त जानकारी की ज़रूरत होगी तो उसे ज़्यादा भटकना नहीं पड़ेगा। एक ही स्थान पर उसे हर विषय की संक्षिप्त जानकारी मिल जाएगी।

रथ अब किसी अन्य लोक के ऊपर से उड़ रहा था। शब्दपरी बोली, "यह **चरित्र-लोक** है। यहाँ भी जानकारियाँ ही निवास करती हैं। अंतर यह है कि ये जानकारियाँ विचारकों, साहित्यकारों, वैज्ञानिकों आदि के संक्षिप्त परिचय और उपलब्धियों तक ही सीमित रहती हैं। जानकारियों को क्रमवार रूप से व्यवस्थित करने का नियम हमारी तरह ही है।"

"यानी जब भी मुझे किसी भी क्षेत्र के महान व्यक्ति के बारे में जानना होगा तो मेरी मदद इस लोक के निवासी करेंगे।"

"हाँ चंद्रिका, यह भी जान लो कि यहाँ निर्देशिका को **व्यक्ति कोश** या **चरित्र कोश** कहते हैं।"

थोड़ी देर में एक और लोक आया। शब्दपरी ने बताया कि यह 'साहित्य लोक' है। यहाँ साहित्य से संबंधित विषयों की जानकारियाँ निवास करती हैं। इस लोक की निर्देशिका **साहित्य कोश** कही जाती है।

"मैं समझती हूँ जानकारियों के क्रमबद्ध प्रस्तुतिकरण का नियम इस लोक में भी वही होगा।"

"हाँ चंद्रिका, बिलकुल ठीक"– शब्दपरी बोली। रथ अब पृथ्वी के निकट पहुँच रहा था।

थोड़ी देर में चंद्रिका का घर आ गया। चंद्रिका को वापस छोड़ने के बाद शब्दपरी फिर छाया में बदल गई और धीरे-धीरे विलीन हो गई। चंद्रिका की अचानक आँख खुली। तो क्या सब कुछ सपना था? मगर सामने तो वही पुस्तक रखी थी। अगर सब कुछ सपना था तो वह पुस्तक आई कहाँ से? इसका रहस्य भी खुल गया। लता दीदी कमरे में आईं।

"तुम्हारे जन्मदिन पर मैंने तुम्हें उपहार देने का वायदा किया था। तुम्हारा उपहार सामने है। पढ़ने में

तुम्हारी अभिरुचि को देखते हुए मैंने सोचा कि तुम्हारे लिए 'शब्दकोश' से बेहतर कोई उपहार नहीं हो सकता।"

"धन्यवाद दीदी। तुमने मेरे दिल की आवाज़ सुन ली।" फिर वह लता दीदी से लिपट गई।

अभ्यास

पाठ से संवाद

1. नीचे दिए गए कथनों को पूरा कीजिए।
   (क) शब्दकोश न केवल शब्दों के अर्थ बताता है बल्कि...
   (ख) शब्दकोश में शब्दों का क्रम...
   (ग) शब्दकोश का सबसे बड़ा लाभ यह है कि...

2. नीचे दिए गए शब्दों को शब्दकोशीय क्रम में लिखिए–
   परीक्षण, परिक्रमण, परिक्रम, विश्वामित्र, हिमाश्रया, हृदयंगम, ग्वालिन, घंटा, योगांत, घटक, घट, इच्छित, इक्षु, अंतः, अंकपित, आवृष्टि, उदाहन, उद्योग, जिज्ञासु

© NCERT not to be republished

अर्थ है वह खाली जगह भी
जो शब्दों के बीच होती
जिसमें उज्ज्वलता भरते ही
शब्द जगमगाने लगते

–कुंवर नारायण
हिंदी कवि

परिशिष्ट–1

(क) नए शब्द

अपडेटिंग–विभिन्न वेबसाइटों पर उपलब्ध सामग्री को समय-समय पर संशोधित और परिवर्धित किया जाता है। इसे ही अपडेटिंग कहते हैं।

ऑडिएंस–जनसंचार माध्यमों के साथ जुड़ा एक विशेष शब्द। यह जनसंचार माध्यमों के दर्शकों, श्रोताओं और पाठकों के लिए सामूहिक रूप से इस्तेमाल होने वाला शब्द है।

ऑप-एड–समाचारपत्रों में संपादकीय पृष्ठ के सामने प्रकाशित होने वाला वह पन्ना जिसमें विश्लेषण, फ़ीचर, स्तंभ, साक्षात्कार और विचारपूर्ण टिप्पणियाँ प्रकाशित की जाती हैं। हिंदी के बहुत कम समाचारपत्रों में ऑप-एड पृष्ठ प्रकाशित होता है लेकिन अंग्रेज़ी के हिंदू और इंडियन एक्सप्रेस जैसे अखबारों में ऑप-एड पृष्ठ देखा जा सकता है।

डेडलाइन–समाचार माध्यमों में किसी समाचार को प्रकाशित या प्रसारित होने के लिए पहुँचने की आखिरी समय-सीमा को डेडलाइन कहते हैं। अगर कोई समाचार डेडलाइन निकलने के बाद मिलता है तो आमतौर पर उसके प्रकाशित या प्रसारित होने की संभावना कम हो जाती है।

डेस्क–समाचार माध्यमों में डेस्क का आशय संपादन से होता है। समाचार माध्यमों में मोटे तौर पर संपादकीय कक्ष डेस्क और रिपोर्टिंग में बँटा होता है। डेस्क पर समाचारों को संपादित किया जाता हैं उसे छपने योग्य बनाया जाता है।

न्यूज़पेग–न्यूजपेग का अर्थ है किसी मुद्दे पर लिखे जा रहे लेख या फ़ीचर में उस ताज़ा घटना का उल्लेख, जिसके कारण वह मुद्दा चर्चा में आ गया है। जैसे अगर आप माध्यमिक बोर्ड की परीक्षाओं में सरकारी स्कूलों के बेहतर हो रहे प्रदर्शन पर एक रिपोर्ट लिख रहे हैं तो उसका न्यूज़पेग सीबीएसई का ताज़ा परीक्षा परिणाम होगा। इसी तरह शहर में महिलाओं के खिलाफ़ बढ़ रहे अपराध पर फ़ीचर का न्यूज़पेग सबसे ताज़ी वह घटना होगी जिसमें किसी महिला के खिलाफ़ अपराध हुआ है।

पीत पत्रकारिता (येलो जर्नलिज़्म)–इस शब्द का सबसे पहले इस्तेमाल उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में अमेरिका में कुछ प्रमुख समाचारपत्रों के बीच पाठकों को आकर्षित करने के लिए छिड़े संघर्ष के लिए किया गया था। उस समय के प्रमुख समाचारपत्रों ने पाठकों को लुभाने के लिए झूठी अफ़वाहों, व्यक्तिगत आरोप–प्रत्यारोपों, प्रेम संबंधों, भंडाफोड़ और फ़िल्मी गपशप को समाचार की तरह प्रकाशित किया। उसमें सनसनी फैलाने का तत्त्व अहम था।

पेज थ्री पत्रकारिता–पेज थ्री पत्रकारिता का तात्पर्य ऐसी पत्रकारिता से है जिसमें फ़ैशन, अमीरों की पार्टियों, महफ़िलों और जाने-माने लोगों (सेलीब्रिटी) के निजी जीवन के बारे में बताया जाता है। यह आमतौर पर समाचारपत्रों के पृष्ठ तीन पर प्रकाशित होती रही है। इसलिए इसे पेज थ्री पत्रकारिता कहते हैं। हालाँकि अब यह ज़रूरी नहीं है कि यह पृष्ठ तीन पर ही प्रकाशित होती हो लेकिन इस पत्रकारिता के तहत अब भी ज़ोर उन्हीं विषयों पर है।

फ्रीक्वेंसी मॉड्यूलेशन (एफ़.एम.)–रेडियो प्रसारण की एक विशेष तकनीक जिसमे फ्रीक्वेंसी को मॉड्यूलेट किया जाता है। रेडियो का प्रसारण दो तकनीकों के ज़रिये होता है जिसमें एक तकनीक एमप्लीच्यूड मॉड्यूलेशन (ए.एम.) है और दूसरा फ्रीक्वेंसी मॉड्यूलेशन (एफ़.एम.)। एफ़.एम. तकनीक अपेक्षाकृत नयी है और इसकी प्रसारण की गुणवत्ता बहुत अच्छी मानी जाती है। लेकिन ए.एम. रेडियो की तुलना में एफ़.एम. के प्रसारण का दायरा सीमित होता है।

फ्रीलांस पत्रकार—फ्रीलांस पत्रकार से आशय ऐसे स्वतंत्र पत्रकार से है जो किसी विशेष समाचारपत्र या पत्रिका से जुड़ा नहीं होता या उसका कर्मचारी नहीं होता। वह अपनी इच्छा से किसी समाचारपत्र को लेख या फ़ीचर प्रकाशन के लिए देता है जिसके प्रकाशन पर उसे पारिश्रमिक मिलता है।

बीट—समाचारपत्र या अन्य समाचार माध्यमों द्वारा अपने संवाददाता को किसी क्षेत्र या विषय यानी बीट की दैनिक रिपोर्टिंग की ज़िम्मेदारी। यह एक तरह के रिपोर्टर का कार्यक्षेत्र निश्चित करना है। जैसे कोई संवाददाता शिक्षा बीट कवर या इंफोटेन्मेंट कहते हैं।

सीधा प्रसारण (लाइव)—रेडियो और टेलीविज़न में जब किसी घटना या कार्यक्रम को सीधा होते हुए दिखाया या सुनाया जाता है तो उस प्रसारण को सीधा प्रसारण (लाइव) कहते हैं। रेडियो में इसे आँखों देखा हाल भी कहते हैं जबकि टेलीविज़न के परदे पर सीधे प्रसारण के समय लाइव लिख दिया जाता है। इसका अर्थ यह है कि उस समय आप जो भी देख रहे हैं, वह बिना किसी संपादकीय काट-छाँट के सीधे आप तक पहुँच रहा है।

स्टिंग आपरेशन—जब किसी टेलीविज़न चैनल का पत्रकार छुपे टेलीविज़न कैमरे के ज़रिये किसी गैर-कानूनी, अवैध और असामाजिक गतिविधियों को फ़िल्माता है और फिर उसे अपने चैनल पर दिखाता है तो इसे स्टिंग आपरेशन कहते हैं। कई बार चैनल ऐसे आपरेशनों को गोपनीय कोड दे देते हैं। जैसे *आपरेशन दुर्योधन या चक्रव्यूह।* हाल के वर्षों में समाचार चैनलों पर सरकारी कार्यालयों आदि में भ्रष्टाचार के खुलासे के लिए स्टिंग आपरेशनों के इस्तेमाल की प्रवृत्ति बढ़ी है।

(ख) पाठ में आए तकनीकी शब्द

सरकारी पत्र व्यवहार	Official Correspondence
अर्धसरकारी पत्र	Deo Letter
अनुस्मारक	Reminder
कार्यालय आदेश	Office Order
कार्यालय ज्ञापन	Office Memorandum
परिपत्र	Circular
अधिसूचना	Notification
संकल्प	Resolution
प्रेस विज्ञप्ति	Press release
टिप्पणी	Note /Comment
प्रेषिती	Addressee
प्रेषक	Sender
पत्रांक	Letter Numbers
संलग्नक	Enclosure
अनुमोदन	Approval
अधोहस्ताक्षरी	Undersigned
सूचना	Notice
टिप्पण	Noting
प्रारूप	Draft
सक्षम अधिकारी	Competent Officer

not to be republished © NCERT

पुस्तकालय एक कब्रगाह है/ जो मृत लोगों से
भरी पढ़ी है/ ये मृतलोग ज़िंदा हो सकते हैं
अगर तुम पुस्तकों के पन्नों को खोलो।

-रॉल्फ़ वाल्डो इमर्सन
अमरीकी लेखक

परिशिष्ट–2

उपयोगी शब्दकोश

1. अंग्रेज़ी हिंदी कोश–फ़ादर कामिल बुल्के, एस. चाँद एंड कंपनी लिमिटेड, नयी दिल्ली।
2. उर्दू–हिंदी शब्दकोश–मुहम्मद मुस्तफ़ा खाँ मद्दाह, उ.प्र. हिंदी संस्थान, लखनऊ।
3. द न्यू पेंग्विन इनसाइक्लोपीडिया–डेविड क्रिस्टल, पेंग्विन बुक्स इंडिया लिमिटेड, नयी दिल्ली।
4. द पाकेट ऑक्सफ़ोर्ड डिक्शनरी–अंग्रेज़ी से अंग्रेज़ी ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, मुंबई।
5. मुहावरा कोश–बदरीनाथ कपूर-लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
6. राजपाल हिंदी शब्दकोश–डा. हरदेव बाहरी राजपाल एंड संस, दिल्ली।
7. वृहत्त हिंदी कोश, ज्ञान मंडल, वाराणसी।
8. व्यावहारिक हिंदी-अंग्रेज़ी शब्दकोश–केंद्रीय हिंदी निदेशालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली।
9. संस्कृत-हिंदी कोश–वामन शिवराम आप्टे, नाग पब्लिशर्स, जवाहर नगर, दिल्ली।
10. समांतर कोश–अरविंद कुमार और कुसम कुमार, नेशनल बुक ट्रस्ट, नयी दिल्ली।
11. हिंदी शब्द सागर, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
12. हिंदी साहित्य कोश (दो खंडों में)–प्रधान सं. डॉ. धीरेंद्र वर्मा, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी।

© NCERT not to be republished

परिशिष्ट-3

कुछ प्रमुख वेबसाइटों के पते

www.jagran.com
www.amarujala.com
www.rashtriyasahara.com
www.bbchindi.com
www.hindustandainik.com
www.webdunia.com
www.bhaskar.com
www.navbharattimes.com
www.prabhatkhabar.com
http://koshnr.tripod.com
http://users.panda.be/walter.rajesh

शब्दकोश : संस्कृत, फ़ारसी, हिंदी, उर्दू और अंग्रेजी

http://sanskrit.gde.to/hindi/dict/eng-hin-itrans.html
http://aa241Is.aa.tufs.ac.jp/~tjun/sktdic
www-aa.tufs.ac.jp/~kmach/hnd-la-e.htm
http://www.ishipress.com/wordlist.htm
http://osQal. uchicago.edu/dictionaries/index.html
http://www.cs.wisc.edu/~navin/india/urdu.dictionary

सरकारी और स्वायत्त संस्थान

http://dol.nic.in/software.htm
http://hindinideshalaya.nic.in
http://www.sahitya-akademi.org
http://www.hindivishwa.nic.in/hindivishwa/weIcome.html
http://rajbhasha.com/hindisansar/hinosQnsr.htm

पोर्टल

http: www.webuma.com
http://hindi.netjaal.com
www.rediff.com

www.sify.com
www.prabhasakshi.com
http://www.sahitya-akademi.org

रेडियो / टी.वी.

http://www.bbc.co.uk/hi ndi
http://www.nic.in/indiapublications/Hindi-Pub/Reference/HR06.htm
http://www.aajtak.com
http://www.ddindia.net

अखबार

http://203.200.89.66:8080/Sahara
http://www.amarujala.com
http://www.bhaskar.com
http://www.naidunia.com
http://www.rajasthanpatrika.com
http://www.jagran.com
http://www.prabhatkhabar.com
http://www.hindimilap.com
http://www.bttlindia.com/mozilla
http://www.bridges.org/toolkit/freeIT.html#host
http://hindi3.tripod.com.
http://www.baraha.com/downloaosQ.htm
http://www.cs.colostate.edul/~malaiya/devafonts.htin
http://www.alanwood.net/unicode/devanagari.html
http://theory.tifr.res.in/bombay/history/peoplel/language/hindi.html
http://www.aksharamala.com
http://www.ucl.ac.uk/~ucgadkw/indnet-textarchive.html
http://www.languageinindia.com

साहित्यिक पत्रिकाएँ

http://www.tadbhav.com
http://www.abhivyakti-hindi.org
http://www.aanubhuti-hindi.org
http://manaskriti.comlkaavyaalaya
http://hindi.india-today.com
http://www.womeninfoline.com/hindi/intemet/index.asp
http://www.kalayan.org/kalayanpatrika/index.html
http://www.bharatdarshan.co.nzlstories/index.html

© NCERT not to be republished

विचार समूह

http://groups.yahoo.com/group/HindiForum/messages/50?threaded=
http://groups.yahoo.com/group/hindi/messages/359
http://groups.yahoo.com/group/subhaashitas

स्रोत, संदर्भ और संसाधन

जरूरी वेब ठिकाना

http://www.cs.colostate.edu/~malaiya/hindilinks.html

उर्दू-हिंदी लिंक्स

http://www.columbia.edu/-fp7/urduhindilinks.html
http://www.angelfire.com/sd/urdumedia/hind.html
http://babel.uoregon.edu/yamada/guides/hindiurdu.html
www.urdustan.com

भाषाई कंप्यूटिंग : संसाधन/ प्रॉजेक्ट

http://www.bharatbhasha.org.in/articles.htm
http://www.acharya.iitm.ac.in/ind_fonts.html
http://www.unicode.org/unicode/standard/translations/hindi.html
http://indic-computing.sou.rceforge.net
http://www.indlinux.org
http://www.yudit.org
http://www.ncst.ernet.in
http://www.iiit.net/ltrc/downloaosQ.htmlwww.cdac.org.in
http://www.mithi.com
http://users.skynet.be/hugocoolenslhindi/hindi.html
http://members.tripod.comlsbiswas/IWrite32/

© NCERT not to be republished